Centre for Distance & Online Education
(CDOE)

Bachelor of Arts
(B.A.) SEM. V

PUBA-301

Indian Administrative System
(Option-I)

Guru Jambheshwar University of Science & Technology, HISAR-125001

CONTENTS

No.	Title	Author	Vetter	Page
1.	भारतीय प्र”ासन की वि”ोषताएं	Dr. Deepak	Dr. Parveen Sharma	3
2	संविधान और संविधान की वि”ोषताए मौलिक अधिकार, कर्त्तव्य, संघवाद	Dr. Deepak	Dr. Parveen Sharma	13
3	राष्ट्रपति एवं प्रधानमन्त्री	Dr. Deepak	Dr. Parveen Sharma	56
4	राज्य कार्यपालिका : राज्यपाल, मन्त्रि–परिषद् तथा मुख्यमन्त्री	Dr. Deepak	Dr. Parveen Sharma	72
5	राज्य प्र”ासन	Dr. Deepak	Dr. Parveen Sharma	86
6	गृह मन्त्रालय	Dr. Deepak	Dr. Parveen Sharma	96
7.	**प्रधान मंत्री कार्यालय: महत्व, कार्य और भूमिका**	Dr. Parveen Sharma	---------------	111
8	सेविवर्ग प्र”ासन का अर्थ, परिभाषा तथा नौकर”ाही	Dr. Deepak	Dr. Parveen Sharma	137
9	संघ लोक सेवा आयोग	Dr. Deepak	Dr. Parveen Sharma	160
10	District Administration: District Collector	Dr. Parveen Sharma	---------	174

Updated by : Dr. Parveen Sharma

Subject : लोक प्रशासन (Indian Administrative System Option -1)	
Course Code **:PUBA301**	Author **: Dr. Deepak**
Lesson No. **: 1**	Vetter **: Dr. Parveen Sharma**
भारतीय प्रशासन की विशेषताएं	

अध्याय की सरंचना

1.1 अधिगम उद्देश्य **(Learning Objectives)**

1.2. परिचय **(Introduction)**

1.3. अध्याय के मुख्य बिन्दु **(Main Points of the Text)**

1.3.1. लोक प्रशासन की परिभाषाएं **(Definitions of Public Administration)**

1.3.2. वर्तमान भारतीय प्रशासन की मुख्य विशेषताएँ **(Salient Features of Present Indian Administration)**

1.4 पाठ का आगे का मुख्य भाग **(Further Main Body of the Text)**

1.4.1. भारतीय प्रशासन का सामाजिक आर्थिक विकास में योगदान **(Role of Indian Administration in Socio-Economy Development)**

1.5 स्वयं प्रगति जाँच **(Check your progress)**

1.6 सारांश **(Summary)**

1.7 सूचक शब्द **(Key Words)**

1.8 स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न **(Self- Assessment Questions)**

1.9 उत्तर–स्वयं प्रगति जाँच **(Answers to check your progress)**

1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें **(References / Suggested Readings)**

1.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय में हम निम्नलिखित विषयो के बारे में अध्ययन करेंगे :–

- भारतीय प्र"ाासन की वि"ोषताओं के बारे में अध्ययन करेंगें।
- सामाजिक आर्थिक विकास में प्र"ाासन की भागदारी की विस्तृत जानकारी।
- प्र"ाासन का अर्थ तथा परिभाषा का संक्षिप्त विवरण।
- भारतीय प्र"ाासन के विकास का अध्ययन।
- नवीन लोक प्रबन्धन का अर्थ, परिभाषा तथा अवधारणा का अध्ययन।

1.2 परिचय (Introduction)

प्रजा सुखे सुखं राज्ञः प्रजानां च हिते हितम्।

नात्म प्रियं हितं राज्ञः प्रजानां तु प्रियं हितम्।।

अर्थात् प्रजा के सुख में राजा का सुख है। प्रजा के हित में ही उसका हित है। जो कुछ राजा को प्रिय हो वह उसे हित न समझे बल्कि जो प्रजा को प्रिय हो, वह उसे ही अपना हित समझे।

लोक प्र"ाासन का जनक वुडरो विल्सन को माना जाता है। प्राचीन भारतीय प्र"ाासनिक चिन्तकों में अग्रणी आचार्य चाणक्य या कौटिल्य (विष्णुगुप्त) द्वारा रचित यह श्लोक कल्याणकारी राज्यों में शासन के प्रमुख उद्दे"य को स्पष्ट करता है। किसी भी दे"ा में शासन व्यवस्था चाहे राज"ाही–ताना"ाही तंत्र पर आधारित हो या लोकतांत्रिक रूप से निर्वाचित सरकार हो, राज्य का कर्त्तव्य जनकल्याण ही होता है। आधुनिक लोकतांत्रिक एवं जनकल्याणकारी राज्यों के प्रवर्तन से बहुत पहले ही मानव–कल्याण तथा विकास के महत्व की पुष्टि करते हुए अनेक शासकों ने जन सुरक्षा तथा कल्याण के निमित्त सार्थक कानूनों एवं नीतियों को व्यावहारिक स्तर पर क्रियान्वित कराने का गौरव प्राप्त किया है। वि"व स्तर पर प्रसिद्ध रही भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति की इस यात्रा में लोक प्र"ाासन अनेक प्रकार के क्रांतिकारी परिवर्तनों का साक्षी रहा है।

1.3 अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

1.3.1. लोक प्रशासन की परिभाषाएँ (Definitions of Public Administration)

फिननरके अनुसार, प्र"ाासन वांछित लक्ष्यों को हासिल करने के लिए किया जाने वाला मानव तथा भौतिक संसाधनों का संगठन तथा निर्दे"ान है।

लूथर गुलिक के अनुसार, प्र”ाासन का सरोकार निर्धारित उद्दे”यों की पूर्ति के साथ कामों को कराने से है।

कीथं हेंडरसन के अनुसार, प्र”ाासन तार्किक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए व्यक्तियों और संसाधनों का व्यवस्थापन है।

उपरलिखित परिभाषाओं के अध्ययन पर हम कह सकते हैं कि प्र”ाासन से हमारा अभिप्राय उस प्रक्रिया से है जिसके माध्यम से नितियों को लागु किया जाता है और प्र”ाासन में लोगों की भागीदारी को सुनि”िचत किया जाता है।

भारतीय संविधान का संघीय ढांचा है।

13.2. वर्तमान भारतीय प्रशासन की मुख्य विशेषताएँ (Salient Features of Present Indian Administration)

किसी भी दे”ा का प्र”ाासनिक तंत्र ऐतिहासिक, भौगोलिक, सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक कारणों से अत्याधिक प्रभावित होता है। प्र”ाासन तंत्र की पारिस्थितिकी का सिद्धान्त भी यही मानकर चलता है कि प्र”ाासन तंत्र बाह्य वातावरण से न केवल प्रभावित होता है बल्कि बाह्य वातावरण को प्र”ाासन तंत्र प्रभावित भी करता है। परिवर्तन सृष्टि का शा”वत नियम है अतः प्र”ाासनिक व्यवस्थाएँ भी समयानुसार परिवर्तित होती रहती है लेकिन वे अपने ऐतिहासिक एवं समसामयिक सन्दर्भो से अलग नहीं हो सकती है। वर्तमान भारतीय प्र”ाासनिक तंत्र की बहुत–सी वि”िाष्टताएँ हैं लेकिन यहाँ कतिपय प्रमुख वि”ोषताओं का ही वर्णन किया जा रहा है –

1. **ब्रिटिश विरासत** –चूँकि सन् 1947 में सत्ता का हस्तान्तरण ब्रिटि”ा हाथों से भारत एवं पाकिस्तान नामक दो राष्ट्रों को किया गया था अतः स्वभाविक रूप से पूर्ववर्ती वि”ोषताएँ आज भी दृष्टव्य हैं। जिस प्रकार मुगलकालीन फारसी भाषा का आज भी राजस्व तथा न्याय प्र”ाासन में प्रभाव दिखाई पड़ता हैं उसी प्रकार अंग्रेजों द्वारा विकसित कानून, नियम, प्रक्रियाएँ तथा परम्पाएँ भारतीय लोक प्र”ाासन में परिलक्षित होती हैं। अखिल भारतीय एवं अन्य लोक सेवाएँ, सचिवालयी तथा गोपनीयता, कमेटी प्रणाली, जिला प्र”ाासन, राजस्व प्र”ाासन, पुलिस प्र”ाासन, वित्तीय प्र”ाासन तथा स्थानीय प्र”ाासन इत्यादि ब्रिटि”ा शासन के मुख्य प्रभाव हैं जो आज भी भारतीय प्र”ाासन में दिखाई देते हैं।

2. **प्रशासन का कानूनी स्वरूप** –वर्तमान भारतीय लोक प्र”ाासन राज”ाही, ताना”ाही या चमत्कारिक सत्ताओं पर आधारित नहीं है बल्कि संविधा के प्रावधानों के अनुसा संचालित है। राष्ट्र के समस्त नागरिकों की भावनाओं तथा इच्छाओं का पर्याय संविधान, प्र”ाासन तंत्र को वैध तार्किक सत्ता प्रदान करता है। संविधान के अनुसार भारत में ‘विधि का शासन’ है अर्थात् कानून से बढ़कर काई नहीं है। पूर्व प्रधानमन्त्री श्रीमती

इन्दिरा गांधी के अनुसार – 'कानून, राजाओं का राजा है।' अतः भारतीय लोक प्र”ाासन के प्रत्येक कृत्य या गतिविधि का मुख्य आधार वे कानून होते हैं जो जनकल्याण, विकास, सुरक्षा, समानता तथा न्याय के मूलभूत सिद्धान्तों एवं लक्ष्यों की पूर्ति हेतु बनाये जाते हैं। राज्य के समस्त कार्यों की पूर्ति का दायित्व आज के प्र”ाासन के कंधों पर है अतः भारत में भी प्र”ाासकीय राज्य है।

3. **संघीय ढाँचे का प्रभाव** –भारत के संविधान के अनुसार 'भारत, राज्यों का एक संघ है' अतः संघीय स्तर पर केन्द्र (भारत) सरकार तथा राज्यों में प्रांतीय सरकारें कार्य करती हैं। संविधान की सातवीं अनुसूची (अनूच्छेद 246) में शासन के कार्यों को संघीय, प्रांतीय तथा समवर्ती सूचियों में विभक्त किया गया है। अतः आवण्टित कार्यों के अनुसार लोक प्र”ाासन का संगठन तथा कार्यकरण निर्धारित किया हुआ है। रेलवे, डाक–तार, दूरसंचार तथा विदे”ा नीति इत्यादि केन्द्र सरकार के कार्यक्षेत्र में हैं जबकि पुलिस, सिंचाई, स्वास्थ्य तथा स्थानीय स्व”ाासन इत्यादि राज्य सरकारों के अधीन हैं। यही कारण है कि भारत में प्रत्येक प्रांत में राज्य प्र”ाासन पूर्णतया एक समान नहीं है। राज्यों में अपनी लोक सेवाएँ तथा प्र”ाासनिक संस्थाएँ कार्यरत हैं जो राज्य विधानमण्डलों द्वारा पारित अधिनियमों के अनुसार कार्य करती हैं।

4. **लोकतांत्रिक मूल्यों पर आधारित** –आधुनिक वि”व में लोकतंत्र तथा कल्याणकारी राज्य की अवधारणाएं सर्वत्र न्यूनाधिक मात्रा में व्याप्त हैं। स्वतंत्रता के प”चात् भारत में जनता जनार्दन के हाथों में सत्ताधी”ाों का चयन तथा नियंत्रण की प्रणाली विकसित की गई है। भारत में संसदीय लोकतंत्र की अवधारणा को अपनाया गया है। जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि न केवल विधायिका में कानून निर्मित करते हैं बल्कि कार्यपालिका में मंत्री के रूप में लोक प्र”ाासन का नेतृत्व भी करते हैं। प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण को मूर्त्त रूप प्रदान करने के लिए नगरों में नगर निगम और नगरपालिकाएं इत्यादि तथा गाँवों में पंचायती राज संस्थाओं का प्रवर्तन है। प्रजातांत्रिक समाजवाद के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु शांतिपूर्व, न्यायपूर्ण तथा राज्य प्रभावी कदमों को प्रश्रय प्रदान किाय गया है। वर्तमान प्र”ाासन को यह दायित्व दिया गया है कि वह दे”ा में लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रसार तथा संरक्षण में अपना योगदान करे।

5. **कल्याणकारी प्रशासन** –आज के युग में राज्य को एक बुराई के रूप में नहीं बल्कि अनिवार्यता के रूप में देखा जाता है। यही कारण है कि आम व्यक्ति की समस्त मूलभूत आव”यकताओं की पूर्ति हेतु प्र”ाासनिक संगठन कार्यरत है। कहा जाता है कि आज का लोक प्र”ाासन जन्म से पूर्व (गर्भवती माता का टीकाकरण) से लेकर मृत्यु के उपरान्त (बीमा तथा सम्पत्ति निपटारा) तक व्यक्ति के सर्वांगीण विकास एवं कल्याण हेतु कार्य करता है। भारतीय लोक प्र”ाासन भी भोजन, वस्त्र तथा आवास जैसी मूलभूत (न्यूनतम) आव”यकताओं सहित ि”ाक्षा, स्वास्थ्य, सुरक्षा, परिवहन, संचार, पेयजल, रोजगार तथा न्याय इत्यादि सेवाओं की व्यवस्था एवं

संचालन करता है। राज्य के कल्याणकारी दायित्वों में हो रही आ"ाातीत वृद्धि के कारण ही प्र"ाासनिक संगठनों एवं कार्यों का विस्तान हुआ है। संवैधानिक लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु पिछड़े वर्गों को लोक सेवाओं में आरक्षण प्रदान किया गया है।

6. **विकासोन्मुख प्रशासन** –जहाँ ब्रिटि"ाकाल प्र"ाासन नियामकीय प्रकृति का था, वहाँ आज का भारतीय प्र"ाासन विकासोन्मुख (Development Oriented) है। कल्याणकारी राज्य के दायित्वों तथा लक्ष्यों की पूर्ति हेतु अनेक प्रकार के विकास कार्यक्रम संचालित किये जाते हैं। भारत में सामाजिक–आर्थिक विकास को द्रुत गति प्रदान करने के लिए आर्थिक नियोजन की प्रणाली अपनायी गई जिसके अन्तर्गत संघीय स्तर पर कार्यरत योजना आयोग पंचवर्षीय विकास योजनाएं निरूपित करता है जिन्हें राज्य स्तरीय प्र"ाासनिक संस्थाएं व्यावहारिक रूप में क्रियान्वित करती हैं। प्र"ाासन द्वारा एकत्र करों का उपयोग मुख्यतः विकास कार्यों में ही होता है। दे"ा में तेजी से हो रहे विकास कार्यों का परिणाम भी दिखाई देने लगता है। नगरों तथा महानगरों के इर्द–गिर्द विकसित हो रहे उप नगरीय क्षेत्र (Satellite Town) विकास प्र"ाासन को रेखांकित कर रहे हैं।

7. **जवाबदेय प्रशासन** –प्र"ाासनिक कृत्यों को कु"ालतापूर्वक निष्पादित करने के लिए कार्मिकों को पर्याप्त प्रधाकार या शक्तियाँ प्रदान की गई हैं किन्तु ये प्राधिकार अनन्य नहीं है बल्कि उत्तरदायित्व भी निि"चत किये गये हैं। लोक प्र"ाासन में निम्नतम स्तर पर कार्यरत कार्मिक से लेकर मंत्री महोदय तक सभी को संविधान, जनता, कानून तथा व्यवस्था के प्रति जवाबदेय (Accountable) बनाया गया है क्योकि विधि का शासन व्यक्ति के बनाए कानून को सर्वोच्चता प्रदान करता है। लोक प्र"ाासन की जवाबदेयता सुनिि"चत करने के लिए संसदीय, कार्यपालिका तथा न्यायिक नियंत्रण की अनेक प्रणालियाँ प्रभावी हैं। स्वतंत्र न्यायपालिका के द्वारा प्र"ाासनिक जवाबदेयता तथा नियंत्रण को अधिक प्रभावी बनाया गया है।

8. **नौकरशाही का प्रभाव** –आधुनिक प्र"ाासनिक तथा कल्याणकारी राज्यों में कर्मचारी तंत्र का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है किन्तु कर्मचारी तंत्र में व्याप्त अहं, लालफीता"ाही, कठोर नियमों के प्रति मोह, शक्ति लालसा, अकार्यकु"ालता तथा संवेदन"ाून्यता इत्यादि नौकर"ाहीनुमा लक्षण बाधक तत्व हैं। भारतीय लोक प्र"ाासन में भी भ्रष्टाचार, अकार्यकु"ालता, अनु"ाासनहीनता सहित नौकर"ाही के समस्त अवगुण विद्यमान हैं। यद्यपि भारत में लोक प्र"ाासन का बाह्य कार्य"ौली आज भी ब्रिटि"ा मॉडल पर आधारित है जिसमें आम आदमी की मानवीय संवेदनाओं से कहीं अधिक नियमों को वरीयता दी जाती है।

9. **उलझा हुआ प्रशासन तंत्र** –भारत में लोक प्र"ाासन का कार्यक्षेत्र कई प्रकार से विस्तृत एवं उलझा हुआ है क्योंकि अंग्रेजी शासनकाल से अद्यतन अनेकानेक प्र"ाासनिक संस्थाएँ भारत में गठित होती रही हैं। संघीय स्तर पर कार्यरत वि"ााल केन्द्रीय सचिवालय तथा राज्य शासन सचिवालयों सहित इनके कार्यकारी संगठनों का सम्पूर्ण दे"ा में जाल बिछा हुआ है। अनेक प्रकार के बोर्ड, आयोग, संगठन, न्यायाधिकरण, संस्थान, परिषद, प्राधिकरण, अभिकरण, निगम तथा सरकारी कम्पनियाँ विभिन्न कार्यों के निष्पादन हेतु कार्यरत हैं। भारत में वि"व के सभी प्रमुख दे"ाों में प्रचलित प्र"ाासनिक संगठन – स्वरूप किसी–न–किसी रूप में अव"य मिल जाते हैं। समस्या

यह है कि यहाँ आयोग, समिति तथा कार्य दलों की रिपोर्ट के आधार पर नित्य नये संगठन स्थापित करना एक परम्परा बन चुकी है। परिणामस्वरूप परम्परागत नौकर"ााही की कार्य"ौली में किंचित् भी परिवर्तन नहीं आता है बल्कि इसका आकार तथा वित्तीय भार बढ़ जाता है।

10. **समस्याग्रस्त प्रशासन** –वस्तुतः कोई भी व्यवस्था या संगठन पूर्णतय त्रुटिरहित नहीं होता है बल्कि कमियाँ और समस्याएँ सभी संगठनों में पायी जाती हैं लेकिन भारतीय लोक प्र"ाासन की व्याधियाँ जटिल, असाध्य तथा विचित्र प्रकार की हैं। प्र"ाासन तंत्र में सामान्य (IAS) अधिकारियों का वर्चस्व है अतः वि"ोषज्ञ (डॉक्टर तथा इंजीनियर) अधिकारी प्रस्थिति सुधार हेतु संघर्ष कर रहे हैं। सामान्यज्ञ–वि"ोषज्ञ विवाद के अतिरिक्त मंत्री–लोक सेवक (अर्थात् सचिव) के मध्य विवादों की भी कमी नहीं है। इसी प्रकार लोक प्र"ाासन में वर्ग संघर्ष, हड़ताल, मुकदमेबाजी तथा कार्मिकों की भारी भीड़ मुख्य समस्याएँ हैं। सरकार के वार्षिक बजट का आधा भाग केवल कर्मचारियों के वेतन–भत्तों पर व्यय होता है जबकि लोक सेवाओं में कार्यकु"ालता का स्तर अत्यन्त शोचनीय है। प्र"ाासनिक सुधारों के लिए पर्याप्त प्रयास भारत में किए गए हैं लेकिन मुख्य समस्या नैतिकता तथा राष्ट्र के प्रति समर्पण का अभाव है।

1.4 पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

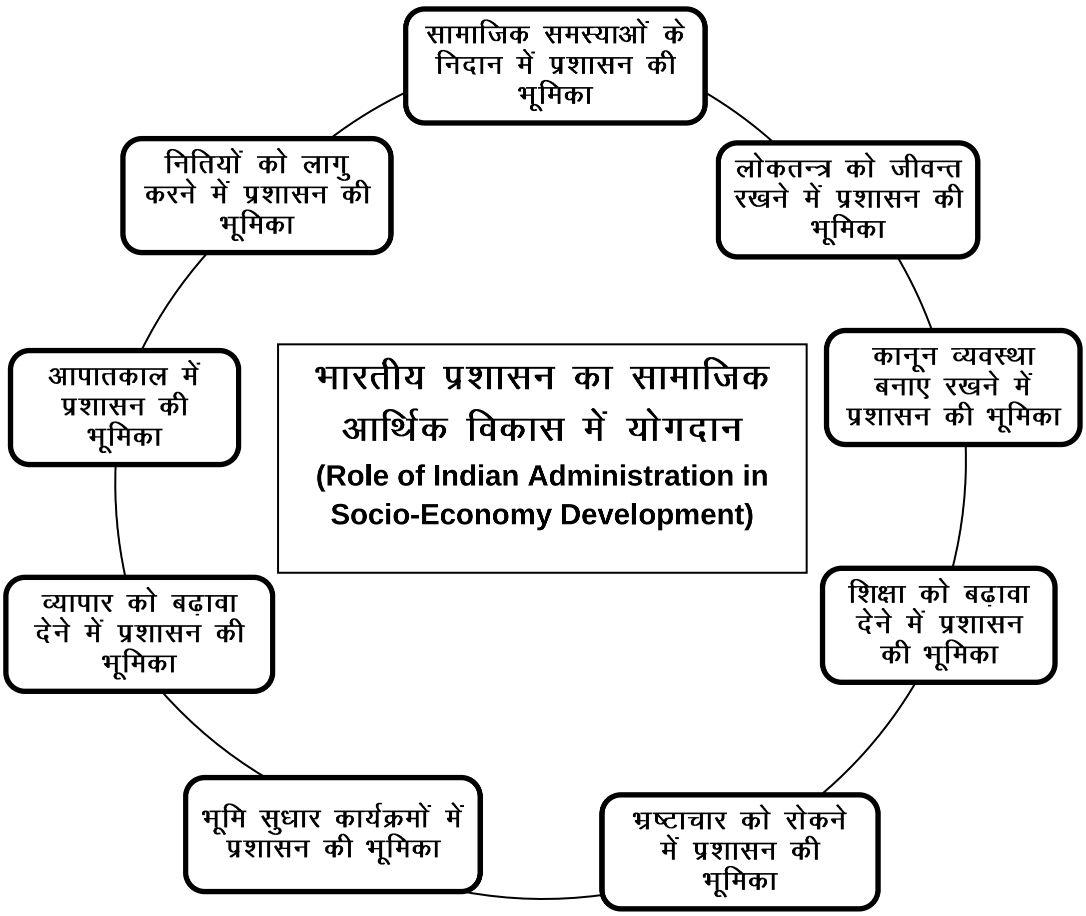

14.1.भारतीय प्रशासन का सामाजिक आर्थिक विकास में योगदान (Role of Indian Administration in Socio-Economy Development) प्र”ाासन किसी भी दे”ा के विकास की रीढ़ की हड्डी होता है। प्र”ाासन के द्वारा ही हम नितियों को अमलीय–जामा पहनाते हैं। राजनीतिक का कार्य नितियों को बनाने का है और उन नितियों का क्रियान्वयन प्र”ाासन के द्वारा ही किया जाता है।

भारतीय प्र”ाासन के विकास की कहानी काफी पुरानी है यदि हम प्रत्यक्ष रूप से देखे तो अकादमिक रूप से मान्यता 1987 में मिली। परन्तु इसका धरातल में भूमिका को देखा जाए तो उनती ही पुराना है जितना मानव स्वयता क्योंकि जब से मानव ने पृथ्वी पर एक समुदाय में रहना लिखा है कि तभी से प्र”ाासन का प्रारम्भ हुआ क्योंकि किसी न किसी रूप से हम अपने जीवन में प्र”ाासन की भूमिका पाते हैं। यदि वर्तमान सभ्यता की बात की जाए तो हम कह सकते हैं कि प्र”ाासन के बिना हमारा सामाजिक तथा आर्थिक विकास सम्भव नहीं है। प्र”ाासन की मानव के सामाजिक तथा आर्थिक विकास में भूमिका का निम्नलिखित शब्दों में समझा जा सकता है।

1. **सामाजिक समस्याओं के निदान में प्रशासन की भूमिका** –प्र”ाासन के सहायता से सामाजिक समस्याओं के निदान का प्रयास किया जाता है, समाज में नागरिकों की समस्याओं का समाधान प्र”ाासन के द्वारा किया जाता है तथा सामाजिक विकास में भूमिका को सुनि”चत किया जाता है क्योंकि प्र”ाासन ही वह जरिया है जो प्रत्यक्ष रूप से समाज के साथ मिलकर काम करता है।

2. **नितियों को लागु करने में प्रशासन की भूमिका** –प्र”ाासन के द्वारा विकासकारी नितियों को लागू करके सामाजिक विकास में योगदान दिया जाता है क्योंकि जिन योजनाओं का निर्माण कार्यपालिका के द्वारा किया जाता है उन योजनाओं का क्रियान्वयन करने का काम प्र”ाासन का ही होता है।

3. **लोकतन्त्र को जीवन्त रखने में प्रशासन की भूमिका** –समाज में प्रत्यक्ष लोकतन्त्र को जीवित रखने में प्र”ाासन की भूमिका सबसे ज्यादा है, क्योंकि प्र”ाासन ही समाज में लोगों को प्रत्यक्ष रूप से मतदान के द्वारा लोकतन्त्र की भूमिका को बनाए रखने में सहायता करता है।

4. **आपातकाल में प्रशासन की भूमिका** –जब भी समाज में किसी प्राकृतिक आपदा का प्रकोप फैलती है तब प्र”ाासन ही लोगों की सहायता करता है क्योंकि प्र”ाासनिक कर्मचारी प्रत्यक्ष रूप से समाज में रहते हैं तथा प्राकृतिक आपदाओं के समय जनता की रक्षा करते हैं।

5. **कानून व्यवस्थ बनाए रखने में प्रशासन की भूमिका** –समाज में कानून व्यवस्था को बनाए रखने का कार्य प्र”ाासन का ही है। प्र”ाासन पर समाज शान्ति व्यवस्था बनाए रखने का दायित्व होता है क्योंकि वे वास्तव में जनता के सेवक होते हैं।

6. **व्यापार को बढ़ावा देने में प्रशासन की भूमिका** –प्र"ाासन को समाज में आर्थिक विकास के लिए जो जिम्मेदारी प्रदान की गई है उसको प्र"ाासन ने आर्थिक नितियों को लागू करके बखूबी निभाया है क्योंकि आर्थिक नितियों को लागु करने का कार्य प्र"ाासन का ही है।

7. **शिक्षा को बढ़ावा देने में प्रशासन की भूमिका** –"िाक्षा नितियों को लागू करने तथा स्कूलों कॉलेजों और वि"वविद्यालयों में "िाक्षा की गुणवता को बनाए रखने का कार्य भी प्र"ाासन का ही है, क्योंकि "िाक्षा के माध्यम से ही समाज में सुधार किए जा सकते हैं।

8. **भूमि सुधार कार्यक्रमों में प्रशासन की भूमिका** –प्र"ाासन के द्वारा भूमि सुधार कार्यक्रमों का संचालन करके सामाजिक–आर्थिक विकास में अहम योगदान होता है क्योंकि इस प्रकार की नितियों को लागु करने का कार्य प्र"ाासन का ही है।

9. **भ्रश्टाचार को रोकने में प्रशासन की भूमिका** –प्र"ाासन की प्रभावकारिता के द्वारा हम राजनीति में भ्रष्टाचार पर रोक लगाने का प्रभाव भी कह सकते हैं क्योंकि प्र"ाासन समाज स्थाई रहकर कार्य करता है।

1.5. स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

निचे कुछ प्र"न दिए गए हैं जिनका आपने उत्तर देना है

(i) लोक–प्र"ाान का जनक .... को माना जाता है।

(ii) भारतीय संविधान की .... अनुसूचि में कार्यों का वर्णन किया गया है।

(iii) भारतीय संविधान में ....सुचियां है।

(iv) भारतीय संविधान का .... ढांचा है।

(v) भारतीय प्र"ाासन में .... हर जगह वर्चस्व है।

1.6. सारांश (Summary)

उपरलिखित विषय के अध्ययन करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि प्र"ाासन का समाज के विकास में तथा सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन में अहम योगदान है क्योंकि प्र"ाासन समाज की मुख्य धारा से जुड़ा हुआ भाग है जो समाज के लोगों द्वारा निर्मित है तथा समाज के लिए समाज में रहकर कार्य करता है। यदि समाज में प्र"ाासन अपने कार्यों को सुचारू रूप से ना करे तो समाज का ढांचो ही बिगड़ जाएगा। इसलिए सामाजिक विकास तथा कानून व्यवस्था को बनाए रखने के लिए प्र"ाासन की अहम भूमिका होती है।

दे"ा की कानून व्यवस्था बनाए रखने तथा शैक्षणिक संस्थाओं को बनाए रखने के साथ दे"ा की रक्षा के लिए प्र"ाासन की जिम्मेदारी का होना अति आव"यक है। समाज में प्रजातन्त्र को बनाए रखने तथा चुनाव करवाने के लिए और नितियों को लागू करने के लिए भी प्र"ाासन की सतर्कता का होना अति आव"यक है।

यदि हम यह कहें कि व्यक्ति का सम्पूर्ण जीवन प्र"ाासन से जुड़ा है तो गलत नहीं होगा ? क्योंकि व्यक्ति के जन्म से लेकर मृत्यु तक सारा कार्य प्र"ाासन ही करता है। इसलिए हम कह सकते हैं कि हमारे समाज के विकास के साथ–साथ आर्थिक विकास में प्र"ाासन का अहम योगदान है तथा सामाजिक परिवर्तन का माध्यम प्रदान करता है।

1.7. सूचक शब्द (Key Words)

प्रशासन –प्र"ाासन से हमारा अभिप्राय उस प्र"ाासनिक अभिकरण से है जो नितियों को लागु करने का काम करता है।

लोकतन्त्र –लोगों का तन्त्र, या समाज के लोगों का वह समूह जो चुनाव में प्रत्यक्ष मतदान के द्वारा सरकार के निर्वाचन में भागदारी निभाता है।

राजनीतिक विज्ञान –सामाजिक विज्ञान का वह भाग जो राजनीति, कानून तथा नितियों की व्याख्या करता है।

सामाजिक विज्ञान –अध्ययन का वह विषय जो समाज का अध्ययन करे सामाजिक विज्ञान कहलाता है।

भ्रश्टाचार –जब प्र"ाासन तथा राजनीति अपने कार्यों में मानमानी करने या खुद के फायदे की सोचे तो भ्रष्टाचार कहलाता है।

1.8 स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्नोत्तर (Self- Assessment Questions)

Q.1. भारतीय प्र"ाासन की वि"ोषताओं का विवरण दीजिए।

Q.2. भारतीय प्र"ाासन का सामाजिक – आर्थिक विकास में क्या योगदान है ?

Q.3. भारतीय प्र"ाासन का सामाजिक तथा आर्थिक परिवर्तन में योगदान की चर्चा कीजिए।

Q.4. भारतीय प्र"ाासन के अर्थ, परिभाषा तथा विकासात्मक स्वरूप की व्याख्या कीजिए।

1.9 उत्तर–स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

(i) वुडरो विल्सन (ii) सातवीं (iii) तीन

(iv) संघीय (v) नौकर"ाही का

1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

1. Public Administration, Mcgraw Hill : Laxmi Kant. M
2. New Horizons of Public Administration; Mohit Bhattacharya; Jawahar Publisher & Distribution.
3. Indian Administration; S.R. Maheshwari, Orient Black Swan.
4. Public Administration Theory and Practice; Hoshiar Singh and Pardeep Sachdeva; Pearson.
5. प्र”ाासनिक चिंतक; प्रसाद एण्ड प्रसाद सत्यनारायण; जवाहर पब्लिके”ान एण्ड डिस्ट्रीब्यू”ान।

Subject : PUBA 301(Indian Administrative System Option -1)	
Course Code : PUBA-301	**Autor : Dr. Parveen Sharma**
Lesson No. 2	
संविधान और संविधानवाद **Constitutions and Constitutionalism**	

अध्ययन की सरंचना

2.1 **अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)**

2.2 प्रस्तावना (Introduction)

2.3 अध्ययन के मुख्य बिन्दु (Main Points of Text)

2.3.1 **संविधान का अर्थ व परिभाषा (Meaning and Definitions of Constitution)**

2.3.2 **संविधान के प्रकार, (kinds of constitution)**

2.3.3 **संविधान के विकास की प्रक्रिया (Process of growth of Constitution)**

2.3.4 **आदर्श संविधान की विशेषताएं (Features of an Ideal Constitution)**

2.5 **अपनी प्रगति जांचें (Check your progress)**

2.6 **सारांश (Summary)**

2.7 **सूचक शब्द (Key Words)**

2.8 **स्वयं मूल्याकंन हेतू प्रश्न (Self Assessment Questions)**

2.9 **अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answers to check your progress)**

2.10 **सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings**

2.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

1. इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे :–

1.संविधान और संविधानवाद के अर्थ और उनकी अवधारणाओं की व्याख्या करने में ।

2.2 प्रस्तावना (Introduction)

संविधान, मूल सिद्धान्तों का एक समुच्चय है, जिससे कोई राज्य या अन्य संगठन अभिशासित होते हैं।

वह किसी संस्था को प्रचालित करने के लिये बनाया हुआ संहिता (दस्तावेज) है। यह प्रायः लिखित रूप में होता है। यह वह विधि है जो किसी राष्ट्र के शासन का आधार है उसके चरित्र, संगठन, को निर्धारित करती है तथा उसके प्रयोग विधि को बताती है, यह राष्ट्र की परम विधि है तथा विशेष वैधानिक स्थिति का उपभोग करती है सभी प्रचलित कानूनों को अनिवार्य रूप से संविधान की भावना के अनुरूप होना चाहिए यदि वे इसका उल्लंघन करेंगे तो वे असंवैधानिक घोषित कर दिए जाते है।

2.3 अध्ययन के मुख्य बिन्दु (Main Points of Text)

2.3.1 संविधान का अर्थ व परिभाषा (Meaning and Definitions of Constitution)

(अ) संविधान का अर्थ

संविधान शब्द का प्रयोग साधारणतया संकुचित एवं विस्तृत दो रूपों में होता है। विस्तृत रूप में इसका प्रयोग किसी राज्य के शासनप्रबन्ध सम्बन्धी सब नियमों के लिये होता है। इन नियमों में से कुछ नियम न्यायालयों द्वारा मान्य तथा लागू किए जाते हैं, किंतु कुछ ऐसे भी होते हैं जो पूर्णतया वैधानिक नहीं होते। इन विधि से परे अर्धवैधानिक नियमों की उत्पत्ति रूढ़ि, परंपरागत प्रथाओं, प्रचलित व्यवहार एवं विधि व्याख्या से होती है। अपने अशुद्ध रूप के कारण यह नियम न्यायलयों में मान्यता नहीं पाते, किंतु फिर भी शासनप्रबंध की व्यावहारिकता में इनका प्रभाव शुद्ध नियमों का मिश्रण ही संविधान होता है। इंग्लैंड का विधान इस कथन का साक्षी है। अन्य देशों में संविधान का अर्थ तनिक अधिक संकुचित रूप में होता है, तथा केवल जन विशेष नियमों के सम्बन्ध में होता है जो शासन प्रबन्ध के हेतु आधिकारिक लेखपत्रों में आबद्ध कर लिए जाते हैं। फलतः संविधान एक प्रकार से किसी देश का वह एक या अधिक लेखपत्र होता है जिसमें उस देश के शासनप्रबन्ध में अनुशासन के मूल नियम संकलित हों। इस अर्थ के साक्षी संयुक्त राष्ट्र अमरीका तथा भारत के संविधान हैं।

'संविधान' शब्द का आशय कोई भी माना जाए किंतु मूल वस्तु यह है कि किसी देश के संविधान का पूर्ण अध्ययन केवल कुछ लिखित नियमों के अवलोकन के संभव नहीं। कारण, यह तो शासन प्रबन्ध सम्बन्धी अनुशासन का एक

अंश मात्र होते हैं। संपूर्ण संवैधानिक परिचय शासनप्रबंधीय सब अंगों के अध्ययन से ही संभावित हो सकता है। उदाहरणार्थ, बहुधा संविधान संविदा में केवल शासन के मुख्य अंगों – कार्यपालिका, विधायिनी सभा, न्यायपालिका – का ही उल्लेख होता है। किंतु इन संस्थाओं की रचना, पदाधिकारियों की नियुक्ति की रीति इत्यादि की व्याख्या साधारण विधि द्वारा ही निश्चित होती है। इसी प्रकार कई देशों में निर्वाचन नियम, निर्वाचन क्षेत्र एवं प्रति क्षेत्र के सदस्यों की संख्या, शासकीय विभागों की रचना तथा न्यायपालिका का संगठन, इन सब महत्वपूर्ण कार्यो को संविधान में कहीं व्याख्या नहीं होतीय यदि होती भी है तो बहुत साधारण रूप में, मुख्यतः इनका वर्णन तथा नियंत्रण साधारण विधि द्वारा ही होता है। इसके अतिरिक्त संपूर्ण विधिरचना विधानमंडल के क्षेत्र में ही सीमित नही होती, न्यायपालिका द्वारा मूलविधि की व्याख्या द्वारा जो नियम प्रस्फुटित होते हैं उनसे संविधान में नित्य संशोधनत्मक नवीनता आती रहती है। फिर, राज्यप्रबन्ध सम्बन्धी रूढ़ि एवं व्यवहार भी कम प्रभावात्मक और महत्वपूर्ण नहीं होते। अतएव इन सब अंशों का अध्ययन ही सर्वांग वैधानिक परिचय पूर्ण कर सकता है।

(ब) संवधिान की परिभाषाएँ (Definitions of Constitution)

संविधान क्या होता है, और उसकी परिभाष क्या है, इस विषय में राजनीति विज्ञान के विभिन्न विचारकों ने विभिन्न विचार व्यक्त किये है तथा विभिन्न परिभाषाएँ दी हैं

प्रोफेसर डायसी के अनुसार, ''वे सब कानून संविधान में सम्मिलित होते है, जिनका प्रभाव प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूपों से राज्य में प्रभुत्व–शक्ति के विवरण अथवा उसके प्रयोग प पड़ता है।''

वुल्से के कथनानुसार, ''उन नियमों का समूह संविधान कहलाता है, जि सके अनुसा सरकार की शक्ति, शासित के अधिकार और दोनों के सम्बन्धों का समायोजन होता है।''

लॉस्की के शब्दों में, ''नियमों का वह भाग संविधान कहालाता है, जिसके द्वारा यह निर्धारित होता है कि (1) ऐसे नियम कैसे बनाये जायें, (2) किस प्रकार वह बदले जायें, तथा (3) उन्हे कौन बनाये?''

ब्राइस के शब्दों में, ''संविधान ऐसे निश्चित नियमों का एक संग्रह होता है, जिनमें सरकार की कार्य–विधि प्रतिपादित होती है, और जिनके द्वाा उनका संचालन होता है।

गैटिल के अनुसार, ''वै मौलिक सिद्धान्त, जिनके द्वारा किसी राज्य का स्वरूप निर्धारित होता है, उसका संविधान कहलाता है। इनमें राज्य के संगठन की विधि सरकार के विभिन्न अंगों में उसकी प्रभुत्व–शक्तिका वितण, सरकार के कार्यों का क्षेत्र तथा सम्पादन की विधि तथा सरकार और जिस पर सरकार की शक्ति का प्रयोग किया जाता है, उस जनता का पारस्परिक सम्बन्ध सम्मिलित होता है, संविधान राज्य का निर्माण नहीं करता किन्तु वह उसके अस्तित्व का बाह्ा स्वरूप होता है।''

गिलक्राइस्ट का कथन है कि, ''संविधान उन लिखित या अलिखित नियमों अथवा कानूनों का समूह होता है, जिनके द्वारा सरकार का संगठन, सरकार की शक्तियों का विभिन्न अंगों में वितरण और उन शक्तियों के प्रयोग के सामान्य सिद्धान्त निश्चित किये जाते है।''

हरमन फाइनर के लिखा है कि, ''संविधान आधारभूत राजनीतिक संस्थाओं की व्यवस्था होती है।''

चार्ल्स बर्गेन्ड का कहता है कि, ''संविधान एक आधारभूत कानून होता है, जिसके द्वारा किसी राज्य की सरकार संगठित की जाती है और जिसके अनुसार व्यक्तियों अथवा नैतिक नियमों का पालन करने वाले मनुष्यों तथा समाज के पारस्परिक सम्बन्ध निर्धारित किये जाते हैं।''

2.3.2 संविधान के प्रकार (kinds of constitution)

सभी दे"ाों के संविधान एक समान नहीं होते हैं। प्रत्येक दे"ा के संविधान पर यहां की राजनीतिक, सामाजिक व धार्मिक विचारधारा का प्रभाव भी अव"य पड़ता है। संविधानों का वर्गीकरण कई आधारों पर किया जाता है। सं"ाोधन विधि के आधार पर इसे कठोर और लचीला दो भागों में बांटा जाता है। शक्तियों के विभाजन के आधार पर इसे एकात्मक व संधात्मक में तथा शासन के अंगों को आपसी सम्बन्धों के आधार पर इसे संसदीय व अध्यक्षात्मक में बांटा जाता है।

(1) लिखित तथा अलिखित संविधान (Written and Unwritten Constitution)

(2) लचीला तथा कठोर संविधान (Flexible and Rigid Constitution)

(3) विकसित तथा निर्मित संविधान (Evolved and Enacted Constitution)

(1) लिखित तथा अलिखित संविधान (Written and Unwritten Constitution)

लिखित संविधान वह होता है जो पूर्ण रूप में लिखित हो। भारत, अमेरिका, चीन, सोवियत संघ, फ्रांस आदि दे"ाों के संविधान लिखित संविधान है। इसके विपरीत अलिखित संविधान वह होता है जिसके नियम अलिखित रूप में परम्पराओं व रीति–रिवाजो पर आधारित होता है। यह संविधान पूर्णरूप से अलिखित नहीं होता बल्कि इसका कुछ भाग कालान्तर में लिखित बनता जाता है। ब्रिटेन में अलिखित संविधान भी आज अलिखित नहीं है।

(I) **लिखित सविधान** :– लिखित संविधान वह होता है जो संविधान सभा द्वारा निर्मित हो। इसमें सरकार के संगठन, कार्यों, उद्दे"यों, सरकार के अंगों के अधिकार व शक्तियों का, सरकार का नागरिकों के साथ, सरकार तथा नागरिकों के अधिकारों व कर्तव्यों का लिखित वर्णन होता है। लिखित संविधान दे"ा का सर्वोच्च कानून होता है। जो भी

साधारण कानून संविधान का उल्लंघन करता है, उसे असंविधानिक करार दे दिया जाता है। ''संविधान उस जीवन–पद्धति का प्रतीक होता है, जो किसी राज्य द्वारा अपने लिये अपनाई जाती है।''

लिखित संविधान के गुणों की विवेचना निम्न प्रकार की जा सकती है–

- **विस्तृत** – लिखित संविधान में जो शासन–विधि विहित की जाती है अथवा राजनीतिक जीवन को जो रूप किसी राज्य–विशेष के लिए निश्चित किया जाता है, वह अत्यन्त विचारपूर्वक किया जाता है, अतः उसमें उस राजनीतिक जीवन के अधिक स्वायित्य हाता है। लिखित संविधान होने से इस बात की सम्भावना कम होती है कि सामयिक आवेश में आकर राजनीतिक जीवन में अनावश्यक उथल–पुथल की जा सके, क्योंकि लिखित संविधान में साधारणतः परिवर्तन भी अनावश्यक सरलता से नहीं किए जा सकते है।
- **मर्यादित**– लिखित संविधान होने से शासकों के अत्याचारों और स्वेच्छाचार से जनता के अधिकारों की सुरक्षा बनी रहती है, जनता के क्या अधिका तथा कर्त्तव्य है, शासक तथा शासित, दोनों की ही मर्यादा लिखित संविधान होने से निश्चित रहती है।
- **संघ राज्यों के लिए उपयुक्त** – संघ में सम्मिलित इकाईयों का संघ में क्या स्थान है अथवा उनका पारम्परिक तथा संघ के साथ क्या सम्बन्ध है, संघ तथा इकाईयों की शासन–विधि तथा उनकी सरकारों के स्वरूप आदि का निश्चित विवरण लिखित संविधान में ही अधिक उचित ढंग से दिया जा सकता है।

(II) अलिखित संविधानः– अलिखित संविधान वह होता है जो संविधान सभा द्वारा निर्मित न होकर परम्पराओं, रीति–रिवाजों, संसदीय कानूनों और न्यायिक निर्णयों के रूप में विकसित होता है। ऐसा संविधान आव”यकतानुसार बदलता रहता है। यह संविधान पूर्ण रूप से अलिखित नहीं होता।

अलिखित संविधान के गुण (Merits of Unwritten Constitution)

(1) **प्रगतिशील** – अलिखित संविधान संविधान अलिखित होने के कारण राजनीतिक जीवन के विकास के साथ–साथ शासन–विधि स्वयं परिवर्तित होती जाती है।

(2) **परिवर्तनीय** – अलिखित संविधान समय एवं परिस्थितियों के अनुसा बदला जा सकता है। अलिखित संविधान होने के कारण जनमत के अनुसार शासन विधि सरलता से परिवर्तित की जा सकती है।

अलिखित संविधान के दोष (Demerits of Unwritten Constitution)

(1) **अस्थिर** – अलिखित संविधान अस्थि तथा अनिश्चित राजनीतिक जीवन को प्रोत्साहन देते है, क्योंकि संविधान अलिखित होने से लोगों को इस बात के लिए बढ़ावा मिलता है कि राजनीतिक जीवन की गतिविधि को जब चाहें, जैसा बना लें।

(2) **न्यायालयों की मनमानी** – इकसे अतिरिक्त अलिखित संविधान न्यायालयों के हाथ के खिलौने होते है और संविधान के अलिखित होने से न्यायालयों के निर्णय ही राजनीतिक जीवन के आधार बन जाते हैं।

(2) लचीला तथा कठोर (Flexible and Rigid Constitution)

ब्राइस ने संविधानों को सं"ाोध्य (लचीला) तथा दुस्सं"ाोध्य (कठोर) में बांटा है। ब्राइस के इस वर्गीकरण का आधार संविधान में सं"ाोधन की विधि है।

(I) लचीला संविधान :– लचीला संविधान उसे कहते हैं जिसमें आसानी से परिवर्तन किया जा सके। इसमें संसद उसी तरह सं"ाोधन कर सकती है जिस तरह वह साधारण कानूनों का निर्माण करती है। इसके लिए संसद को वि"ोष या किसी पेचीदा प्रक्रिया का प्रयोग करने की आव"यकता नहीं पड़ती। इस संविधान में साधारण कानून और संविधानिक कानून में कोई अन्तर नहीं माना जाता। बार्कर ने लचीले संविधान को परिभाषित करते हुए कहा है – ''जब संविधान में परिवर्तन लोगों या उनके प्रतिनिधियों की इच्छानुसार आसानी से किया जा सके तो उसे लचीला संविधान कहा जाता है।'' लचीले संविधान में कानून बनाने की शक्ति तथा संविधान में सं"ाोधन करने की शक्ति एक ही संसद के पास होती है। इसके अन्तर्गत न्यायपालिका को संसद में बनाए गए कानूनों को अवैध घोषित करने का अधिकार प्राप्त नहीं होता है। इंग्लैण्ड का संविधान लचीले संविधान का सुन्दर उदाहरण है। संविधान का लचीलापन तो उसके सं"ाोधन की विधि पर ही आधारित होता है। अमेरिका का संविधान लिखित होते हुए भी कम कठोर है।

लचीले संविधान के गुण (Merits o Flexible Constitution)

(1) पविर्तनशील– लचीले संविधान परिवर्तनशील होते है। उनमें बलदती हुई परिस्थितियों के अनुकूल विकास की सम्भावना रहती है तथा संशोधन विधि के सरल के कारण उन्हें सरलता से परिस्थितियों के अनुकूल बदला जा सकता है। ग्रेट ब्रिटेन के पिछले 1500 वर्ष के इतिहास को ले सकते हैं, जिसमें संविधान के लचीलेपन क`कारण वहां का राजनीतिक जीवन बिना विशेष अशान्ति से प्रगति की ओर अन्मुख होता चला आया है।

(2) परिस्थितियों के अनुकूल– लचीले संविधान की एक अन्य महत्त्वपूर्ण अच्छाई पस्थिति अनुकूलता है, क्योंकि लचीलेपन के कारण राज्य का संवधिान सभी प्रकार की पस्थितियों में सामना करने की क्षमता रखता है । यदि

संविधान लचीला होता है, तो युद्ध आदि जैसी संकटकालीन अवस्थाओं के लिए सरलता और शीघ्रतापूवर्क परिरस्थिति के अनुसार उसमें परिवर्तन किये जा सकते हैं और राज्य उन संवैधानिक बाधाओं से बच जाता है।

(3) विद्रोह से रक्षा– लचीले संविधान में विद्रोह तथा क्रान्तियों की भयंकरता से राज्य की रक्षा बनी रहती है, क्योंकि समय तथा परिस्थितियों की मांग के अनुसार लचीले संविधान सरलतापूर्वक संशोधित किये जा सकते है। उदाहरणार्थ–इंग्लैण्ड में पिछली शताब्दी में राजसत्ता कुलीन श्रेणी के हाथ से निकलकर जनता के हाथों में आई, किन्तु इसके लिए वहाँ फ्रॉंस जैसी किसी क्रान्ति की आवश्यकता नहीं हुई ।

लचीले संविधान के दोष (Demerits o Flexible Constitution)

(1) अस्थिरता– लचीले संविधान वाले राज्यों में राजनीतिक जीवन में अस्थिरता बनी रहती है, क्योंकि संविधान में सरलतापूर्वक संशोधन होने की व्यवस्था के कारण राजनीतिक जीवन दलगत राजनीति तथा क्षणिक आवेशों का शिकार सरलता पूर्वक हो जाता है। ऐसी दशा में सम्पूर्ण जनता की भावनाओं का प्रतीक संविधान शाक्तिशाली राजनीतिक दलों और नेताओं के हाथों का लिखौना बन सकता है।

(2) मर्यादाहीनता– संविधान का एक अत्यनत महत्त्वपूर्ण उदेश्य शासक और शासित के अधिकारों एवे कर्त्तव्यों की मर्यादा स्थापित करना होता है तथा संविधान दोनों को इस बात के लिए बाध्य करता है कि वे संवधिान द्वारा प्रतिपादित मर्यादा का उल्लंघन न करें । अतः यदि संविधान लचीला होता है, तो शासक और शासित के अधिकारों और कर्त्तव्यों की मर्यादा का स्थापित रहना असम्भव हो जाता है।

(3) अधिनायकवाद का भय– परिस्थिति – अनुकूलता लचीले संविधान की एक अच्छाई मानी जाती है, परन्तु उसकी यही अच्छाई कभी–कभी राज्य में शासकीय अधिनायकतन्त्र की स्थापना काक कारण भी हो सकती है । संकटकाल में ही नहीं, शान्ति–काल में भी शासक वर्ग बहुमत का लाभ उठा कर लचीलेप के कारण संविधान में ऐसे परिवर्तन कर सकता है, जो सम्पूर्ण जनता तथा समष्टि रूप में राज्य के हितों के लिए हानिकारक हैं।

(II) कठोर संविधान (Rigid Constitution):– कठोर संविधान वह संविधान है जिसे आसानी से बदला जा सके और जिसमें स"ाोधन के लिए वि"ोष विधि को प्रयोग में लाया जाता हो। इस संविधान में साधारण कानून बनाने की विधि से स"ाोधन नहीं किया जा सकता। इस संविधान में साधारण कानून तथा संवैधानिक कानून में अन्तर किया जाता है। इसमें संविधान ही दे"ा का सर्वाच्च कानून होता है। यदि संसद संविधान की धाराओं के विरूद्ध कोई कानून बनाती है तो न्यायपालिका इस कानून को अवैध घोषित कर सकती है। अमेरिका तथा भारत में संविधान इसी कोटि के अन्तर्गत रखे जा सकते हैं। अमेरिका के संविधान में स"ाोधन तभी हो सकता है जब स"ाोधन का प्रस्ताव कांग्रेस के दोनों सदन दो–तिहाई बहुमत से पास करें और उसके बाद तीन–चौथाई राज्य विधानमण्डल उसे

अनुमोदित करें। भारत में कुछ मामलों में तो कठोर संविधान है तथा कुछ में लचीला। जिन मामलों में सदन के दोनों सदनों के कुल संख्या के बहुमत तथा मतदान करने वाले सदस्यों के दो–तिहाई बहुमत से सं”ोधन करके उसे राष्ट्रपति के पास भेज दिया जाता है और राष्ट्रपति की अनुमति प्राप्त हो जाने पर वह सं”ोधन स्वीकार कर लिया जाता है, उन्हें सामान्य सं”ोधन विधि के अन्तर्गत गिना जाता है। लेकिन कई मामलों में आये राज्य विधानमण्डलों की स्वीकृति भी आव”यक होती है। यह प्रक्रिया कठोर संविधान का उदाहरण प्रस्तुत करती है। स्विट्रलैण्ड तथा जापान में भी कठोर संविधान हैं। इस संविधान का प्रमुख गुण इसकी नि”चतता व स्थायित्व है।

कठोर संविधान के गुण (Merits of Rigids Constitution)

(1) मनमानेपन से सुरक्षा – संविधान दुरूह होने से शासन के मनमानेपन से सुरक्षा होती रहती है और शासन के विरूद्ध जनता के अधिकारों की रक्षा भी बनी रहती है, क्योंकि शासन और जनता, दोनों के अधिकारों की व्यवस्था का संशोधन सरलतापूर्वक किसी की मनमानी के अनुसार नहीं किया जा सका।

(2) स्थिरता – कठोर संविधान होने से राज्य की शासन–विधि तथा उसके राजनीतिक जीवन में स्थिरता बनी रहती है और सामयिक आवेशों तथा दलगत राजनीति से उत्पन्न जिस राजनीतिक उथल–पुथल की सम्भावना संविधान लचीला होने की दशा में रहती है वह सम्भावना कठोर संविधान होने की दशा में नही रहती।

(3) शासन के विभिन्न अंगों में स्थिर सम्बन्ध – इसी प्रकार संविधान कठोर होने से शासन के विभिन्न भागों के पारस्परिक सम्बन्ध भी स्थिर बने रहते है और उनमें आपसी तनाव और खींचातानी की सम्भावना कम रहती है।

कठोर संविधान के दोष (Demerits of Rigid Constitution)

(1) प्रगति के बाधक– कठोर संविधान राज्य की प्रगति में बाधक होते हैं । किसी राज्य के संविधान के लिए यह आवश्यक है कि यह परिवर्तनशील राजीतिक जीवन के अनुकूल परिर्वतनशील हो। चूँकि कठोर संविधान साधारणतः सरलतापूर्वक पस्थितियों के अनुसार परिवर्तनशील नहीं होता, अतः वह अवांछनीय समझा जाता है।

(2) अपरिवर्तनशील– कठो संविधान की अपरिवर्तनशीलता कभी–कभी क्रांतियों का कारण भी बन जाती है, क्योंकि जब संविधान राजनीतिक जीवन के पविर्तनों का समय की मांग के साथ स्वीकार नहीं करता, तो बाध्य होकर उन परिवर्तनों को कार्य–रूप देने के लिये मनुष्य को क्रान्ति का सहारा लेना पड़ता है।

(3) विकसित तथा निर्मित संविधान (Evolved and Enacted Constitution)

कुछ विद्वानों ने संविधानों का वर्गीकरण इस आधार पर भी किया है कि कुछ संविधान तो लम्बे ऐतिहासिक विकास का प्रतिफल है, जबकि दूसरों का किसी वि”ोष समय पर संविधान सभा ने निर्माण किया है। विकसित संविधान वह संविधान होता है जिसका निर्माण किसी संविधान सभा द्वारा नहीं किया जाता बल्कि यह तो परिस्थितियों और

नागरिकों की राजनीतिक चेतना के आधार पर विकसित होता रहा है। इस संविधान की जड़ें इतिहास की परम्पराओं, रीति–रिवाजों , संसदीय कानूनों और न्यायिक निर्णय में होती है। इस संविधान का कुछ भाग लिखित तथा कुछ अलिखित होता है। इंगलैण्ड का संविधान विकसित संविधान है। इस संविधान का प्रमुख गुण यह है कि यह जन इच्छा की स्पष्ट अभिव्यक्ति होने कारण क्रान्ति की संभावना से परे होता है। इसका स्थायित्व ही इसका वि"ोष्ट गुण है। स्वस्थ परम्पराओं के आधार पर विकसित होने के कारण आज तक इंगलैण्ड के संविधान में वि"ोष सं"ोधनों की आव"यकता नहीं पड़ी है।

निर्मित संविधान वह होता है जिसे किसी संविधान सभा ने वि"ोष समय पर बनाकर लागू किया हो। निर्मित संविधान प्रायः लिखित ही होते हैं। अमेरिका का संविधान 1787 में तथा भारत का संविधान 1949 में बनाया गया। इसी तरह अन्य दे"ों के संविधान भी निर्मित ही हैं। लिखित रूप होने के कारण निर्मित संविधान स्पष्ट रूप में राज्य व नागरिकों के सम्बन्धों को प्रतिबिम्बित करते हैं और इसमें संघर्ष की गुंजाइ"ा कम होती है। ऐसे संविधानों में सं"ोधन भी सुविधापूर्वक किया जा सकता है। इसमें स्पष्टता व नि"चतता का गुण होता है। इसमें संविधान ही सर्वोच्च कानून होता है

2.3.3 संविधान के विकास की प्रक्रिया (Process of growth of Constitution)

संविधान को कभी भी किसी संविधान सभा ने एक समय पर नहीं बनाया, वरन् इसका विकास लोगों की राजनीतिक चेतना में वृद्धि के साथ–साथ उनकी आवश्यकतानुसार धीरे–धीरे हुआ है। अंग्रेजों का संवैधानिक इतिहास प्राचीन है, वह लगभग 1500 वर्ष पुराना है।

संविधान को पूर्णतया अस"ोधित और लेखबद्ध नहीं कर सकते। मानव समाज की अन्य संस्थाओं की तरह शासन विधि भी एक विकसित सत्ता है जिसका क्रमिक विकास होता रहता है। इस विकास में प्रथाओं एवं अभिसमयों का महत्वपूर्ण योगदान होता है और धीरे–धीरे संविधान विकसित होते रहते हैं। संविधान के विकास में निम्नलिखित तत्वों का योगदान होता है :–

1. प्रथाएं व अभिसमय (Customs and Conventions) :– समय बीतने के साथ–साथ प्रत्येक दे"ा में कुछ संविधानिक परम्पराएं विकसित होने लगती हैं जो अलिखित होते हुए भी लिखित नियमों को अनिर्धारित दि"ाा प्रदान करती है। ब्रिटेन का संविधान परम्पराओं द्वारा ही विकसित हुआ है। अमेरिका, भारत, स्विस तथा अन्य दे"ों के संविधानों पर भी परम्पराओं का प्रभाव पड़ा।

2. संविधियों द्वारा विकास (Evolution by Legislative Elaboration) :– संविधान के विकास में विधायिका का भी महत्वपूर्ण हाथ रहा है। इसने संविधान की तरह से विकसित किया है। अमेरिका और भारत में विधायिका ने

मूल संविधान में काफी कुछ नया जोड़ा है। इन कानूनों का भी वही महत्व है जो संवैधानिक कानूनों का है, क्योंकि ये संवैधानिक कानून का अभिन्न अंग बन गए हैं।

3 न्यायिक व्याख्याएं या निर्णय (Judicial Review):– न्यायपालिका द्वारा समय–समय पर संविधान के कानून की व्याख्याएं की जाती रहती हैं। इससे भी संविधान का विकास होता है। अमेरिका में न्यायाधी"ा मा"ील द्वारा प्रतिपादित व्याख्याओं ने संघात्मक शक्तियों में अभूतपूर्व वृद्धि की है और संविधानिक शब्दावली को आधुनिक बनाया है। भारत में भी सर्वोच्च न्यायालय द्वारा संविधानिक व्याख्याओं के कारण भारतीय संविधान का भी विकास हुआ है।

4. कार्यपालिका की व्याख्याएं (Executive Interpretation):– विधायिका और न्यायपालिका की तरह ही कार्यपालिका भी संविधान की व्याख्या करती रहती है। अमेरिका में कई बार राष्ट्रपति द्वारा इस प्रकार की व्याख्याएं की गई हैं और उन्हें मान्यता भी मिली है।

5. राजनीतिज्ञों तथा नागरिकों द्वारा व्याख्याएं (Interpretation by Politicians and Citizens):– राजनीतिज्ञ और नागरिक शासन के पदाधिकारी न होते हुए भी संविधान की व्याख्या में भाग लेते हैं। इसमें राजनीतिक दलों की भूमिका को लिया जा सकता है। अमेरिका के संविधान की धारा 2 में यह व्यवस्था की गई है कि राज्यों द्वारा नियुक्त निर्वाचक एकत्रित होकर राष्ट्रपति का चुनाव करेंगे। संविधान निर्माताओं की यह थी कि दलबन्दी या निहित स्वार्थों से परे योग्यतम व्यक्ति ही राष्ट्रपति को चुनेंगे।

6. संविधानिक सं"ाधन (Constitutional Amendments) :– संविधान में समय–समय पर होने वाले सं"ोधनों ने भी संविधान के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। अमेरिका, भारत, स्विट्जरलैंड आदि दे"ों में होने वाले संविधानिक सं"ोधनों ने वहां के संविधान के मूल ढांचे को ही बदल डाला है। अमेरिका में मौलिक अधिकारों की घोषणा तथा भारत में सम्पति के अधिकार को मौलिक अधिकारों की श्रेणी से बाहर निकालना, संविधानिक सं"ोधनों की ही देन है। सबसे कम संविधानिक सं"ोधन अमेरिका में हुए हैं जबकि सबसे अधिक भारत के संविधान संविधान में।

2.3.4 आदर्श संविधान की विशेषताएं (Features of an Ideal Constitution)

- **स्पष्टता तथा नि"चतता (Clarity and Definiteness)** :– एक आद"ा संविधान में स्पष्टता व नि"चतता का पाया जाना बहुत जरूरी है।
- **व्यापकता (Comprehensiveness)** :– संविधान के स्पष्ट व नि"चत होने के साथ–साथ उसका व्याप्क होना भी आव"यक है। व्यापकता का अर्थ है कि इसमें सरकार के संगठन व शक्तियों की विस्तृत व्याख्या होनी चाहिए।

- **संक्षिप्तता (Bravity)** :– एक आद"र्ा संविधान का संक्षिप्त होना भी जरूरी है। संविधान का अधिक लम्बा होना भी इसे आद"र्ा होने से रोकता है। इस दृष्टि से अमेरिका का संविधान एक आद"र्ा संविधान है क्योंकि उसमें केवल सात अनुच्छेद हैं जबकि आस्ट्रेलिया के संविधान में 128 तथा भारत के संविधान में 395 अनुच्छेद हैं।
- **लचीलापन (Flexibility)** :– आद"र्ा संविधान वही होता है जो परिस्थितियों के अनुसार स्वयं को ढाल सके। यदि संविधान में लोच"ाीलता या परिवर्तन"ाीलता का गुण नहीं होगा तो वहां जन–विद्रोह की सम्भावनाएं अधिक होंगी। अमेरिका और फ्रांस की क्रान्तियां इस बात का प्रमाण है। इसलिए आद"र्ा संविधान में लचीलेपन का गुण अव"य होना चाहिए ताकि क्रान्ति की सभी सम्भावनाओं को टाला जा सके। लेकिन इसको इतना लचीला भी नहीं होना चाहिए कि यह शासक वर्ग के हितों का पोषक ही बनकर रह गए।
- **संविधान की सर्वोच्चता (Supremacy of Constitution)** :– एक अच्छे संविधान का गुण है कि उसको दे"ा का सर्वोच्च कानून माना जाना चाहिए। यदि संसद संविधान की मूल आत्मा के विरूद्ध कोई कानून बनाए तो न्यायपालिका को उसे अवैध घोषित करने का अधिकार होना चाहिए।
- **न्यायपालिका की स्वतन्त्रता (Independence of Judiciary)** :– एक आद"र्ा संविधान में स्वतन्त्र न्यायपालिका का होना बहुत जरूरी है ताकि वह निष्पक्ष होकर संविधान की व्यवस्था कर सके और मौलिक अधिकारों की रक्षा कर सके।
- **मौलिक अधिकार व कर्तव्यों की** घोषणा **(Declaration of Fundamental Rights and Duties)** :– अधिकार व कर्तव्य एक सिक्के के दो पहलू होते हैं। किसी एक का अभाव दूसरे के लिए परे"ाानी पैदा करता है। इसलिए आद"र्ा संविधान वही हो सकता है जिसमें दोनों की व्यवस्था होती है। अधिकारों के बिना व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास नहीं हो सकता और कर्तव्यों के बिना राज्य के व्यक्तित्व का। अतः आद"र्ा संविधान में अधिकार और कर्तव्यों की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।
- **संविधान में** सं"ाो**धन करने की विधि का वर्णन (Description of the Methods of Amendment)** :– इस आद"र्ा संविधान का यह गुण होता है कि उसमें सं"ाोधन की विधि का स्पष्ट उल्लेख होता है। यदि संविधान में सं"ाोधन की विधि का स्पष्ट प्रावधान न हो तो उससे संसदीय ताना"ाही के पैदा होने के आसार बढ जाते हैं। राज्य, राज्य न होकर अराजकता को जन्म देने वाला यन्त्र बनकर रह जाता है। अतः आद"र्ा संविधान में विधि का स्पष्ट वर्णन होता है।

2.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further main body of the text)

2.4.1 संविधानवाद का अर्थ व परिभाषा (Meaning and Definitions of Constitutionalism)

संविधानवाद के साथ ही संविधानवाद की अवधारणा जुड़ी हुई है। राजनीतिक शक्ति पर नियन्त्रण के रूप में संविधान के जन्म के साथ ही संवैधानिक सरकार की स्थापना हुई और संविधानवाद की परम्परा का विकास हुआ। संविधानवाद की प्रमुख मान्यता यह है कि यदि राजनीतिक शक्ति पर संविधानिक नियन्त्रण न हो तो वह निरंकु"ा बन जाती है और मानव स्वतन्त्रताओं और अधिकारों का भक्षण करने लगती है। इसी कारण राजनीतिक शक्ति को नियन्त्रण में रखने के लिए और उसे जन–कल्याण का साधन बनाने के लिए उसमें उत्पीड़न या बाध्यता की शक्ति का समावे"ा किया जाता है। यह शक्ति ही संविधान कहलाती है और सभी शासकों या राजनीतिक शक्ति को नियन्त्रित रखने की संवैधानिक व्यवस्था ही संविधानवाद है।

संविधानवाद उन विचारो व सिद्धान्तों की ओर संकेत करता है, जो उसे संविधान का विवरण व समर्थन करते हैं, जिनके माध्यम से राजनीतिक शक्ति पर प्रभाव"ाली नियंत्रण स्थापित किया जा सके। यह संविधान पर आधारित विचारधारा है, जिसका मूल अर्थ यही है कि शासन संविधान में लिखित नियमों व विधियों के अनुसार ही संचालित हो व उस पर प्रभावशाली नियंत्रण स्थापित रहे, जिससे वे मूल्य व राजनीतिक आद"र्ा सुरक्षित रहें जिनके लिए समाज राज्य के बंधन स्वीकार करता है। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि संविधान के नियमों के अनुसार शासन संचालन मात्र ही संविधानवाद है। ऐसा तो किसी निरंकुश शासन में भी हो सकता है। एक तानाशाह अपनीइच्छा के अनुसार संविधान बनाकर, जनता की इच्छाओं और आकांक्षाओं की अवहेलना करता हुआ उन पर यह संविधान बलपूर्वक लागू कर सकता है। ऐसे संविधान में जनता के आदशों व मूल्यों का समावेष नहीं होता है, और इस कारण यह व्यवस्था संविधानवाद का विलोम ही होगी। अतः संविधानवाद संविधान के नियमों के अनुरूप शासन संचालन से अधिक है। इसका अर्थ है, निरंकु"ा शासन के विपरीत नियमानुकूल शासन, जिसमें मनुष्य की आधारभूत मान्यताओं, आस्थाओं और मूल्यों की व्यवहार में उपलब्धि सम्भव हो। इसमें यह निष्कर्ष निकलता है ंकि संविधानवाद शासन की वह पद्धति है जिसमें शासन जनता की आस्थाओं, मूल्यों व आद"र्ों का परिलक्षित करने वाले संविधान के नियमों व सिद्धान्तों के आधार पर ही किया जाए व ऐसे संविधान के माध्यम से ही "ाासकों को प्रतिबंधित व सीमित रखा जाए जिससे राजनीतिक व्यवस्था की मूल व्यवस्थाएँ सुरक्षित करें औरर व्यवहार में हर व्यक्ति को उपलब्ध हो सकें। संविधान व संविधानवाद एक दूसरे के पर्चायवाची नहीं है। जहां संविधान है वहाँ संविधानवाद आव"यक रूप से पाया जाता हो यह जरूरी नहीं हैं। संविधान के माध्यम से तो हम किसी भी देष की राजनीतिक व्यवस्था, अर्थात सरकार के स्वरूप, उसकी शक्तियों व नागरिकों और सरकार के सम्बन्धों से सम्बन्धित सिद्धान्तों व नियमों का संकेत पाते हैं जबकि संविधानवाद एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें संविधान के माध्यम से ही सरकार की शक्तियों पर शक्ति वितरण द्वारा प्रभाव"ाली नियंत्रण स्थापित किया जाता है जिससे वह आकांक्षाएँ व मूल्य सुरक्षित

रहें जिनकी उपलब्धि के साधन के रूप में संविधान का अपनाया व समर्थित किया गया है आज भी समर्थन दिया जाता है।

संविधानवाद को कुछ विद्वानों ने निम्न प्रकार से परिभाषित किया है :–

सी०एफ० स्ट्रांग के अनुसार – ''संवैधानिक राज्य वह है जिसमें शासन की शक्तियों, शासितों के अधिकारों और इन दोनों के बीच सम्बन्धों का समायोजन किया जाता है।''

कार्टन हर्ज के अनुसार – ''मौलिक अधिकार तथा स्वतन्त्र न्यायपालिका प्रत्येक संविधानवाद की अनिवार्य और सामान्य वि"ोषता है।''

जे०एस० राअसैक के अनुसार – ''धारणा के रूप में संविधानवाद का अभिप्राय है कि यह अनिवार्य रूप से सीमित सरकार तथा शासन के रूप में नियन्त्रण की एक व्यवस्था है।''

कोरी तथा अब्राहम के अनुसार – ''स्थापित संविधान के निर्दे"ाों के अनुरूप ही शासन ही संविधानवाद कहा जाता है।''

के०सी० व्हीयर के अनुसार – ''संविधानवाद का अर्थ है निरंकु"ा शासन के विपरीत नियमानुकूल शासन।''

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि संविधानवाद एक सीमित शासन है, क्योंकि इसमें कुछ प्रतिबन्धों की व्यवस्था द्वारा सरकार को सीमित व उत्तरदायी बनाया जाता है।

2.4.2 संविधान और संविधानवाद में अन्तर (Difference between Constitution and Constitutionalism)

संविधान ही संविधानवाद का आधार होता है।

- **परिभाषा की दृष्टि से अन्तर (Difference from the view point of definition)** :– संविधान एक संगठन का प्रतीक होता है तथा संविधानवाद एक विचारधारा का प्रतीक है जिसमें राष्ट्र के मूल्य वि"वास तथा राजनीतिक आद"ाी शामिल होते हैं। संविधान एक ऐसा संगठन है जिसमें सरकार और शासितों के सम्बन्धों को निर्धारित किया जाता है। संविधान राजनीतिक व्यवस्था के शक्ति सम्बन्धों की आत्मकथा है। संविधानवाद उन विचारों का द्योतक है जो संविधान का वर्णन और समर्थन करते हैं तथा जिसके माध्यम से राजनीतिक शक्ति पर प्रभावकारी नियन्त्रण कायम रखना सम्भव होता है।
- **प्रकृति की दृष्टि से अन्तर (Difference from the view point of Nature)** :– प्रकृति की दृष्टि से संविधान एक साधन प्रधान धारणा है और संविधानवाद एक साध्य प्रधान धारणा है। संविधानवाद राजनीतिक

समाज के लक्ष्यों और उद्दे"यों को प्राप्त करने के लिए सुव्यवस्था है। यह हर समाज के गन्तव्यों को प्राप्त करने की संविधान रूपी साधन द्वारा चेष्टा करता है। इस तरह संविधान वह साधन है जो राजनीतिक समाज के लक्ष्यों व उद्दे"यों को प्राप्त करके संविधानवाद की स्थापना करता है या संविधानवाद रूपी साध्य को प्राप्त करता है।

- **उत्पत्ति की दृष्टि से अन्तर (Difference from the view point of Origin)** :– संविधान का निर्माण किया जाता है जबकि संविधानवाद विकास की लम्बी प्रक्रिया का परिणाम होता है। संविधानवाद किसी भी दे"ा के राजनीतिक समाज के मूल्यों, वि"वासों तथा आद"ाों के विकास का परिणाम होता है। संविधान जनता की आव"यकताओं के अनुरूप सदैव परिवर्तित व सं"ाोधित होते रहे हैं, लेकिन संविधानवाद की स्थापना के बाद उसे बदलना या समाप्त करना निरंकु"ाता व अराजकता को जन्म देता है।
- **क्षेत्र की दृष्टि से अन्तर (Difference from the view point of Scope)** :– क्षेत्र की दृष्टि से संविधान एक अपवर्जक (exclusive) तथा संविधानवाद एक अन्तभूर्तकारी (inclusive) धारणा है। संविधानवाद तो कई दे"ाों में यदि उनकी संस्कृति समान है तो एक पाया जा सकता है, लेकिन संविधान हर दे"ा का अलग–अलग होता है।
- **औचित्य की दृष्टि से अन्तर (Difference from the view point of Legitimacy)** :– संविधान का औचित्य विधि के आधार पर सिद्ध किया जाता है, जबकि संविधानवाद में आद"ाों का औचित्य विचारधारा के आधार पर सिद्ध होता है। जिस दे"ा के संविधान में उचित कानून व नियमों की व्यवस्था होती है तथा संविधान जन–इच्छा के अनुकूल होता है तो उस संविधान को औचित्यपूर्ण माना जाता है। इसी तरह यदि किसी दे"ा में संवैधानिक आद"ाों का संवैधानिक उपायों से ही प्राप्त करने के प्रयास किए जाते हैं तो संविधानवाद का औचित्य सिद्ध हो जाता है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि संविधान और संविधानवाद में गहरा अन्तर है। एक संगठन का प्रतीक है तो दूसरा विचारधारा का। एक साधन है तो दूसरा साध्य। एक सीमित धारणा है तो दूसरी विस्तृत। एक का निर्माण होता है तो दूसरे का विकास। इतने अन्तर के बावजूद भी दोनों में आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। यदि दोनों की दि"ााएं अलग अलग होंगी तो इसके राजनीतिक समाज के लिए विना"ाकारी परिणाम निकलेंगे।

2.4.3 संविधानवाद के आधार (Foundations of Constitutionalism)

राजनीतिक समाज के लोगों में पाई जाने वाली मतैक्य की भावना ही संविधानवाद का आधार है। मतैक्य जितना अधिक विरोध की बजाय सहमति के नजदीक होगा, उतनी ही अधिक संविधानवाद में ठोसता व व्यावहारिकता का

गुण होगा। यही मतैक्य संविधानवाद की आव”यक शर्त भी है और आव”यकता भी है। यह मतैक्य चार प्रकार का हो सकता है :–

- **संस्थाओं के ढांचे और प्रक्रियाओं पर मतैक्य (Consensus of the form of Institutions and Procedures)** :– यदि नागरिक यह महसूस करते हैं कि सरकार उनके हितों के विरूद्ध कार्य कर रही है तो वे सरकार का विरोध करने में कोई देर नहीं करते। स्थिति संविधानवाद के विपरीत होती है। इसलिए संविधानवाद को बनाए रखने के लिए संस्थाओं के ढांचे और प्रक्रियाओं पर नागरिकों में मतैक्य होना जरूरी है।
- **सरकार के आधार के रूप में विधि–शासन की आवश्यकता पर सहमति (Agreement on desirability of the rule of law as basis of Government)** :– जनता को सदैव यह वि”वास होना चाहिए कि सरकार या शासन कानून द्वारा ही चलाया जा रहा है। जनता की यही आस्था या वि”वास आपातकाल में शासक वर्ग को संविधानवाद से छूट देकर लाभ पहुंचाता है।
- **समाज के सामान्य** उद्दे”यों **पर सहमति (Agreement on the general goals of Society)** :– राजनीतिक समाज के लोगों में सामान्य उद्दे”यों पर सहमति का अभाव राजनीतिक व्यवस्था में तनाव व खिंचाव उत्पन्न करता है। इसलिए संविधानवाद के लिए यह आव”यक है कि नागरिक समाज के लोगों में समाज के सामान्य उद्दे”यों पर सहमति बनी रहे। यही संविधानवाद की आधारि”ाला है।
- **गौण लक्ष्यों एवं** वि”िाष्ट **नी**ति–प्र”नां **पर सहमति (Concurrence in lesser goal and on specify policy question)** :– संविधान के भवन को धरा”ाायी होने से बचाने के लिए यह आव”यक है कि नागरिक समाज के लोगों में गौण लक्ष्यों और वि”िाष्ट नीति–प्र”नों पर भी सहमति बनी रहे। यह सहमति संविधानवाद को व्यवहारिकता का गुण प्रदान करती है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि राजनीतिक समाज के लोगों में संस्थाओं के ढांचे व प्रक्रियाओं पर, सरकार के आधार के रूप में विधि के शासन की आव”यकता पर, समाज के सामान्य उद्दे”यों, गौण लक्ष्यों तथा वि”िाष्ट नीति–सम्बन्धी प्र”नों पर आम राय का होना जरूरी है। विभिन्न बातों पर राजनीतिक समाज के लोगों में पाया जाने वाला मतैक्य या सहमति ही संविधानवाद का आधार है।

2.4.4 संविधानवाद की वि”ोषताएं (Features of Constitutionalism)

- **संविधानवाद एक गत्यात्मक अवधारणा है (Constitutionalism is a Dynamic Concept)**:– गति”ाीलता संविधानवाद का प्रमुख गुण होता है। इसी कारण संविधानवाद विकास का सूचक होता है।

समय व परिस्थितियों के अनुसार समाज के मूल्य व आद"ाों के बदलने के कारण संविधानवाद को भी अपनीप्रकृति को बदलना पड़ता है। यदि संविधानवाद लोच"ाीलता तथा परिवर्तन"ाीलता के गुण से हीन होगा तो संविधानवाद में रक्षा करने वाला कोई नहीं होगा। ऐसे संविधानवाद के दिन जल्दी ही लद जायेंगे और वह विनष्ट हो जाएगा।

- **संविधान मूल्यों पर आधारित अवधारणा है (Constitutionalism is a value based Concept)** :– संविधानवाद का सम्बन्ध उन आदे"ाों से होता है जो किसी राष्ट्र के लिए बहुत महत्वपूर्ण होते हैं और राष्ट्रवाद का आधार होते हैं। संविधानवाद उन वि"वासों, राजनीतिक आद"ाों और मूल्यों की तरफ इ"ाारा करता है जो प्रत्येक नागरिक को बहुत ही प्रिय होते हैं। अभिजन वर्ग के बाद समाज का बुद्धिजीवी वर्ग इसको जनता तक पहुंचाता है। सामाजिक स्वीकृति प्राप्त होने पर ही मूल्य संविधान का आद"ा बनते हैं और संविधानवाद को मूल्यों से युक्त करता है। इन मूल्यों की रक्षा के लिए नागरिक हर बलिदान देने को तैयार रहते हैं। जिन मूल्यों को समाज द्वारा अस्वीकृत कर दिया जाता है, वे मूल्य संविधानवाद से दूर हट जाते हैं।
- **संविधानवाद संविधान पर आधारित अवधारणा है(Constitutionalism is a Constitution based Concept)** :– संविधान नागरिक समाज के मूल्यों व आद"ाों का प्रतिबिम्ब होता है। संविधान किसी भी दे"ा का सर्वोच्च कानून होता है। प्रतिबन्धों की व्यवस्था के कारण जनता का संविधान में गहरा वि"वास होता है। यही वि"वास और लगाव संविधानवाद का भी आधार है। यदि संविधान और संविधानवाद में साम्य नहीं होगा तो राजनीतिक उथल–पुथल की घटनाएं शुरू हो सकती हैं और दे"ा में अराजकता का माहौल पैदा हो सकता है। इसलिए संविधानवाद को संविधान पर ही आश्रित रहना पड़ता है। इसी से संविधानवाद व्यवहारिकता का गुण प्राप्त करता है।
- **संविधानवाद समभागी अवधारणा है (Constitutionalism is a Shared Concept)** :– एक दे"ा के मूल्य व आद"ा दूसरे दे"ाों के संविधान का भी अंग बन सकते हैं। यद्यपि समान संविधानवाद वाले दे"ाों में भी कुछ असमान लक्षण हो सकते हैं, लेकिन यह अन्तर मात्रात्मक ही रहता है, गुणात्मक नहीं। विकास"ाील प्रजातन्त्रीय दे"ाों में संविधानवाद के आधारभूत लक्षण लगभग समान मिलते हैं। यदि कोई अन्तर दृष्टिगोचर भी होता है तो वह संविधानवाद की समन्वयकारी शक्ति में घुल जाता है। अतः संविधानवाद एक समभागी अवधारणा है। संविधान तो प्रत्येक दे"ा का अपना अलग अलग होता है, संविधानवाद के लक्षण समान रूप से कई दे"ाों में एक जैसे ही मिल सकते हैं। इस प्रकार संविधानवाद संविधान पर आधारित अवधारणा है। यह संविधान के आद"ाों व मूल्यों का साध्य के रूप में प्राप्त करने का प्रयास करता है। इसका राजनीतिक

समाज के मूल्यों से गहरा लगाव होने के कारण यह संस्कृति से सम्बन्धित भी होता है। यह समय व परिस्थितियों के अनुसार विकास की तरफ भी बढ़ता रहता है।

- **संविधान संस्कृति सम्बद्ध अवधारणा है (Constituionalidm is a culture-bound concept)-** किसी भी राजनीतिक समाज के मूल्यों का विकास समाज की संस्कृति से सम्बद्ध होते हैं हर दे"। के आद"र्ी मूल्य व विचारधाराए उस दे"। की संस्कृति की ही उपज होती है, और संस्कृति से ही गठबन्धित रहते है। संविधानवाद इन्हीं पर आधारित है। वर्तमान युग में कई राजनीतिक समाज इतने वि"ााल होते हैं कि उनमे संस्कृतियों की विविधता और भिन्नता पाई जाती है। ऐसे राष्ट्रों में सविधानवाद इन विभिन्न संस्कृतियों के समन्वय का सूचक है। उनमें संघर्ष तथा विरोध के स्थान पर सहयोग और सामंजस्य की व्यवस्था संविधानवाद द्वारा ही होती है।
- **संविधानवाद प्रधानतः साध्य मूलक अवधारणा है (Constitutionalism is predominantly an ends concept)-** संविदानवाद प्रधानतः साध्यों से समबन्धित विचार है। वैसे भी साधनों व साध्यों को एक दूसरे से अलग नही किया जा सकता। फिर भी संविधानवाद से प्रमुखतया लक्ष्यों का ही संकेत मिला है। जब हम यह कहते है कि संविधानवाद साध्य–प्रधान विचार है तो उसका अर्थ उन आद"ाों से है जिन्हें समाज साध्य के रूप में अगीकार करता है। इस प्रकार संविधानवाद का साध्यों को ओर प्रमुख संकेत होता है और साधनों की ओर गौण संकेत ही होता है।

2.4.5 संविधानवाद के तत्व

पिनोक व स्मिथ ने अपनीपुस्तक **पोलिटिकल सायंस** : ऐन इन्ट्रोडक"ान में संविधान के चार तत्वों का उल्लेख किया है।

(क) संविधान अपरिहार्य संस्थाओं की अभिव्यक्ति (The constitution as an embodiment of essential institutions):- संविधान चाहे लिखित हो या विकसित व अलिखित, उसमे व्यवस्थापिका, कार्यपालिका व न्यायपालिका के संगठन, कार्यो व उनके पारस्परिक सम्बन्धों की स्पष्ट व्यवस्था, संविधानवाद की अभिव्यक्ति के लिए अनिवार्य है। संविधान में सरकार के विभिन्न स्तरों व अगों की "ाक्तियों की व्याख्या ही नही हो वरन् उनके पारस्परिक सम्बन्धों का उन पर लगी सीमाओं और उनकी कार्यविधि का स्पष्ट उल्लेख भी होना चाहिए, अगर किसी संविधान द्वारा आधारभूत राजनीतिक संस्थाओं की स्थापना व उनकी शक्तियों की स्पष्ट व्याख्या नही होती है तो ऐसी व्यवस्था में संविधानवाद सम्भव नही होता है। ऐसे राज्यो में राजनीतिक शक्तियों के प्रयोगकर्त्ता अपने अधिकारक्षेत्र में इच्छानुसार वृद्धि करके शासन शक्तियों के दुरूपयोग के अवसर प्राप्त कर लेते हैं। इसलिए संविधान में आधारभूत संस्थाओं की स्पष्ट व्यवस्था, संविधानवाद का एक महत्त्वपूर्णा तत्त्व है। पिनोक व स्मिथ तो

प्रतिबंधों को संविधानवाद का मूल मन्त्र मानते है। हर राज्य में सरकार सवैधानिक बनाए रखने के लिए, उसका किसी न किसी प्रकार नियंत्रण व्यवस्था के अधीन होना आव"यक है

संविधान का व्यवहर में किसी भी अधिकारी द्वारा उल्लंघन नही किया जाता है। साधाणतया, हर लसकतान्त्रिक राज्य में कुछ नियंत्रण शासको पर लगाए जाते है। मोटे तौर पर यह नियंत्रण है (1) विधि के शासन की स्थापना, (2) मौलिक अधिकारों की व्यवस्था, (3) राज्य की शक्तियों के विभाजन, पृथक्करण व विकेन्द्रीकण की व्यवस्था, तथा (4)सामाजिक बहुलवाद की परिस्थितियों को बनाए रखने की व्यवस्था।

इन नियंत्रण व्यवस्थाओं के माध्यम से सरकार व नागरिक, दोनों ही अपने अधिकार व कार्य क्षेत्र में सीमित रहने के लिए बाध्य हो जाते हैं। एसी व्यवस्था में, संविधान समाज के आद"र्ाों, आस्थाओं और राजनीतिक मूल्यों की प्राप्ति का साधान बना रहता है। अगर किसी राज्य में संविधान द्वारा ऐसे प्रतिबन्ध स्थापित नही किये जाते हैं तो यह संविधान राजनीतिक आचरण का निदे"ाक व नियंत्रककर्ता नही रह पाता हैं। एसी नियंत्रण मुक्त राजनीतिक व्यवस्था में शासक स्वेच्छा से सब कुछ कर सकता हैं और जिस राज्य में शासक उन्मुक्त होकर सब कुछ कर सकें, वहा संविधानवाद सम्भव नही हो सकता है। इसलिये संविधान का राजनीतिक शक्ति का प्रतिबन्धक होना संविधानवाद का आधारभूत तत्त्व हैं। समय, परिस्थितियों और आव"यकताओं में परिवर्तन के साथ

(ख) सविधान राजनीतिक शक्ति का संगठक (The constitution as an organiser of political authroity) – संविधन केवल सरकार की सीमाओ की स्थापना ही नही करता अपितु सरकार की विभिन्न संस्थाओ में शक्तियों का क्षैतीजीय व लम्बात्मक वितरण भी करता है। संविधान यह व्यवस्था भी करता है कि सरकार के कार्य अधिकार युक्त रहें, और स्वंय सरकार भी वैध्य (Legitimate) रहें। अगर कोई संविधान सरकार के कार्यों को अधिकार युक्त व स्वंय सरकार को वैध्य नही बनाता तो ऐसी सरकार व संविधन अधिक दिन तक स्थाई नही है सकते हैं तथा, ऐसी राजनीतिक व्यवस्था में संविधानवाद राजनीतिक शक्ति का संगठन नहीं रहता। इससे स्पष्ट है कि संविधान द्वारा हर राजनीतिक व्यवस्था में राजनीतिक शक्ति का संगठन होना आव"यक है, क्योकि संविधानवाद की अभिव्यक्ति संविधान द्वारा व इसकी व्यवाहर में प्राप्ति सरकार द्वारा ही सम्भव है। निष्कर्ष रूप में यह कहना उचित होगा कि संविधानवाद के उपरोक्त वर्णित चारों तत्त्व संविधन में निहित होने चाहिए। अगर किसी राज्य के संविधान में संविधानवाद के इन तत्त्वों का समावे"ा नही होता तो वह संविधान संविधानवाद सम्भव नही हो सकता।

2.4.6 संविधानवाद की अवधारणाएं

संविधानवाद संविधान पर आधारित अवधारणा है। संविधान जनता का सर्वोच्च कानून होता है। प्रत्येक देश के संविधान के अपनेराजनीतिक आदर्श व मूल्य होते हैं। प्रत्येक देश की संस्कृति के अपने गुण अन्य देशों से भी साम्य

रखने के कारण कई देशों मेंसांझे संविधानवाद का विकास हो जाता है। यद्यपि यह तो सत्य है कि समस्त विश्व में एक संविधानवाद नहीं हो सकता, क्योंकि विश्वके देशों की संस्कृति में काफी अन्तर है। इसी आधार पर संविधान भी अलग अलग होते हैं और संविधानवाद भी। द्वितीय विश्व युद्ध केबाद विश्व में तीन तरह का संविधानवाद विकसित हुआ है। इस आधार पर संविधानवाद की तीन अवधारणाएं हैं :—

(I) संविधानवाद की पाश्चात्य अवधारणा (Estern Concept of Constitutionalism)

(II) संविधानवाद की साम्यवादी अवधारणा (Marist or Communist Concept of Constitutionalism)

(III) संविधानवाद की विकासशील देशों की अवधारणा (Concept of Consitutionalism of Developing Countries)

(I) संविधानवाद की पाश्चात्य अवधारणा (estern Concept of Constitutionalism)

इस अवधारणा को उदारवादी लोकतन्त्र की अवधारणा भी कहा जाता है। यह अवधारणा मूल्य मुक्त तथा मूल्य अभिभूत दोनोंव्याख्याओं पर आधारित हैं। मूल्य मुक्त अवधारणा के रूप में इसमें केवल संविधानिक संस्थाओं का वर्णन किया जाता है, संविधानवादके आदर्शों व मूल्यों का नहीं। जब राजनीतिक समाज के आदर्शों और मूल्यों के दृष्टिगत संविधानवाद की व्याख्या की जाती है तोवह मूल्य–अभिभूत व्याख्या कहलाती है। मूल्य अभिभूत व्याख्या ही आधुनिक लोकतन्त्र की मांग है। संविधानवाद की पाश्चात्यअवधारणा उदारवाद का दर्शन है। यह संविधानवाद साध्य और साध्य दोनों है। इसमें राजनीतिक संस्थाओं के ढांचे के साथ–साथराजनीतिक समाज के मूल्यों, आदर्शों (स्वतंत्रता, समानता, न्याय) को भी महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। यह संविधानवाद प्रतिबन्धोंकी व्यवस्था द्वारा सीमित सरकार की व्यवस्था करता है और कुछ संविधानिक उपबन्धों द्वारा राजनीतिक उत्तरदायित्व के सिद्धान्तका भी प्रतिपादन करता है। इससे व्यक्ति की स्वतंत्रता व अधिकारों का बचाव होता है और विधि के शासन द्वारा समाज में सुव्यस्थाबनी रहती है। पश्चिमी संविधानवाद में संविधान का महत्व सरकार से अधिक होता है क्योंकि सरकार का निर्माण संविधान के बादमें होता है। इस संविधानवाद में संवैधानिक सरकार संविधान के आदर्शों को मानने के लिए बाध्य प्रतीत होती है। संवैधानिक उपबन्धतथा उत्तरदायित्व का सिद्धान्त उसे संविधानात्मक बनाए रखने में मदद करते हैं। इस तरह पाश्चात्य संविधानवाद लोकतन्त्रीय भावनापर आधारित होता है।

(II) संविधानवाद की साम्यवादी अवधारणा (Marxist or Communist Concept of Constitutionalism)

साम्यवादी देशों में संविधानवाद की अवधारणा पाश्चात्य संविधानवाद से सिद्धान्त में साम्य रखते हुए भी व्यवहारिक दृष्टिकोण सेकाफी भिन्न हैं। इस अवधारणा की दृष्टि में संविधान का उद्देश्य सबके लिए स्वतन्त्रता, समानता, न्याय

और अधिकार निश्चित करनान होकर, बल्कि समाजवाद की स्थापना करना है। यह संविधानवाद मार्क्स व लेनिन के वैज्ञानिक समाजवादी विचारों पर आधारितहै। समस्त साम्यवादी संविधानवाद सोवियत संविधान के इर्द–गिर्द ही घूमता है और सोवियत संविधान का निर्माण समाजवादी तत्वोंसे हुआ है। साम्यवादी देशों में सरकार व शक्ति का अर्थ पाश्चात्य देशों के दृष्टिकोण से बिल्कुल विपरीत है। इसी आधार पर संविधानवाद में भी भिन्नता आ जाती है। साम्यवादी सरकार को पूंजीपति वर्ग के हाथ की कठपुतली मानते हैं, जो धनिक वर्ग के हितोंकी ही पोषक होती है। उनके अनुसार राजनीतिक शक्ति का आधार आर्थिक शक्ति है। उत्पादन शक्ति के धारक होने के कारणपूंजीपति राजनीतिक सत्ता के भी स्वामी होते हैं। इसलिए राजनीतिक शक्ति और मौलिक अधिकारों का प्रयोग जनसाधारण की बजायअमीर लोग ही करते हैं। इसलिए पाश्चात्य जगत में मौलिक अधिकारों की व्यवस्था राजनीतिक शक्ति प्राप्त लोगों के लिए ही रहतीहै। राजनीतिक शक्ति पर किसी प्रकार के नियन्त्रण की बात करना मूर्खता है, क्योंकि आर्थिक व राजनीतिक शक्ति से सम्पन्न सरकारपर कोई भी नियन्त्रण प्रभावी नहीं हो सकता। इसलिए राजनीतिक शक्ति पर नियन्त्रण केवल तभी सम्भव है, जब आर्थिक शक्तिपर नियन्त्रण लगाया जाए।

साम्यवादी संविधानवाद आर्थिक शक्ति पर नियन्त्रण करने के लिए ऐसी समाजवादी व्यवस्था की स्थापना पर जोर देते हैं जो आर्थिकसाधनों का बंटवारा समाज की सभी व्यक्तियों या वर्गों में कर दे। उनका मानना है कि आर्थिक शक्ति के विकेन्द्रीकरण से राजनीतिकशक्ति भी समस्त समाज के हाथ में आ जाएगी और सरकार की नीतियों का लाभ सभी व्यक्तियों को मिलने लगेगा। साम्यवादीविचारकों का मानना है कि आर्थिक शक्ति पर नियन्त्रण राजनीतिक शक्ति पर भी स्वयं नियन्त्रण रखने लग जाएगा।

(III) संविधानवाद की विकासशील देशों की अवधारणा (Concept of Consitutionalism of Developing Countries)

राजनीतिक स्थावित्व के अभाव में विकासशील देशों में संविधानवाद का विकास उतना नहीं हुआ है, जितना पश्चिमी देशों में हुआहै। भारत को छोड़कर सभी विकासशील देशों की राजनीतिक व्यवस्थाएं अभी संक्रमणकाल के दौर से गुजर रही हैं। भारत हीएकमात्र ऐसा देश है जो राजनीतिक स्थायित्व के साथ–साथ संविधानवाद में भी पाश्चात्य देशों से पीछे नहीं है। भारत में संविधानवाद अपनीपराकाष्ठा पर पहुंच चुका है। भारत ने पाश्चात्य संविधानवाद के समस्त आदर्श प्राप्त कर लिए हैं और वह बराबरसंविधानवाद का विकास कर रहा है। विकासशील देशों की अपनीकूछ समस्याएं हैं जो संविधानवाद के मार्ग में बाधा बनकर खड़ीहैं। फिर भी विकासशील देश कम या अधिक मात्रा में पश्चिमी देशों की तरह संविधानवाद का पोषण कर रहे हैं। विकासशील देशोंके संविधानवाद को समझने के लिए इन देशों की समस्याओं को समझना बहुत आवश्यक है।

भारत में संविधानवाद

भारत एक विकासशील देश है। भारत में संविधानवाद पाश्चातय व साम्यवादी संविधानवाद का मिश्रित रूप है। भारत ने संसदीयप्रजातन्त्र को विरासत के रूप में अपनाया है। भारत में यह व्यवस्था अन्य विकासशील देशों की तुलना में अधिक सफल रही है।भारत के संविधानवाद में कानून का शासन, मौलिक अधिकारों, स्वतन्त्रता व समानता का आदर्श, स्वतन्त्र व निष्पक्ष न्यायपालिका,राजनीतिक शक्ति का पृथक्करण, निश्चित अवधि के बाद चुनाव, राजनीतिक दलों की व्यवस्था, प्रैस की स्वतन्त्रता, सामाजिकबहुलवाद आदि द्वारा सीमित सरकार व उत्तरदायी सरकार की परम्परा का निर्वाह किया गया है। इस दृष्टि से भारत में संविधानवादउदारवादी पाश्चात्य लोकतन्त्र के काफी निकट है। इसी तरह भारत में साम्यवादी संविधानवाद के समाजवादी तथ्यों को भी अपनायागया है। भारत में जनकल्याण को बढ़ावा देने के लिए उत्पादन व वितरण के साधनों पर सार्वजनिक स्वामित्व की व्यवस्था की गईहै। अतः भारत का संविधानवाद मिश्रित प्रकृति का है और विकसित अवस्था में है।इस प्रकार विकासशील देशों में भारत को छोड़कर संविधानवाद अभी निर्माण के दौर में है। धीरे धीरे कई विकासशील देशोंमें स्वच्छ संवैधानिक परम्पराएं विकसित हो रही हैं। होवार्ड रीगिन्स का कथन सत्य है कि "राज्य नए हैं और राजनीतिक खेलके नियम प्रवाह में हैं इसलिए संविधानवाद अभी सुस्थिर नहीं हो सका है।" आज विकासशील देश संविधानवाद की वास्तविकताओंसे काफी दूर है। भारत की तरह आज बर्मा, इण्डोनेशिया, नाईजीरिया, श्रीलंका आदि विकासशील देशों में संविधानवाद की लोकतन्त्रीय परम्पराएं विकसित हो रही हैं।

2.5 अपनी प्रगति जांचें (Check your progress)

1.विधान मंडल की प्रधानता, स्विट्जरलैण्ड शासन की एक प्रमुख विशेषता है ।

(अ) सत्य है (ब) असत्य है (स) दोनों (द) इनमें से कोई भी नहीं

2.................. को .''मुकुटधारी'' गणतंत्र कहते हैं ।

3 .... में साम्यवादी दल की केन्द्रीय भूमिका हैं

4 ....मूल सिद्धान्तों का एक समुच्चय है, जिससे कोई राज्य या अन्य संगठन अभिशासित होते हैं।

2.6 सारांश (Summary)

संविधान, मूल सिद्धान्तों का एक समुच्चय है, जिससे कोई राज्य या अन्य संगठन अभिशासित होते हैं। वह किसी संस्था को प्रचालित करने के लिये बनाया हुआ संहिता (दस्तावेज) है। यह प्रायः लिखित रूप में होता है। यह वह विधि है जो किसी राष्ट्र के शासन का आधार है उसके चरित्र, संगठन, को निर्धारित करती है तथा उसके प्रयोग विधि को बताती है, यह राष्ट्र की परम विधि है तथा विशेष वैधानिक स्थिति का उपभोग करती है सभी प्रचलित

कानूनों को अनिवार्य रूप से संविधान की भावना के अनुरूप होना चाहिए यदि वे इसका उल्लंघन करेंगे तो वे असंवैधानिक घोषित कर दिए जाते है।

संविधानों का वर्गीकरण 3 आधारों पर किया जाता है 1.लिखित तथा अलिखित संविधान 2.लचीला तथा कठोर संविधान 3 विकसित तथा निर्मित संविधान । एक आद"र्ा संविधान की, लचीलापन, :संक्षिप्तता, व्यापकता, स्पष्टता तथा निि"चतता,संविधान की सर्वोच्चता, न्यायपालिका की स्वतन्त्रता,संविधान में सं"ाेधन करने की विधि का वर्णन , मौलिक अधिकार व कर्तव्यों की घोषणा आदि वि"ोषताएं होती है संविधानवाद संविधान पर आधारित अवधारणा है। यह एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था है जिसका संचालन उन विधियों और नियमों द्वारा होता है जो संविधान में वर्णित होते हैं। संविधानवाद संविधानिक शासन का आधार व सार दोनों ही हैं। संविधानवाद उसी राजनीतिक व्यवस्था में संभव है जहां संविधान और संविधानिक सरकार दानों हों। संवैधानिक सरकार वह होती है जो संविधान की व्यवस्थाओं के अनुसार संगठित, सीमित और नियन्त्रित हो तथा व्यक्ति वि"ोष की इच्छाओं के स्थान पर कानून के शासन का ही पालन करती है। संवैधानिक सरकार ही संविधान को व्यवहारिक बनाती है और संविधानवाद की स्थापना करती है।

2.7 सूचक शब्द (Key Words)

- **संविधान**–संविधान, मूल सिद्धान्तों एक समुच्चय है, जिससे कोई राज्य या अन्य संगठन अभिशासित होते हैं। वह किसी संस्था को प्रचालित करने के लिये बनाया हुआ संहिता (दस्तावेज) है। यह प्रायः लिखित रूप में होता है।
- **संविधानवाद**–यह विचार कि सरकार की सत्ता संविधान से उत्पन्न होती है तथा इसी से उसकी सीमा भी तय होती है।
- **निर्मित**–जो रचा या बनाया गया हो या जिसका निर्माण हुआ हो या किया गया हो।
- **अधिनायकवाद** –तानाशाही या अधिनायकवाद (डिक्टेटरशिप) उस शासन–प्रणाली को कहते हैं जिसमें कोई व्यक्ति (प्रायः सेनाधिकारी) विद्यमान नियमों की अनदेखी करते हुए डंडे के बल से शासन करता है।
- **न्यायिक पुनरावलोकन**–उस प्रक्रिया को कहते हैं जिसके अन्तर्गत कार्यकारिणी तथा विधायिका के कार्यों की न्यायपालिका द्वारा पुनरीक्षा का प्रावधान हो।
- **अवधारणा**– सुविचारित धारणा। किसी विषय में मन में होने वाला कोई विचार या मत।

2.8 स्वयं मूल्याकंन हेतू प्रश्न (Self Assessment Questions)

1.लिखित संविधान के गुण कौन–कौन से हैं ?

2.अलिखित संविधान के गुण कौन–कौन से हैं

3.कठोर और लचीले संविधानों का भेद क्या हैं ?

4. संविधानवाद के अर्थ और उनकी अवधारणाओं की व्याख्या करो।

2.9 अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answers to check your progress)

1.(अ) सत्य है 2.विधि के शासन . 3.कांग्रेस 4 संविधान,

2.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

Subject : लोक प्रशासन	
Course Code : **PUBA301**	Author **: Dr. Deepak**
Lesson No. **: 2**	Vetter **:Dr.Parveen Sharma**
मौलिक अधिकार, कर्त्तव्य, संघवाद	

अध्याय की सरंचना

2.1 अधिगम उद्देश्य **(Learning Objectives)**

2.2. परिचय **(Introduction)**

2.3. अध्याय के मुख्य बिन्दु

2.3.1. मौलिक अधिकारों को संविधान में रखने का उद्देश्य **(Purpose of including Fundamental Rights in the Constitution)**

2.3.2. मौलिक कर्त्तव्य **(Fundamental Duties)**

2.4 पाठ का आगे का मुख्य भाग **(Further Main Body of the Text)**

2.1.1. संघात्मक सरकार का अर्थ **(Meaning of Federal Government)**

2.1.2. उदेशिका **(Preamble)**

2.5 स्वयं प्रगति जाँच **(Check your progress)**

2.6 सारांश **(Summary)**

2.7 .सूचक शब्द **(Key Words)**

2.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न **(Self- Assessment Questions)**

2.9 उत्तर–स्वयं प्रगति जाँच **(Answers to check your progress)**

2.10सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें **(References / Suggested Readings)**

2.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय में हम निम्नलिखित विषयो के बारे में अध्ययन करेंगे :–

- मौलिक अधिकारों का अध्ययन
- मौलिक कर्त्तव्यों की विस्तृत जानकारी
- संघवाद की प्रकृति का संक्षिप्त विवरण
- संविधान की प्रस्तावना का अध्ययन
- भारतीय संविधान का संक्षिप्त विवरण

2.2. परिचय (Introduction)

राज्य तथा व्यक्ति के आपसी सम्बन्धों की समस्या सदा से ही बहुत अधिक जटिल समस्या रही है और वर्तमान समय की लोकतन्त्रीय व्यवस्था में इस समस्या ने विशेष महत्व प्राप्त कर लिया है। यदि एक ओर शान्ति एवं व्यवस्था बनाए रखने के लिए नागरिकों के जीवन पर राज्य का नियन्त्रण आव"यक है, तो दूसरी ओर राज्य की शक्ति पर भी कुछ सीमाएँ लगाना आव"यक है ताकि राज्य मनमाने तरीके से कार्य करते हुए नागरिकों की स्वतन्त्रता एवं अधिकारों के विरूद्ध कार्य न कर सके। मौलिक अधिकारों की व्यवस्था राज्य की स्वेच्छाचारी शक्ति पर प्रतिबन्ध लगाने का एक श्रेष्ठ उपाय है।

भारतीय संविधा के तीसरे भाग (अनुच्छेद 12–35) में नागरिकों के मौलिक अधिकारों का वर्णन किया गया है। ये वे अधिकार हैं, जो एक व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक तथा नैतिक उन्नति के लिए आव"यक समझे जाते हैं और यह अनुभव किया जाता है कि इनका प्रयोग किए बिना व्यक्ति अपना पूर्ण विकास नहीं कर सकता। इन अधिकारों की व्यवस्था केवल भारतीय संविधान में ही नहीं, संसार के अन्य संविधानों में भी की गई है। संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन, जापान आदि दे"ाों के संविधानों में भी इनका वर्णन किया गया है इसका कारण यह है कि इनकी व्यवस्था लोकतन्त्रीय शासन–प्रणाली के लिए बहुत ही आव"यक है। इन अधिकारों के प्रयोग से ही राज्य में ऐसी परिस्थितियों की स्थापना हो सकती है, जिनमें नागरिक अपना शारीरिक, मानसिक तथा नैतिक विकास कर सकते हैं। लोकतन्त्रीय शासन–प्रणाली में सत्ता बहुसंख्यक दल के हाथों में होती है, जो इसका प्रयोग अपने सदस्यों की भलाई के लिए करता है। नागरिकों द्वारा मौलिक अधिकारों का स्वतन्त्रतापूर्वक प्रयोग ही उसे ऐसा करने से रोक सकता है। **जी.एन. जोशी (G.N. Joshi)** ने लिखा है, ''मौलिक अधिकार ही एक ऐसा साधन है, जिसके द्वारा एक स्वतन्त्र लोकतन्त्रीय राज्य के नागरिक अपने सामाजिक, धार्मिक तथा नागरिक जीवन का आनन्द पा सकते हैं। इन अधिकारों के बिना लोकतन्त्रीय शासन सफलतापूर्वक नहीं चल सकता और बहुमत की ओर से सदा अत्याचार का भय बना रहता है।

2.3. अध्याय के मुख्य बिन्दु (Presentation of Contents)

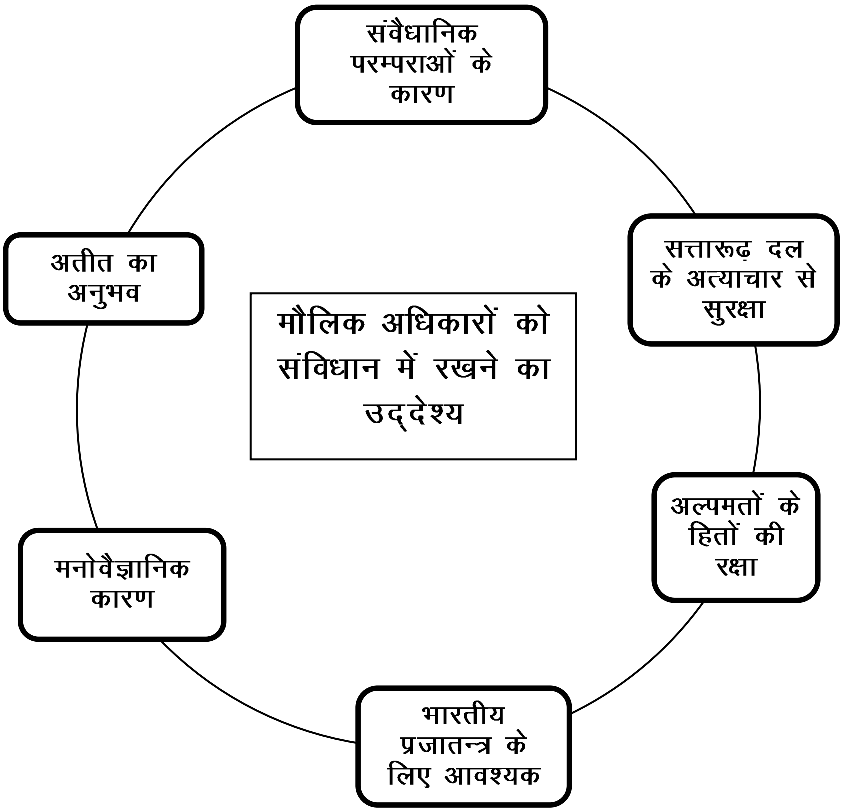

2.3.1. मौलिक अधिकारों को संविधान में रखने का उद्देश्य (Purpose of including Fundamental Rights in the Constitution)

मौलिक अधिकार वे अधिकार हैं, जो व्यक्ति के जीवन के विकास के लिए मौलिक तथा आव"यक होने के कारण संविधान द्वारा नागरिकों को प्रदान किए जाते हैं और जिन अधिकारों के प्रयोग में राज्य द्वारा भी हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता। इन अधिकारों के मौलिक होने का प्रथम कारण यह है कि ये व्यक्ति के पूर्ण मानसिक, भौतिक तथा नैतिक विकास के लिए आव"यक माने जाते हैं और इनके अभाव में उनके व्यक्तित्व का विकास रूक जाएगा। इन अधिकारों को दे"ा के संविधान में स्थान दिया जाता है, ताकि संवैधानिक सं"ाोधन की प्रक्रिया के अतिरिक्त उनमें और किसी प्रकार से परिवर्तन न किया जा सके। दूसरे, मौलिक अधिकार साधारणतः अनुल्लंघनीय होते हैं अर्थात् विधानमण्डल, कार्यपालिका अथवा सत्तारूढ़ दल द्वारा उनका अतिक्रमण नहीं किया जा सकता। अन्त में, मौलिक अधिकार न्याय–संगत (Justiciable) होते हैं अर्थात् न्यायपालिका उनकी रक्षा के लिए उचित कदम उठा सकती है।

मौलिक अधिकारों को संविधान में शामिल करने के निम्नलिखित कारण थे –

1. **संवैधानिक परम्पराओं के कारण (Reasons for the Constitutional Traditions)**– भारतीय संविधान में मौलिक अधिकारों को शामिल करने का एक मुख्य कारण यह था कि संसार के अन्य सभी संविधानों में इन अधिकारों को रखा गया। संयुक्त राजय अमेरिका के संविधान के पहले दस सं"ाोधनों में इन अधिकारों का उल्लेख किया गया है। इसके अतिरिक्त फ्राँस, जापान, स्विट्जरलैण्ड तथा चीन आदि दे"ाों में मौलिक अधिकारों को संविधान में उचित स्थान दिया गया है। इस कारण भारतीय संविधान के निर्माताओं ने भी अपने संविधान में इन अधिकारों को शामिल किया।

2. **अतीत का अनुभव (Past Experience)**– भारतीय संविधान का निर्माण करने वाली संविधान सभा में बहुत से सदस्य ऐसे थे, जिन्होंने भारत के स्वतन्त्रता आन्दोलन में भाग लिया था, ब्रिटि"ा कार्यपालिका के अत्याचार सहे थे और दण्डित हुए थे। अतः वे ऐसी व्यवस्था स्थापित करना चाहते थे, जिसमें कार्यपालिका नागरिकों पर अत्याचार न कर सके। इस कारण भी मौलिक अधिकारों को संविधान में रखा गया।

3. **सत्तारूढ़ दल के अत्याचार से सुरक्षा (Protection from the Tyranny of the Ruling Party)**– मौलिक अधिकारों को संविधान में रखने का एक मुख्य कारण यह भी है कि संविधान के निर्माता नागरिकों को सत्ताधरी दल के अत्याचार से बचाना चाहते थे। इसका अर्थ यह है कि यदि इन अधिकारों में सं"ाोधन करने की प्रक्रिया, कानून निर्माण की प्रक्रिया की तरह साधारण होती तो सत्ताधारी दल इनमें सं"ाोधन करके जनता पर अत्याचार कर सकता था।

4. **मनोवैज्ञानिक कारण (Psychological Reasons)**– संविधान में मौलिक अधिकारों का समावे"ा मनोवैज्ञानिक कारणों से भी किया गया है। इससे नागरिकों में यह भावना पैदा होती है कि उन्हें अपने व्यक्तित्व के विकास के अवसर प्रदान किए गए हैं। इससे नागरिकों में नैतिकता का विकास होता है, अतः उनमें साहस की, अन्यायों के विरूद्ध संघर्ष करने की तथा अपना विकास करने की भावना पैदा होती है। स्पष्ट है कि मौलिक अधिकारों का संविधान में समावे"ा राष्ट्र के चरित्र को उन्नत करता है।

5. **अल्पमतों के हितों की रक्षा (Safeguard of Minorities)**– भारत एक वि"ाल दे"ा है। यहां विभिन्न धर्मों के लोग रहते हैं, जो विभिन्न भाषाएँ बोलते हैं। भले ही दे"ा में संस्कृति का आधार एक ही है, परन्तु सभ्यता में अन्तर होना स्वाभाविक है। ऐसी परिस्थिति में कहीं बहुसंख्यक अपने बहुमत के आधार पर कोई वस्तु अल्पमतों पर न थोपें, इसलिए मौलिक अधिकारों को संविधान में रखा गया। अल्पमतों को धर्म की स्वतन्त्रता का अधिकार (Right to Freedom of Religion), सांस्कृतिक तथा "िाक्षा सम्बन्धी अधिकार (Cultural and Educational Rights) आदि प्रदान किए गए।

6. **भारतीय प्रजातन्त्र के लिए आवश्यक (Necessary for Indian Democracy)**– भारत काफी समय तक ब्रिटि"ा सरकार के अधीन रहा है, जिससे यहाँ प्रजातन्त्रीय संस्थाओ का विकास नहीं हो सका। लोकतन्त्रीय शासन–प्रणाली को सफल बनाने के लिए लोकतन्त्रीय परम्पराओं का होना अति आव"यक है। ऐसी स्थिति में मौलिक अधिकारों को सरकार के हाथों में रखना उचित नहीं था। इसलिए मौलिक अधिकारों को संविधान में रखना आव"यक हो गया, ताकि कोई सत्ताधारी दल इन अधिकारों का उल्लंघन न कर सके।

मौलिक अधिकारों की विशेषताएँ (लक्षण) (Features Characteristics of Fundamental Rights) – भारतीय संविधान में दिए गए मौलिक अधिकारो की मुख्य वि"ोषताएँ निम्नलिखित हैं –

1. **विस्तृत तथा जटिल (Elaborate and Complex)**– भारतीय संविधान में दिए गए मौलिक अधिकार बहुत ही विस्तृत तथा जटिल हैं। विस्तृत होने का मुख्य कारण यह है कि प्रत्येक अधिकार को विस्तारपूर्वक लिखा गया है और उनके हर भाग को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया है। इसके अतिरिक्त ये जटिल इस कारण से हैं कि प्रत्येक अधिकार पर प्रतिबन्ध और सीमा भी नि"चत की गई हैं; जैसे अनुच्छेद 19 में नागरिकों को 6 प्रकार की स्वतन्त्रताएँ प्रदान की गई है परन्तु इसी अनुच्छेद के अलग–अलग प्रावधानों में उन प्रतिबन्धों का वर्णन किया गया है, जिसके अन्तर्गत सरकार इन अधिकारों के उपयोग पर आव"यकतानुसार प्रतिबन्ध लगा सकती है।

2. **सरकारों तथा सरकारी संस्थाओं पर प्रतिबन्ध (Restrictions on the Governments and governmental Authorities)**– मौलिक अधिकारों के अध्याय में उन उपबन्धों का भी वर्णन है, जो राज्य की शक्ति पर प्रतिबन्ध लगाते हैं। अनुच्छेद 18 राज्य को आज्ञा देता है कि वह किसी नागरिक को "िक्षा या सेना सम्बन्धी उपाधि के सिवाय और उपाधि प्रदान न करे। इसके अतिरिक्त संविधान के अनुच्छेद 13(2) में भी यह स्पष्ट व्यवस्था है कि ''राज्य किसी ऐसे कानून का निर्माण नहीं करेगा जो संविधान के तृतीय भाग में दिए गए मौलिक अधिकारों को समाप्त करता है या घटाता है। यदि कोई ऐसा कानून बनाया जाएगा तो वह कानून उस सीमा तक रद्द समझा जाएगा, जिस सीमा तक इस धारा की अवहेलना करता है।''

3. **अधिकार निरंकुश नहीं (Rights are not Absolute)**– हमारे संविधान द्वारा प्रदान किए गए मौलिक अधिकार पूर्ण और निरंकु"ा नहीं है। प्रत्येक अधिकार के साथ–साथ उन पर प्रतिबन्ध भी लगाए गए हैं। कुछ अधिकारों पर तो ये सीमाएँ ओर प्रतिबन्ध संविधान द्वारा ही नि"चत कर दिए गए हैं और कुछ पर संसद को आव"यकतानुसार प्रतिबन्ध लगाने का अधिकार प्रदान किया गया है।

4. **नागरिकों तथा विदेशियों में भेद करना (Distinction between Citizens and Aliens)**– मौलिक अधिकारों के उपभोग में नागरिकों और विदे"ियों में भेद रखा गया है। कानून के सामने समानता तथा धार्मिक स्वतन्त्रता जैसे अधिकार तो दे"ा में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति को प्रदान किए गए हैं, चाहे वह नागरिक हो या

विदे"ाी, परन्तु कई अधिकार केवल दे"ा के नागरिकों को ही प्राप्त हैं; जैसे भाषण देने तथा एकत्र होने की स्वतन्त्रता। विदे"ाियों को ऐसे अधिकार प्रदान नहीं किए जाते।

5. **संविधान के अतिरिक्त और अधिकारों का न होना (No Rights outside the Constitution)**– हमारे दे"ा के संविधान द्वारा किए गए मौलिक अधिकारों का विस्तारपूर्वक वर्णन संविधान के तीसरे भाग में किया गया है। नागरिकों को इस भाग में दिए गए अधिकारों के अतिरिक्त अन्य कोई ऐसे अधिकार प्राप्त नहीं, जिन्हें मौलिक माना जा सकता है।

6. **साधारण व्यक्तियों तथा संस्थाओं पर प्रभाव होना (Effect on Private Individuals and Organisations)**– संविधान में दिए गए मौलिक अधिकारों का प्रभाव सरकार तथा सरकारी संस्थाओं के अतिरिक्त गैर–सरकारी व्यक्तियों और संस्थाओं पर भी है; जैसे छुआछूत को असंवैधानिक घोषित किया गया है।

7. **अधिकारों का निलम्बन (Suspension of Rights)**– संविधान निर्माता जानते थे कि मौलिक अधिकार नागरिकों को केवल साधारण परिस्थितियों में ही दिए जा सकते हैं, इसलिए उन्होंने संकटकाल के समय दे"ा के व्यापक हितों को सुरक्षित रखने के लिए इन अधिकारों के निलम्बित किए जाने की व्यवस्था भी की है। संकटकाल में राष्ट्रपति की घोषणा द्वारा अनुच्छेद 19 के अन्तर्गत प्रदान किया गया स्वतन्त्रता का अधिकार स्थगित किया जा सकता है। इसी प्रकार राष्ट्रपति नागरिकों का न्यायपालिका की शरण लेने का अधिकार भी निलम्बित कर सकता है। लेकिन संविधान के अनुच्छेद 359 के अन्तर्गत यह स्पष्ट व्यवस्था की गई है कि अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत दी गई जीवन एवं निजी स्वतन्त्रता की सुरक्षा का अधिकार संकटकाल में भी स्थगित नहीं किया जा सकता।

8. **संसद को मौलिक अधिकारों को संशोधन करने की शक्ति (Parliament's Power to amend Fundamental Rights)**– संविधान के अन्तर्गत संसद को मौलिक अधिकारों में सं"ाोधन करने की शक्ति भी प्राप्त है, जिसके लिए उसे राज्यों की विधानसभाओं की स्वीकृति नहीं लेनी पड़ती। गोलकनाथ के प्रसिद्ध मुकद्मे में सर्वोच्च न्यायालय ने संसद की इस शक्ति को नहीं माना, परन्तु संविधान इस बारे में स्पष्ट नहीं।

9. **नकारात्मक तथा सकारात्मक अधिकार (Negative and Positive Rights)**– भारतीय संविधान में दिए गए मौलिक अधिकार नकारात्मक तथा सकारात्मक दोनों प्रका के हैं। नकारात्मक अधिकार निषेधों की तरह हैं, जो सरकार की शक्ति पर प्रतिबन्ध लगाते हैं। उदाहरणस्वरूप, साधारण काल में सरकार कोई ऐसा कार्य नहीं करेगी जिससे कि नागरिकों की स्वतन्त्रता पर किसी प्रकार का आघात हो।

मौलिक अधिकारों का वर्गीकरण (Classification of Fundamental Rights)– भारतीय संविधान में नागरिकों के मौलिक अधिकारों का वर्णन संविधान के तीसरे भाग (अनुच्छेद 12–35) में किया गया है। इन अनुच्छेदों में अनुच्छेद 12, 13, 33, 34 तथा 35 का सम्बन्ध अधिकारों के सामान्य रूप से है।

अनुच्छेद 12 में 'राज्य' शब्द की परिभाषा की गई है, जिसके अर्थ में केन्द्रीय कार्यपालिका, संसद, राज्यों की सरकारों और विधानसभाओं के अतिरिक्त भारत के क्षेत्र में स्थित सभी स्थानीय सरकारें तथा अन्य विभाग सम्मिलित हैं, जिन पर भारत सरकार का नियन्त्रण स्थापित है। इस प्रकार 'राज्य' शब्द का बहुत व्यापक अर्थ लिया गया है, जिसमें सरकार का प्रत्येक विभाग आ जाता है, चाहे वह कार्यपालिका है या विधानपालिका, केन्द्रीय है या प्रान्तीय। इन सबको मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करने की मनाही की गई है।

44वें सं"ाोधन के पास होने से पूर्व संविधान में दिए मौलिक अधिकारों को प्रायः सात श्रेणियों में बांटा गया था, परन्तु इस सं"ाोधन के अनुसार, 'सम्पति के अधिकार' (Right to property) को मौलिक अधिकारों के अध्याय से निकालकर एक कानूनी अधिकार बना दिया गया है। इस प्रकार अब भारतीय नागरिकों को निम्नलिखित छः मौलिक अधिकार प्राप्त है –

क. समानता का अधिकार (Right to Equality)

ख. स्वतन्त्रता का अधिकार (Right to Freedom)

ग. शोषण के विरुद्ध अधिकार (Right against Exploitation)

घ. धार्मिक स्वतन्त्रता का अधिकार (Right to Freedom of Religion)

ड. सांस्कृतिक तथा f"ाक्षा–सम्बन्धी अधिकार (Cultural and Educational Rights)

च. संवैधानिक उपचारों का अधिकार (Right to Constitutional Remedies)

क. समानता का अधिकार (Right to Equality)

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14–18 में समानता के अधिकारों का वर्णन किया गया है। जब संविधान सभा ने संविधान बनाया तो संविधान निर्माताओं ने सबसे पहले समानता के अधिकारों को रखा क्योंकि प्रकृति के नियम के अनुसार प्रत्येक मनुष्य को समाज में समान अधिकार प्राप्त है। इसलिए संविधान निर्माताओं ने भी समानता के अधिकारों को रखा। इन अधिकारों का विवरण निम्नलिखित है :–

1. **कानून के समक्ष समानता** –अनुच्छेद 14 (Equality before Law – Article 14)– संविधान के अनुच्छेद 14 के अनुसार ''भारत के राज्य क्षेत्र में राज्य किसी भी व्यक्ति को कानून के समक्ष समानता और कानून के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा।

2. **धर्म, नस्ल, जाति, लिंग अथवा जन्म–स्थान के आधार पर भेदभाव की मनाही** (Prohibition of Discrimination on grounds of Relgion, Race, Caste, Sex, Place of Birth or any of them – Article 15)– अनुच्छेद 15 के अनुसार यह व्यवस्था की गई है कि राज्य किसी नागरिक के साथ उसके धर्म, नस्ल, जाति, लिंग अथवा जन्म–स्थान आदि के आधार पर किसी प्रकार का भेदभाव नहीं करेगा।

3. **सरकारी नौकर पाने का समान अवसर – अनुच्छेद 16** (Equality of Opportunity in Matters of Public Employment – Article 16) – अनुच्छेद 16 के अनुसार सभी नागरिकों को सरकारी नौकरी पाने के समान अवसर प्राप्त होंगे और इस सम्बन्ध में धर्म, वं"ा, जाति, लिंग तथा जन्म स्थान या इनमें से किसी के आधार पर सरकारी नौकरी या पद प्रदान करने में भेदभाव नहीं किया जाएगा।

4. **छुआछूत की समाप्ति – अनुच्छेद 17** (Abolition of Untouchability – Article 17) – अनुच्छेद 17 के द्वारा छुआछूत को समाप्त कर दिया है। सन् 1955 में संसद के द्वारा 'अस्पृ"यता अपराध अधिनियम (Untouchability Offence Act) पास किया, जो समस्त भारत पर लागू होता है।

5. **उपाधियों का अन्त–अनुच्छेद 18** (Abolition of Titles – Article 18) – अनुच्छेद 18 में यह कहा गया है कि राज्य सैनिक अथवा "िाक्षा सम्बन्धी उपाधियों को छोड़कर अन्य किसी प्रकार की उपाधि प्रदान नहीं करेगी।

ख. स्वतन्त्रता का अधिकार – अनुच्छेद, 19 से 22 तक (Right to Freedom – Articles, 19 to 22)– संविधान में स्वतन्त्रता के अधिकार का वर्णन अनुच्छेद 19 से 22 तक किया गया है। सामूहिक रूप से चारों ही अनुच्छेद व्यक्ति–स्वतन्त्रता के अधिकार पत्र हैं और मौलिक अधिकारों से सम्बन्धित अध्याय का मुख्य आधार है। इस प्रकार ये अधिकार 'मौलिक अधिकारों की आत्मा' हैं, क्योंकि इन अधिकारों के बिना अन्य अधिकारों का कोई महत्व नहीं रहता। इन अधिकारों के आधार पर ही प्रजातन्त्रीय समाज की कल्पना की जा सकती है। इस विषय में पायली (Paylee) महोदय का कथन महत्वपूर्ण है। उन्होंने कहा है, ''संविधान निर्माताओं ने इन अधिकारों को मौलिक अधिकारों के अध्याय में शामिल करके ठीक ही किया है तथा इस प्रकार प्रजातन्त्रीय समाज के विकास में सहायता की है।''

1. **अनुच्छेद 19 के द्वारा निम्नलिखित 6 प्रकार के स्वतन्त्रताएँ प्रदान की गई हैं–**

क. भाषण तथा लेखन की स्वतन्त्रता (Freedom of Speech and Expression)

ख. शान्तिपूर्वक तथा बिना शस्त्रों के इकट्ठा होने की स्वतन्त्रता (Freedom to Assemble Peacefully and without Arms)

ग. संघ तथा समुदाय बनाने की स्वतन्त्रता (Freedom to form Associations and Unions)

घ. भारत के किसी भी क्षेत्र में आने–जाने की स्वतन्त्रता (Freedom to Move freely throughout the Territory of India)

ड. भारत के किसी भी भाग में रहने या निवास करने की स्वतन्त्रता (Freedom of Reside and Settle in any part of the Territory of India)

च. कोई भी व्यवसाय करने, पे"ाा अपनाने या व्यापार करने की स्वतन्त्रता (Freedom to Practise any Profession or Carry on any Occupation, Trade or Business).

2. **अपराध की दोश सिद्धि के विशय में संरक्षण (अनुच्छेद 20)** (Protection in Respect of Conviction for offence (Art 20)) – अनुच्छेद 20 में कहा गया है, ''किसी व्यक्ति को उस समय तक अपराधी नहीं ठहराया जा सकता जब तक कि उसने अपराध के समय में लागू किसी कानून का उल्लंघन न किया हो।'' इसके साथ ही एक अपराध के लिए व्यक्ति को एक ही बार दण्ड दिया जा सकता है और किसी अपराध में अभियुक्त व्यक्ति को स्वयं अपने विरुद्ध गवाही देने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता।

3. **व्यक्तिगत स्वतन्त्रता तथा जीवन की सुरक्षा का अधिकार (अनुच्छेद 21)** (Right to Protection of Life and Personal Liberty (Art, 21) – प्रत्येक प्रजातन्त्रिक संवैधानिक व्यवस्था में व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का होना अनिवार्य है। ब्रिटेन में व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का आधार कानून का शासन (Rule of Law) है। भारत में व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की व्यवस्था अनुच्छेद 21 में स्पष्ट की गई है।

4. **बन्दीकरण की अवस्था में संरक्षण का अधिकार (अनुच्छेद 22)** (Right to Protection against Arrest and Detention in certain Cases (Article 22) –संविधान के अनुच्छेद 22 के द्वारा गिरफ्तारी एवं बन्दीकरण की अवस्था में व्यक्ति को निम्नलिखित सुरक्षाएँ प्रदान की गई हैं –

क. किसी भी व्यक्ति को उसके अपराध या बन्दी के कारणों को बताए बिना गिरफ्तार नहीं किया जा सकता।

ख. गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को 24 घण्टे के अन्दर मजिस्ट्रेट के सामने पे"ा करना आव"यक है।

ग. बिना मजिस्ट्रेट की आज्ञा के बन्दी को जेल में नहीं रखा जा सकता।

घ. बन्दी को कानूनी सलाह प्राप्त करने का पूरा अधिकार है।

ग. भोशण के विरुद्ध अधिकार – अनुच्छेद, 23–24 (Right against Exploitation – Article, 23-24)–

1. **मानवीय व्यापार तथा बलपूर्वक मजदूरी का निशेध** (Prohibition of Traffic in human beings and forced labour) – संविधान के अनुच्छेद 23 के अनुसार मानव के क्रय–विक्रय (Traffic in Human Beings) तथा बेगार अथवा किसी से जबरदस्ती काम करवाने की मनाही कर दी गई है और इसका उल्लंघन करना विधि के अनुसार दण्डनीय अपराध है। दूसरे शब्दों में व्यक्तियों के शोषण की मनाही की गई है। भारत में अनेक शताब्दियों से किसी–न–किसी रूप में दासता की प्रथा विद्यमान थी, जिसके अनुसार गरीबों, मजदूरों तथा स्त्रियों आदि पर विभिन्न प्रकार के अत्याचार किए जाते थे। नए संविधान के अन्तर्गत शोषण के इन सभी रूपों को कानून के अनुसार दण्डनीय घोषित कर दिया गया है।

2. **कारखानों आदि में बच्चों को लगाने की मनाही** (Prohibition of Employement of Children in factories etc.) – अनुच्छेद 24 में कहा गया है कि 14 वर्ष से कम आयु के किसी बच्चे को किसी भी कारखाने, खान या अन्य किसी ऐसे जोखिम वाले काम पर नहीं लगाया जा सकता। भारत के विभिन्न भागों में शोषण का एक रूप बंधुआ मजदूरों (Bonded Labour) के रूप में प्रचलित था, जिसे समाप्त करने के लिए सरकार के द्वारा कुछ कदम उठाए गए हैं। इस प्रकार शोषण के विरुद्ध अधिकार का उद्दे"य एक वास्तविक सामाजिक लोकतन्त्र की स्थापना करना है।

घ. धार्मिक स्वतन्त्रता का अधिकार – अनुच्छे, 25–28 (Right to Freedom of Religion – Article, 25-28) –

1. **किसी भी धर्म को मानने तथा प्रचार करने की स्वतन्त्रता** (Freedom to protest and practice any religion) – अनुच्छेद 25 में यह कहा गया है कि सार्वजनिक अनु"ाासन, नैतिकता तथा स्वास्थ्य के नियमों को ध्यान में रखते हुए सभी व्यक्तियों को अपनी इच्छानुसार किसी भी धर्म को मानने, उसका पालन करने तथा प्रचार करने का अधिकार होगा; जैसे सिक्खों को कृपाण धारण करने का भी अधिकार है परन्तु यहाँ यह उल्लेखनीय है कि धर्म की आड़ में यदि कोई आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक कार्य किया जाता है, तो सरकार को उस पर नियन्त्रण रखने तथा उसके सम्बन्ध में अधिनियम बनाने का पूरा अधिकार होगा। राज्य को सामाजिक कल्याण तथा सुधारों के हित में अनुसूचित जातियों व जनजातियों को मन्दिर आदि में प्रवे"ा करने के लिए कानून बनाने तथा हिन्दू धार्मिक संस्थाओं में समस्त हिन्दू वर्ग (जिसमें सिक्ख, जैन तथा बौद्ध आदि मत भी शामिल हैं) के प्रवे"ा के अधिकार सम्बन्धी नियम बनाने का अधिकार होगा।

2. **धार्मिक मामलों के प्रबंध की स्वतन्त्रता** (Freedom to manage religious affairs) – अनुच्छेद 26 के अनुसार सार्वजनिक व्यवस्था, नैतिकता तथा स्वास्थ्य के नियमों को ध्यान में रखते हुए प्रत्येक धार्मिक सम्प्रदा

अथवा उसके किसी भाग को धर्म अथवा दान सम्बन्धी उद्दे"य के लिए संस्थाएँ स्थापित करने तथा उन्हें चलाने, धर्म के मामलों में अपने कार्यों का स्वयं प्रबन्ध करने, चल तथा अचल सम्पत्ति को प्राप्त करने तथा कानून के अनुसार उस सम्पत्ति का प्रबंध करने का अधिकार होगा।

3. **धार्मिक व्यय के लिए निश्चित की की अदायगी की छूट** (Freedom as to payment of taxes for promotion of any particular religion) – अनुच्छेद 27 में कहा है कि किसी भी व्यक्ति को किसी वि"ोष धर्म अथवा धार्मिक संस्था के लिए चन्दा अथवा टैक्स देने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता और सरका द्वारा न ही कोई ऐसा टैक्स लगाया जा सकता है, जिससे प्राप्त आय किसी धर्म वि"ोष के लिए खर्च की जाने वाली हो।

4. **राजकीय शिक्षण संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा पर अंकुश** (Check on religious instructions in Government Institutions) – अनुच्छेद 28 के अनुसार राज्य के द्वारा स्थापित किसी भी f"ाक्षा संस्था में किसी प्रकार की धार्मिक f"ाक्षा नहीं दी जा सकती और उन f"ाक्षा संस्थाओं में जो सरकार से आर्थिक सहायता लेती हैं। किसी भी विद्यार्थी को उसकी इच्छा के विरुद्ध धार्मिक f"ाक्षा ग्रहण करने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता है।

ङ. सांस्कृतिक तथा शिक्षा–सम्बन्धी अधिकार – अनुच्छेद, 29–30 (Cultural and Educational Rights – Article, 29-30)– भारत भिन्न–भिन्न भाषाओं तथा संस्कृतियों को अपनाने वाले लोगों का दे"ा है, इसलिए संविधान के अनुसार अल्पसंख्यक की भाषा तथा संस्कृति आदि के मामलों में रक्षा की गई है।

1. **अल्पसंख्यकों के अधिकारों की सुरक्षा (Protection of interest of Minorities)**– अनुच्छेद 29 के द्वारा नागरिकों के प्रत्येक समूह को, जो भारत की धरती पर रहता है तथा जिसकी अपनी नि"चत भाषा (Language), लिपि (Script) तथा संस्कृति (Culture) है, अपनी भाषा, लिपि तथा संस्कृति को सुरक्षित रखने का पूर्ण अधिकार होगा। इसके अतिरिक्त इस अनुच्छेद में यह भी कहा गया है कि किसी भी राजकीय अथवा राज्य से आर्थिक सहायता प्राप्त करने वाली f"ाक्षा संस्था में किसी भी विद्यार्थी को केवल भाषा, धर्म, जाति तथा वं"ा या इनमें से किसी एक के आधार पर प्रवे"ा पाने से नहीं रोका जा सकता है।

2. **भौक्षणिक संस्थाओं की स्थापना तथा उनका प्रबंध करने का अल्पसंख्यकों को अधिकार** (Right to Minorities to establish and administer educational institutions) – अनुच्छेद 30 के अनुसार धर्म या भाषा पर आधारित सभी अल्पसंख्यक वर्गों को अपनी इच्छानुसार f"ाक्षा संस्थाएँ स्थापित करने तथा उन्हें चलाने या प्रबंध करने का अधिकार होगा। इस धारा में यह भी कहा गया है कि राज्य द्वारा f"ाक्षा संस्थाओं को सहायता देते समय किसी f"ाक्षा संस्था के प्रति इस आधार पर भेदभाव नहीं किया जाएगा कि वह अल्पसंख्यकों के प्रबन्ध के अधीन है, चाहे वह अल्पसंख्यक भाषा के आधार पर हों अथवा धर्म के आधार पर।

च. संवैधानिक उपचारों का अधिकार – अनुच्छेद, 32 (Right to Constitutional Remedies-Article, 32)– भारतीय संविधान द्वारा नागरिकों के मौलिक अधिकारों की केवल घोषणा ही नहीं की गई है, वरन् उनको लागू करने के लिए भी उचित उपाय किए गए हैं।

अनुच्छेद 32 अनुसार नागरिकों को यह अधिकार है कि यदि कोई उनके अधिकारों को छीनने का प्रयत्न करता है, चाहे वह सरकार ही क्यों न हो, तो वे उच्चतम न्यायालय अथवा सर्वोच्च न्यायालय में जाकर उसके विरूद्ध न्याय की मांग कर सकते हैं। केन्द्रीय संसद अथवा कोई राज्य विधानमण्डल यदि इन मौलिक अधिकारों के उल्लंघन में कोई कानून बना देता है, तो सर्वोच्च न्यायालय को उसे अवैध घोषित कर रद्द करने का अधिकार है। यह धारा संविधान के इस अध्याय की सबसे महत्वपूर्ण धारा है, क्योंकि इसके बिना सभी मौलिक अधिकार निरर्थक हो जाते हैं। संविधान के निर्माण के समय इस अनुच्छेद की प्र"ांसा करते हुए डॉ0 बी.आर. अम्बेडकर (Dr. B.R. Ambedkar) ने संविधान सभा में कहा था।

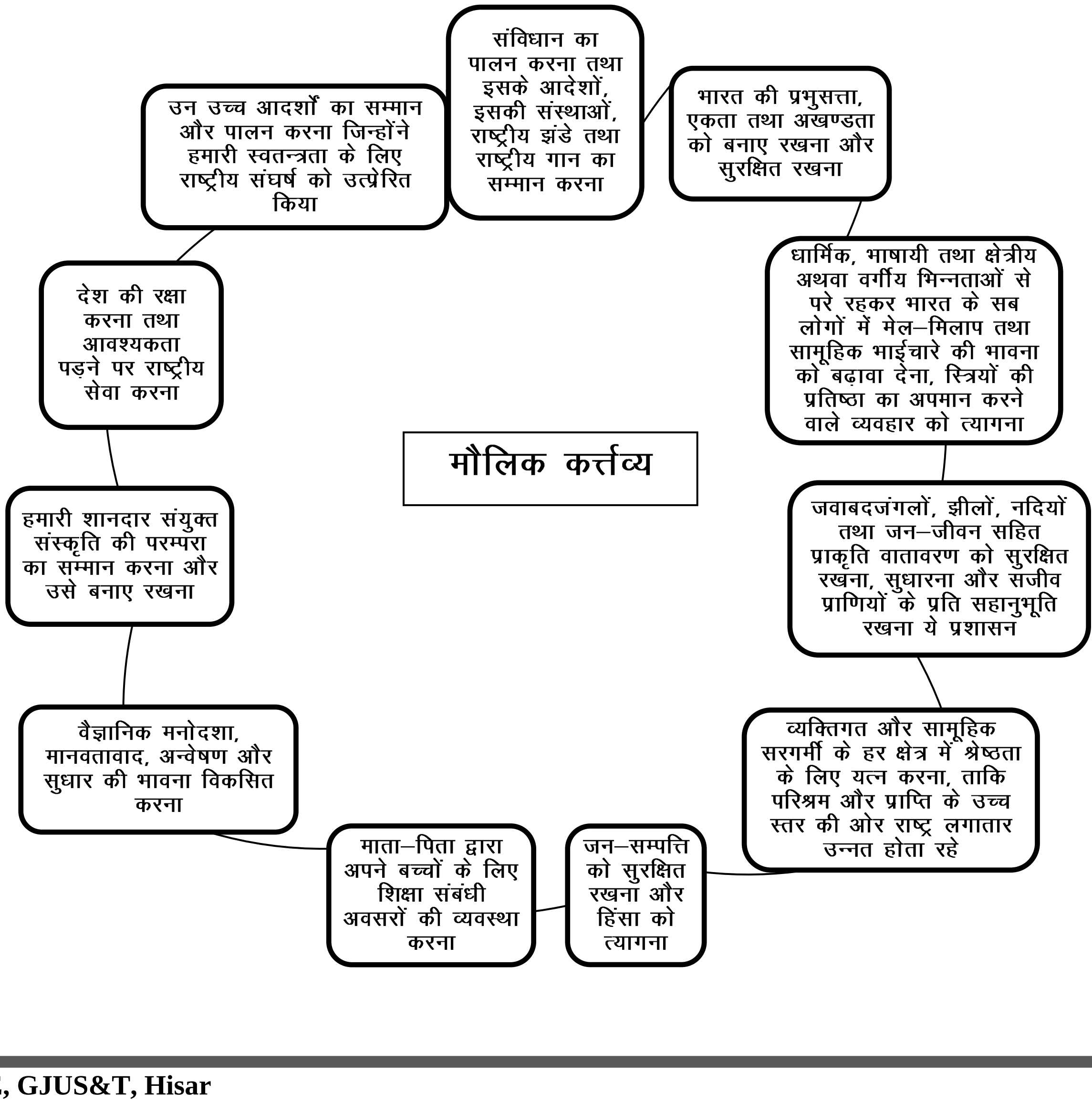

2.3.2. मौलिक कर्त्तव्य (Fundamental Duties)

संविधान के 42वें सं”ोधन द्वारा सन् 1976 में नागरिकों के मौलिक कर्त्तव्यों का एक नया अध्याय चतुर्थ–ए (Part IV-A) संविधान में शामिल कर दिया गया। इस भाग में केवल एक ही अनुच्छेद (51-A) है, जिसमें नागरिकों के दस मौलिक कर्त्तव्यों का वर्णन किया गया है। यद्यपि यहाँ यह उल्लेखनीय है कि दिसम्बर, 2002 में 86वें संवैधानिक सं”ोधन द्वारा प्रत्येक माता–पिता या संरक्षकों के लिए अपने 6 से 14 वर्ष तक की आयु के बच्चों के लिए ि”ाक्षा प्रदान करने संबंधी उचित सुविधाएँ एवं अवसर उपलब्ध करवाने संबंधी कर्त्तव्य को नि”चत करने के बाद मौलिक कर्त्तव्यों की संख्या 11 हो गई है।

नागरिकों के मौलिक कर्त्तव्य (Fundamental Duties of the Citizens)

1. **संविधान का पालन करना तथा इसके आदेशों, इसकी संस्थाओं, राश्ट्रीय झंडे तथा राश्ट्रीय गान का सम्मान करना** (To abide by the Constitution and respect its ideals and Institutions, the National Flag and the National Anthem) – संविधान के आद”ों में राष्ट्रीय प्रभुसत्ता, धर्म–निरपेक्षता, राष्ट्रीय एकता तथा अखण्डता, लोकतन्त्र आदि वे सब आद”ा आ जाते हैं, जो हमारे संविधान की आधारि”ाला हैं। एक अच्छे नागरिक का यह कर्त्तव्य बन जाता है कि वह इन सबका सम्मान करे और सरकार की विभिन्न संस्थाओं और उनके द्वारा बनाए गए नियमों का पालन करे ताकि दे”ा का शासन ठीक से और बिना किसी अडचन के चल सके।

2. **उन उच्च आदर्शों का सम्मान और पालन करना जिन्होंने हमारी स्वतन्त्रता के लिए राश्ट्रीय संघर्श को उत्प्रेरित किया** (To Cherish and Follow the Noble Ideals which inspired our National Struggle for Freedom) – हमारे दे”ा में स्वतन्त्रता संग्राम कुछ आद”ों को लेकर चलाया गया था, जिनका आज के स्वतन्त्र भारत में भी उतना ही महत्व है। इसलिए यह आव”यक समझा गया है कि प्रत्येक नागरिक इन आद”ों को अपनाए तथा इनका सम्मान करे और इस प्रकार राष्ट्र के विकास और पुनः स्थापना में सहायक हो। इन आद”ों में अहिंसा, बन्धुत्व, धर्म–निरपेक्षता तथा राष्ट्रीय एकता आदि आद”ा सम्मिलित है।

3. **भारत की प्रभुसत्ता, एकता तथा अखण्डता को बनाए रखना और सुरक्षित रखना** (to uphold and protect the Sovereignty, Unity and Integrity of India) – इस कर्त्तव्य को संविधान में सम्मिलित करने का उद्दे”य ऐसे तत्वों को अस्वीकार करना और रद्द करना है, जो क्षेत्रीय धारणाओं को महत्व देते हुए भारतीय एकता को अस्वीकार करते हैं और इस प्रकार राष्ट्रीय हितों को हानि पहुँचाते हैं।

4. **देश की रक्षा करना तथा आवश्यकता पड़ने पर राश्ट्रीय सेवा करना** (To Defend the Country and Render National Service when called upon to do so) – ये मौलिक कर्त्तव्य संविधान में सम्मिलित करके नागरिकों को राष्ट्रीय सेवा के कार्य के साथ सम्बद्ध कर दिया गया है। रूस जैसे दे”ा में हर नागरिक के

लिए कुछ समय के लिए अनिवार्य सैनिक सेवा एक मौलिक कर्त्तव्य के तौर पर संविधान में लिखा गया है। 42वें सं"ोधन के अन्तर्गत राष्ट्रीय सेवा शब्द का प्रयोग किया गया है, जिसका अर्थ केवल सैनिक सेवा ही नहीं, बल्कि किसी भी प्रकार की ऐसी सेवा है, जिसका उद्दे"य राष्ट्रीय हित में हो।

5. **धार्मिक, भाषायी तथा क्षेत्रीय अथवा वर्गीय भिन्नताओं से परे रहकर भारत के सब लोगों में मेल–मिलाप तथा सामूहिक भाईचारे की भावना को बढ़ावा देना, स्त्रियों को प्रतिष्ठा का अपमान करने वाले व्यवहार को त्यागना** (To promote harmony and the spirit of common brotherhood among all the people of India transcending religious, linguistic and regional or sectional diversities, to renounce practices derogatory to the dignity of women) – इस कर्त्तव्य का उद्दे"य भारत में रहने वाले लोगों में भिन्नताओं के स्थान पर आपसी मेल–मिलाप और भ्रातृत्व की भावना पैदा करके राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देना है। इसके अतिरिक्त स्त्रियों की प्रतिष्ठा को सुरक्षित रखना बिल्कुल भारतीय सभ्यता के अनुकूल है।

6. **हमारी शानदार संयुक्त संस्कृति की परम्परा का सम्मान करना और उसे बनाए रखना** (To value and preserve the rich heritage of our composite culture) – अंग्रेजों के शासनकाल में भारतीय संस्कृति को नष्ट करने का हर सम्भव प्रयत्न किया गया था। प"िचमी सभ्यता की तड़क–भड़क तथा "िाक्षा के प्रभाव ने भारतीयों को प"िचम के दास बनाकर रख दिया था। स्वतन्त्रता–प्राप्ति के बाद भी ये प्रभाव कम नहीं हुए। अब हर नागरिक का यह कर्त्तव्य बना दिया गया है कि वह दे"ा की शानदार संस्कृति का सम्मान करे और उसे समृद्ध बनाने का यत्न करे।

7. **जंगलों, झीलों, नदियों तथा जन–जीवन सहित प्राकृति वातावरण को सुरक्षित रखना, सुधारना और सजीव प्राणियों के प्रति सहानुभूति रखना** (To protect and Improve the Natural Environment Including Forests, Lakes and wild life and to have compassion for living creatures) – ये मौलिक कर्त्तव्य संविधान में सम्मिलित करके भारतीय नागरिकों को प्रकृति के साथ सम्बद्ध कर दिया गया है। पर्यावरण को शुद्ध बनाने का कर्त्तव्य नागरिक का मुख्य कर्त्तव्य माना गया है। पर्यावरण संरक्षण के साथ–साथ वन्य प्राणियों तथा अन्य सभी प्राणियों के प्रति सहानुभूतिपूर्वक व्यवहार मानव का मुख्य कर्त्तव्य माना गया है।

8. **वैज्ञानिक मनोदशा, मानवतावाद, अन्वेषण और सुधार की भावना विकसित करना** (To develop the Scientific temper, Humanism, the Spirit of Investigation and Reform) – इस कर्त्तव्य का उद्दे"य भारत के लोगों को यह प्रेरणा देना है कि वे अन्धवि"वास को समाप्त करके अपने दृष्टिकोण को जागरूक और तर्कसंगत बनाएँ। उनमें मानवतावाद जागृत हो और वे सुधारवादी रवैया अपनाएँ, ताकि राष्ट्र उन्नति की ओर बढ़ता रहे। यह कर्त्तव्य भारतीयों मे उदारवादी भावना और विचारधारा उत्पन्न करने वाला है।

9. जन–सम्पत्ति को सुरक्षित रखना और हिंसा को त्यागना (To safeguard the Public Property and to adjure Vilolence) – गत वर्षों में हमारे दे"ा में तोड़–फोड़ की गतिविधियाँ इतना जोर पकड़ गई कि सार्वजनिक सम्पत्ति का नित्य ना"ा होने लगा। जगह–जगह हुल्लड़बाजी, हिंसात्मक विद्रोह, बसों तथा इमारतों आदि को तोड़ना एवं आग लगाना नित्य दिन के समाचार बन गए। इस प्रकार की गतिविधयाँ राष्ट्रीय हितों के लिए बहुत हानिकारक हैं। इस कर्त्तव्य द्वारा नागरिकों को ऐसी दे"ा–द्रोही और जन–सम्पत्ति के लिए हानिकारक गतिविधियों को त्यागने का आदे"ा दिया गया है, ताकि सामाजिक जीवन शान्तिमय बन सके। रूस जैसे दे"ा में जन–सम्पत्ति का ना"ा करने वालों के लिए बहुत कड़ी सजा नि"चत की गई है।

10. व्यक्तिगत और सामूहिक सरगर्मी के हर क्षेत्र में श्रेष्ठता के लिए यत्न करना, ताकि परिश्रम और प्राप्ति क उच्च स्तर की ओर राश्ट्र लगातार उन्नत होता रहे (To Strive towards Excellence in all spheres of Individual and Collective Activity so that our Nation Constantly Rises to Higher levels of Endeavour and Achievement) – इस कर्त्तव्य द्वारा लोगों में यह प्रेरणा विकसित करने का प्रयत्न किया गया है कि वे सामूहिक तौर पर, आपसी भिन्नताओं और मतभेदों की ओर ध्यान न देकर राष्ट्रीय उन्नति के पवित्र कार्य में जुटे रहें।

11. माता–पिता द्वारा अपने बच्चों के लिए शिक्षा संबंधी अवसरों की व्यवस्था करना (To provide opportunities concerning the education of children by their parents) – 86वें संविधान सं"ोधन अधिनियम, 2002 के द्वारा संविधान के चौथे भाग में अनुच्छेद 51–ए में सं"ोधन करके एक अन्य अनुच्छेद 51-K जोड़कर एक अन्य मौलिक कर्त्तव्य को शामिल किया गया। इसके अंतर्गत यह व्यवस्था की गई है कि 6 वर्ष से 14 वर्ष तक की आयु के बच्चों के माता–पिता या अभिभावकों अथवा संरक्षकों का यह दायित्व बनता है कि वह अपने बच्चों को ऐसी उचित सुविधाएँ एवं अवसर उपलब्ध करवाएँ जिनके फलस्वरूप बच्चे ि"ाक्षा ग्रहण कर सकें। अतः उपर्युक्त सं"ोधन द्वारा माता–पिता द्वारा अपने बच्चों के लिए ि"ाक्षा संबंधी अवसर उपलब्ध करवाने को अनिवार्य बनाया गया है।

2.4 पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

2.4.1. संघात्मक सरकार का अर्थ (Meaning of Federal Government)

वर्तमान काल में संघात्मक शासन–प्रणाली अधिक लोकप्रिय है और कई दे"ों में इसको अपनाया गया है। संघीय सरकार उसे कहते हैं जहाँ केन्द्र तथा प्रान्तों में शक्तियों का विभाजन होता है। केन्द्र व प्रान्तीय सरकारें अपने–अपने क्षेत्र में स्वतन्त्रतापूर्वक कार्य करती है। सत्ता का विकेन्द्रीयकरण संविधान द्वारा नि"चत किया जाता है। केन्द्र व राज्यों को संविधान से शक्तियाँ प्राप्त होती है।

संघ जिसे अंग्रेजी में 'फेडरे"ान' (Federation) अथवा 'फेडरल' (Federal) कहा जाता है, वास्तव में लैटिन भाषा के एक शब्द 'फोडस' (Foedus) से बना है, जिसका अर्थ है 'सन्धि' अथवा 'समझौता'।

1. **मॉण्टेस्क्यू** (Montesquieu) के शब्दों में, ''संघात्मक सरकार एक ऐसा समझौता है जहाँ बहुत–से एक–जैसे राज्य बड़े राज्य के सदस्य बनने के लिए सहमत हों।''

2. **हेमिल्टन** (Hamilton) का कथन है, ''संघ राज्य, राज्यों का एक ऐसा समुदाय है जो एक नवीन राज्य की स्थापना करता है।''

3. **गार्नर** (Garner) का कथन है, ''संघ सरकार एक ऐसी प्रणाली है जिसमें केन्द्रीय तथा स्थानीय सरकारें एक ही प्रभुसत्ता के अधीन होती हैं। ये सरकारें संविधान द्वारा अथवा संसदीय कानून द्वारा निर्धारित अपने–अपने क्षेत्रों में सर्वोच्च होती हैं।''

संघात्मक सरकार के लक्षण (Features of Federal Government)

प्रत्येक संघीय व्यवस्था में कुछ बातों का होना आव"यक है, जिनके आधार पर यह कहा जा सके कि अमुक दे"ाों में यह शासन–प्रणाली अपनाई गई है। संघात्मक सरकार के आव"यक तत्व अथवा लक्षण निम्नलिखित हैं –

1. **लिखित तथा कठोर संविधान** (Written and Rigid Constitution) – संघ राजय कई राज्यों के बीच एक समझौते का परिणाम होता है, इसलिए समझौते की सभी शर्तें लिखित रूप में होनी चाहिए। साथ ही ये शर्तें स्थायी हों। इसलिए संघ सरकार का संविधान केवल लिखित नहीं, कठोर भी होता है जिससे कोई भी इकाई मनमाने ढंग से इसमें परिवर्तन न कर सके। संविधान में सं"ाोधन करने के लिए एक वि"ोष अपनाई जाती है, ताकि केन्द्र और राज्य दोनों की सहमति से सं"ाोधन किया जा सके।

2. **भाक्तियों का बँटवारा** (Distribution of Powers) – संघात्मक सरकार में केन्द्रीय महत्व के विषय केन्द्रीय सरकार को तथा प्रान्तीय और स्थानीय महत्व के विषय राज्य सरकारों को सौंप दिए जाते हैं। दोनों सरकारें अपने–अपने क्षेत्र में कानून बनातीं तथा प्र"ाासन चलाती हैं। वे एक–दूसरे के मामले में हस्तक्षेप नहीं करती। भारत में शक्तियों के विभाजन के अधीन तीन सूचियाँ केन्द्रीय सूची, राज्य सूची तथा समवर्ती सूची बनाई गई हैं। अमेरिका की स्थिति में केन्द्रिय सरकार की शक्तियाँ नि"चत कर दी गई हैं और शेष शक्तियाँ राज्यों के लिए छोड़ दी गई हैं।

3. **स्वतन्त्र तथा सर्वोच्च न्यायपालिका** (Independent and Supreme Judiciary) – संघात्मक शासन में एक निष्पक्ष तथा स्वतन्त्र संघीय न्यायालय का होना भी जरूरी है। संघ सरकार में यद्यपि केन्द्र व राज्यों में अधिकारों का स्पष्ट विभाजन किया जाता है फिर भी उनमें कई बातों में विवाद होना स्वाभाविक है। संघ न्यायालय

उनके विवादों को हल करता है। यह न्यायालय संविधान के संरक्षण का भी कार्य करता है। केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारें संविधान के विरूद्ध कानून न बना सकें, इसके लिए एक स्वतन्त्र तथा सर्वोच्च न्यायपालिका का होना बहुत आव"यक है।

4. **दो सदनीय विधानपालिका** (Bi-cameral Legislature) – संघात्मक सरकार में दो सदनीय विधानमण्डल की आव"यकता पड़ती है। विधानमण्डल का निम्न सदन सारे रा'ट्र की जनता का तथा उच्च सदन संघ की इकाइयों का प्रतिनिधित्व करता है। ऊपरी सदन राज्यों के हितों की रक्षा करने के लिए गठित किया जाता है। इसमें संघ की इकाइयों को बराबर सीट देने की व्यवस्था की जाती है, जिससे उनमें संवैधानिक समानता स्थापित हो सके।

5. **संविधान की सर्वोच्चता** (Supremacy of the Constitution) – संघात्मक शासन–प्रणाली में संविधान की सर्वोच्चता स्थापित की जाती है। इसका अर्थ है कि संविधान को दे"ा का सर्वोच्च कानून घोषित किया जाता है और इसके विरुद्ध कार्य करने और कानून बनाने का अधिकार किसी को भी नहीं होता। संविधान की रक्षा के लिए स्वतन्त्र न्यायपालिका का गठन किया जाता है, जिसे न्यायिक पुनर्निरीक्षण का अधिकार प्राप्त होता है। न्यायपालिका संविधान के विरुद्ध बने किसी भी कानून को अवैध घोषित करके संविधान की सर्वोच्चता की सुरक्षा करती है।

6. **दोहरा भाासन** (Dual Administration) – संघात्मक सरकार में दोहरा शासन प्रबन्ध होता है। एक केन्द्रीय शासन तथा दूसरा स्थानीय अथवा प्रान्तीय शासन। संघ तथा प्रान्तों के अधिकार संविधान द्वारा नि"चत होते हैं। दोनों सरकारें अपने–अपने क्षेत्र में स्वतन्त्र होती हैं।

7. **दोहरी नागरिकता** (Double Citizenship) – संघ सरकार में प्रायः नागरिकों को दोहरी नागरिकता प्राप्त होती है। एक उस राज्य नागरिकता जहाँ वह निवास करता है तथा दूसरी संघ की नागरिकता; जैसे अमेरिकी संघात्मक व्यवस्था में दोहरी नागरिकता के ही सिद्धान्त को अपनाया गया है।

भारतीय संघवाद का स्वरूप (Nature of Indian Federalism)

भारतीय संविधान के अनुसार, भारत में संघीय शासन–प्रणाली की व्यवस्था की गई है। यद्यपि संविधान में 'संघ' (Federation) शब्द का प्रयोग नहीं किया गया है, तथापि संविधान के अनुच्छेद 1 में भारत को 'राज्यों का संघ' (Union of States) कहा गया है। संघ के स्थान पर 'राज्यों का संघ' शब्दों के प्रयोग का कारण बताते हुए संविधान की मसौदा समिति के अध्यक्ष डॉ0 अम्बेडकर ने संविधान सभा में कहा था, ''मसौदा समिति के द्वारा इस शब्द का प्रयोग यह स्पष्ट करने के लिए किया गया है कि यद्यपि भारत एक संघ–राज्य है, परन्तु यह संघ–राज्य किसी प्रकार से राज्यों के पारस्परिक समझौते का परिणाम न होने के कारण किसी भी राज्य को संघ से अलग होने का

अधिकार नहीं है।'' इस प्रकार मसौदा समिति यह स्पष्ट कर देना चाहती थी कि यदि भारत को एक संघ बनना है तो यह संघ राज्यों के द्वारा संघ में शामिल होने के लिए किसी समझौते का परिणाम नहीं है और किसी भी राज्य को इससे अलग होने का अधिकार नहीं है। यद्यपि दे"ा तथा जनता को शासन की सुविधा के लिए विभिन्न राज्यों में बांटा गया है, परन्तु दे"ा अखण्ड तथा एक पूर्ण इकाई है। डॉ0 अम्बेडकर ने यह कहा कि राज्यों तथा संघ (यूनियन) का इकट्ठा होना ही संघवाद है, जिससे कोई अलग नहीं हो सकता और जिसके अन्दर रहकर ही दोनों को कार्य करना चाहिए।

2.4.2. उधेशिका (Preamble)

भारतीय संविधान की प्रस्तावना निम्नलिखित है :–

''हम, भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न, समाजवादी, धर्म–निरपेक्ष, लोकतन्त्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, वि"वास, धर्म और उपासना की स्वतन्त्रता प्रतिष्ठता और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए, तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखण्डता सुनि"चत करने वाली बन्धुता बढ़ाने के लिए दृढ–संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख 26 नवम्बर, 1949 (मिति मार्ग"ीर्ष शुक्ल पक्ष सप्तमी, सम्वत् दो हजार छह विक्रमी) को एतद् द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्म–समर्पित करते हैं।''

वास्तव में प्रस्तावना संविधान की आधार"ाला एवं प्रेरणा है। भारतीय संविधान के आधारभूत मूल्यों एवं सिद्धांतों को संविधान की प्रस्तावना में समाविष्ट किया गया है। डॉ0 एस.सी. क"यप के अनुसार, ''संविधान राष्ट्र का मूलभूत अधिनियम है, वह राज्य के विभिन्न अंगों का गठन कर उन्हें शरीर देता है, शक्ति देता है। उनके शरीर गठन के पीछे, अंगों की व्यवस्था के पीछे एक प्रेरणा होती है, एक आत्मा होती है जिसको शब्द रूप मिलता है प्रस्तावना में।''

भारतीय संविधान की प्रस्तावना का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि प्रस्तावना मुख्य रूप से तीन बातों पर प्रका"ा डालती है :–

(क) संविधान का स्रोत क्या है ?

(ख) भारतीय शासन व्यवस्था का स्वरूप क्या है ?

(ग) संविधान के उद्दे"य या लक्ष्य क्या है ?

2.5. स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

निचे कुछ प्र"न दिए गए है जिनका आपने उत्तर देना है :–

(i) भारतीय संविधान के .... अनुच्छेदों में मौलिक अधिकारों का वर्णन किया गया है।

(ii) वर्तमान में संविधान में .... मौलिक अधिकार है।

(iii) वर्तमान में संविधान में .... मौलिक कर्त्तव्य है।

(iv) संविधान में धार्मिक अधिकार .... दिए गए हैं।

(v) संविधान में से कौन–सा मौलिक अधिकार निकाल दिया गया है।

2.6. सारांश (Summary)

इस अध्याय में हमने भारतीय संविधान में प्रदान किए गए मौलिक अधिकारों, मौलिक कर्त्तव्यों, संविधान की प्रस्तावना तथा संघवाद के बारे में पढ़ा है। ऊपर दिए गए विवरण के बाद हम कह सकते हैं कि संविधान ने नागरिकों को मौलिक अधिकार प्रदान करके हमें जीने की स्वतन्त्रता तथा विकास करने का अधिकार प्रदान नहीं किए होते तो कोई भी नागरिक न तो आसानी से अपनी बात कह सकता और न ही अपने धर्म को अपना सकता और अपनी आजादी का सही तरीके से पालन कर सकता ? इसके साथ–साथ हमें मौलिक कर्त्तव्य भी प्रदान किए गए। क्योंकि जहां पर राज्य ने हमें मौलिक अधिकार प्रदान किए हैं तो हम नागरिकों का भी यह अधिकार है कि हम संविधान के द्वारा दिए गए कानूनों या कार्यों का पालन करें और यह कर्त्तव्य है कि हमारे संविधान का आदर करें। मौलिक अधिकार और कर्त्तव्य एक सिक्के के दो पहलू हैं दोनों साथ–साथ ही कार्य करते हैं।

संविधान की प्रस्तावना हमें अपने संविधान के आधार के बारे में बताती है। प्रस्तावना संविधान को रूपरेखा प्रदान करती है। कुछ वि"ोषज्ञों ने प्रस्तावना को संविधान की आत्मा तक कहा है, क्योकि प्रस्तावना के बिना संविधान का कोई अस्तित्व नहीं है। अंत में हम हमारे संविधान के संघवाद के बारे में विचार–विम"ार्ा करने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि भारत को राज्यों का संघ कहा गया है। भारत एक दे"ा होता जो राज्यों से मिलकर बनेगा। अर्थात् अलग–अलग राज्यों का संविधान प्रदान नहीं करता। सभी के लिए एक संविधान है। एकल नागरिकता है एक स्तरीय भाषा है और सभी के लिए एक दे"ा है जिसे राज्यों का संघ कहा जाता है। अर्थात् संघवाद भारत को राज्यों का संघ कहता है।

2.7. सूचक शब्द (Key Words)

- **मौलिक अधिकार** –नागरिकों के लिए मूल–अधिकार जो दे''ावासियों को
- नागरिक बनाते हैं, उन्हें आजादी प्रदान करता है।
- **मौलिक कर्त्तव्य** –नागरिकों के कुछ कर्त्तव्य भी होते हैं जो राज्य के

- मौलिक–अधिकारों के बदले में नागरिक राज्य के लिए
- अपना दायित्व दर्शाते हैं।
- **प्रस्तावना**–संविधान की नींव जिस पर सम्पूर्ण संविधान तैयार किया गया है।
- **संघवाद** –संघवाद से हमारा अभिप्राय उस प्रक्रिया से है जिसमें शक्तियों का
- विभाजन केन्द्र राज्यों में होता है।
- **संविधान**–संविधान नियमों की व्याख्या है, कार्य करने का तरीका द”र्ााता है
- तथा कानूनों का ज्ञाता है।
- **सम्प्रभुता**–सम्प्रभुता से हमारा अभिप्राय उस शक्ति से है जिसमें राज्यों को

अपने निर्णय लेने का अधिकार हो और कानून बनाने का अधिकार

हो।

2.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self- Assessment Questions)

Q.1. मौलिक अधिकारों का विवरण दीजिए।

Q.2. मौलिक कर्त्तव्यों से आप क्या समझते हैं ?

Q.3. प्रस्तावना की व्याख्या कीजिए।

Q.4. संघवाद की प्रकृति के बारे में आप क्या जानते हैं।

Q.5. मौलिक अधिकारों और मौलिक कर्त्तव्यों में अन्तर द”ााएं।

2.9 उत्तर–स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

(i) 12 से 35 (ii) 6 (iii) 11

(iv) 25–28 (v) सम्पत्ति का अधिकार

2.10सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

1. Public Administration, Mcgraw Hill : Laxmi Kant. M
2. New Horizons of Public Administration; Mohit Bhattacharya; Jawahar Publisher & Distribution.
3. Indian Administration; S.R. Maheshwari, Orient Black Swan.
4. Public Administration Theory and Practice; Hoshiar Singh and Pardeep Sachdeva; Pearson.
5. प्र”ाासनिक चिंतक; प्रसाद एण्ड प्रसाद सत्यनारायण; जवाहर पब्लिके”ान एण्ड डिस्ट्रीब्यू”ान।

Subject : लोक प्रशासन	
Course Code : **BA204**	Author : **Dr. Deepak**
Lesson No. : **3**	Vetter :**Dr.Parveen Sharma**
राष्ट्रपति एवं प्रधानमन्त्री	

अध्याय की सरंचना

3.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

3.2. परिचय (Introduction)

3.3. अध्याय के मुख्य बिन्दु

3.3.1. राश्ट्रपति (The President)

3.3.2. प्रधानमन्त्री (The Prime Minister)

3.3.2.1. प्रधानमन्त्री के वास्तविक कार्य

3.3.2.2 प्रधानमन्त्री की भूमिका (Role of Prime Minister)

3.4 पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

3.4.1. मंत्रिपरिशद् (Council of Ministers)

3.4.1.1. कार्य एवं भूमिका –

3.5. स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

3.6. सारांश (Summary)

3.7. सूचक शब्द (Key Words)

3.8. स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

3.9. उत्तर–स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

3.10. सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

3.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

हम इस अध्याय में निम्नलिखित विषयों का अध्ययन करेंगे :–

- राष्ट्रपति के चुनाव प्रक्रिया तथा शक्तियों की विस्तृत जानकारी।
- राष्ट्रपति पर महाभियोग का संक्षिप्त विवरण।
- प्रधानमन्त्री के कार्यों का अध्ययन।
- मन्त्री–परिषद की भूमिका का विस्तृत विवरण।
- प्रधानमन्त्री की नियुक्ति की प्रक्रिया का अध्ययन।

3.2. परिचय (Introduction)

भारतीय संघीय शासन व्यवस्था अपनाने वाला दे"ा है जहाँ राष्ट्रीय स्तर पर केन्द्र या संघ सरकार तथा राज्यों में राज्य सरकारें कार्यरत हैं। दोनों ही स्तरों पर संसदीय लोकतंत्र तथा शक्ति–पृथक्करण के सिद्धान्तों को स्वीकारा गया है। शासन के तीनों अंगों, यथा – कार्यपालिका, व्यवस्थापिका (विधायिका) तथा न्यायपालिका के मध्य 'नियन्त्रण तथा संतुलन' का नियम प्रवर्तित है अर्थात् शासन या सरकार के तीनों अंग जहाँ एक–दूसरे में स्वतन्त्र है वहीं परस्पर नियंत्रणकर्ता की भूमिका भी निर्वाहित करते हैं। चूँकि भारत में राजनीतिक कार्यपालिका (मंत्रिपरीषद्), व्यवस्थापिका का अभिन्न हिस्सा होती है। अतः सरकार की वास्तविक शक्तियाँ जिनमें विधि–निर्माण भी सम्मिलित है, कार्यपालिका के नियंत्रण में दिखायी देती हैं। इसलिए कहा जाता है कि – ''भारत में व्यस्थापिका की शक्तियों तथा भूमिका का ह्रास हो रहा है और कार्यपालिका के निरंकु"ा शासन का दायरा विस्तृत होता जा रहा है।'' यद्यपि भारत में अमेरिका की भांति पूर्णतया '"ाक्ति–पृथक्करण' का सिद्धान्त लागू नहीं होता है तथापि कार्यपालिका पर न्यायपालिका का पर्याप्त नियंत्रण व्याप्त है।

3.3. अध्याय के मुख्य बिन्दु

3.3.1. राष्ट्रपति (The President)

भारत के संविधान का अनुच्छेद – 52 यह प्रावधान करता है कि – ''भारत का एक राष्ट्रपति होगा।'' संसदीय लोकतंत्रात्मक शासन व्यवस्था अपनाने के कारण भारत के राष्ट्रपति की स्थिति ब्रिटेन के सम्राट की भांति केवल 'संवैधानिक अध्यक्ष' के समान है। यद्यपि भारत का राष्ट्रपति–पद वं"ाानुगत नहीं बल्कि निर्वाचन के माध्यम से भरा जाता है। संघ की समस्त कार्यपालिका शक्तियाँ राष्ट्रपति में निहित हैं जिनका प्रयोग वह या तो स्वयं अथवा अपने अधीनस्थ पदाधिकारियों के माध्यम से करता है। चूंकि संविधान का अनुच्छेद – 74 यह उपबंध करता है कि

राष्ट्रपति अपनी शक्तियों का प्रयोग मंत्रिपरिषद् की सहायता तथा पराम”ो के आधार पर करेगा। अतः राष्ट्रपति का पद वास्तविक रूप से अधिकारसम्पन्न नहीं है।''

राष्ट्रपति पद हेतु योग्यताएँ –संविधान का अनुच्छेद – 58 राष्ट्रपति–पद हेतु निम्नांकित प्रावधान करता है –

1. वह भारत का नागरिक हो।
2. 35 वर्ष की आयु पूर्ण कर चुका हो।
3. लोकसभा का सदस्य चुने जाने की योग्यता रखता हो (अर्थात् उसका नाम किसी संसदीय निर्वाचन मण्डल में मतदाता के रूप में पंजीकृत हो, पागल या दिवालिया न हो तथा किन्हीं कारणों से चुनाव लड़ने पर प्रतिबंधित न हो)।
4. वह भारत सरकार या किसी राज्य सरकार या उक्त सरकारो के अधीन किसी संस्था में लाभ का पदधारण किया हुआ न हो।

5 जून, 1997 को जारी एक अध्यादे”ा के प”चात् राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार को 50 प्रस्तावक तथा 50 अनुमोदक व्यक्तियों की आव”यकता होती है तथा 15,000 रूप्ये जमानत रा”ि के जमा कराने पड़ते हैं।

राष्ट्रपति का निर्वाचन –राष्ट्रपति का निर्वाचन या चुनाव एक निर्वाचक मण्डल के निम्नांकित सदस्यों द्वारा किया जाता है –

1. लोकसभा तथा राज्यसभा के निर्वाचित सदस्य।
2. राज्य विधानसभाओं के निर्वाचित सदस्य।

संसद तथा राज्य विधानपरिषदों में मनोनीत सदस्य, राष्ट्रपति चुनाव में भाग नहीं ले सकते हैं। राज्य विधानसभा भंग हो या कोई स्थान रिक्त हो तो भी राष्ट्रपति चुनाव होता है।

राष्ट्रपति का निर्वाचन अप्रत्यक्ष विधि द्वारा सम्पन्न होता है। दूसरे शब्दों में कहें तो भारत का राष्ट्रपति प्रत्यक्षतः जनता द्वारा नहीं चुना जाता है। राष्ट्रपति का निर्वाचन आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति (System of Proportional Representation) के अनुसार एकल संक्रमणीय मत (Single Transferable Vote) द्वारा होता है। आनुपातिक प्रतिनिधित्व से तात्पर्य प्रत्येक सदस्य के मत का मूल्याभार निर्धारित करने से है। यह मतभार सन् 1971 की जनसंख्या के आधार पर राज्य विधानसभाओं के सदस्यों, तत्प”चात् संसद–सदस्यों की संख्या पर निर्धारित किया गया था। राज्य विधानसभा के सदस्य के मत का भार या मूल्य इस प्रकार निर्धारित किया गया है –

$$\frac{\text{राज्य की जनसंख्या}}{\text{विधानसभा के निर्वाचित सदस्यों की कुल संख्या}} \div 1000 \text{ (आधार वर्ष =सन् 1971)}$$

उदाहरण के लिए सन् 1971 में राजस्थान की जनसंख्या 2,57,65,806 तथा राज्य विधानसभा में निर्वाचित सदस्यों की संख्या 200 होने के कारण एक सदस्य का मतमूल्य या भार 129 तथा सभी सदस्यों के मतों का भार 25,800 हुआ। इस विधि से सभी राज्यों के विधानसभा सदस्यों का मतभार निकाल लिया जाता है।

महाभियोग प्रक्रिया (Impeachment Process)– भारत में राष्ट्रपति पर महाभियोग 'संविधान के अतिक्रमण' के लिए लगाया जा सकता है। संविधान के अनुच्छेद–61 के अनुसार संसद के किसी भी सदन द्वारा यह आरोप एक संकल्प (Resolution) के रूप में हो, जिस पर कम–से–कम एक चौथाई सदस्यों (उस सदन में) के हस्ताक्षर हों, राष्ट्रपति को 14 दिन का नोटिस भेजा जाए तथा यह प्रस्ताव सदन के कुल सदस्यों के दो तिहाई बहुमत से पारित होना चाहिए। दूसरा सदन लगाए गए आरोपों की जाँच स्वयं करेगा अथवा किसी न्यायालय के न्यायाधिकरण के द्वारा करवाएगा। राष्ट्रपति इस जाँच में स्वयं उपस्थित हो सकते हैं या किसी प्रतिनिधि को भेज सकते हैं। जाँच के प"चात् यदि दूसरा सदन भी दो तिहाई बहुमत से लगाए गए महाभियोग (Impeachment) को पारित कर देता है तो राष्ट्रपति को उसी समय पद छोड़ना पड़ता है। भारत में अभी तक किसी भी राष्ट्रपति के विरूद्ध महाभियोग प्रस्ताव नहीं लाया गया है। सन् 1970 में उत्तर प्रदे"ा में राष्ट्रपति शासन के विवाद में राष्ट्रपति श्री वी.वी. गिरि के विरूद्ध विपक्षी नेता मधु लिमये ने महाभियोग प्रस्ताव लाने का प्रयास अव"य किया था।

राष्ट्रपति की शक्तियाँ या कार्य (Powers or Functions of the President)– भारत के राष्ट्रपति को संविधान द्वारा अनेक प्रकार की शक्तियाँ प्रदान की है जिन्हें अग्रांकित शीर्षकों के माध्यम से वर्णित किया जा रहा है–

1. कार्यपालिका शक्तियाँ
2. सैनिक शक्तियाँ
3. कूटनीतिक शक्तियाँ
4. विधायी शक्तियाँ
5. न्यायिक शक्तियाँ
6. आपातकालीन शक्तियाँ

1. कार्यपालिका शक्तियाँ –संवैधानिक दृष्टि से भारत सरकार के समस्त कार्य राष्ट्रपति के नाम से या उनकी ओर से निष्पादित होते हैं क्योंकि वह राष्ट्र का प्रथम व्यक्ति तथा सर्वोच्च पदधारक है।

अनुच्छेद – 240 संघ राज्य क्षेत्रों में विनिमय बनाने की शक्तियाँ राष्ट्रपति में निहित करता है। वस्तुतः राष्ट्रपति अपनी सभी शक्तियों का प्रयोग प्रधानमन्त्री तथा मंत्रिपरिषद् के पराम"ा पर करता है अर्थात् वास्तविक रूप से शक्तियाँ राष्ट्रपति में निहित न होकर मंत्रिपरिषद् में समाहित हैं। अनुच्छेद–77 यह प्रावधान करता है कि भारत

सरकार की समस्त कार्यपालिका कार्यवाही राष्ट्रपति के नाम से की हुई कही जाएँगी। इसी के अन्तर्गत कार्य आवण्टन नियम बनते हैं। अनुच्छेद–78 के अन्तर्गत प्रधानमन्त्री, राष्ट्रपति को सूचनाएँ एवं सरकार के निर्णय अवगत कराता है।

2. **सैनिक शक्तियाँ** –राष्ट्रपति तीनों सेनाओं, यथा–थल सेना, वायु सेना तथा नौसेना का अध्यक्ष होता है। राष्ट्रपति को युद्ध की घोषणा करने या बन्द करने की शक्तियाँ प्राप्त हैं लेकिन ऐसा वह मंत्रिपरिषद् के पराम"ा तथा संसद द्वारा निर्धारित नियमों के अनुसार ही करता है।

3. **कूटनीतिक शक्तियाँ** –राष्ट्र का सर्वोच्च पदाधिकारी होने के कारण राष्ट्रपति विदे"ाी प्रतिनिधि मण्डलों, शासनाध्यक्षों तथा f"ाष्टमण्डलों के साथ नीतियों, संधियों या आपसी करारों या समझौतों इत्यादि से सम्बन्धित विषयों पर संक्षिप्त वार्ता करता है तथा सरकार द्वारा समस्त समझौते राष्ट्रपति की ओर से किए जाते हैं। विदे"ा यात्राओं के समय भी राष्ट्रपति भारत सरकार का रूख स्पष्ट करता है। भारत सरकार की ओर से विदे"ाों में भेजे जाने वाले प्रतिनिधि या f"ाष्टमण्डलों तथा राजदूतों की नियुक्ति राष्ट्रपति ही करता है, किन्तु यह सब मंत्रिपरिषद् की इच्छा पर निर्भर करता है।

4. **विधायी शक्तियाँ** –लोकसभा तथा राज्यसभा के अतिरिक्त संसद का तीसरा अंग, राष्ट्रपति होता है। चूंकि संसद का मुख्य कार्य विधि–निर्माण का है। अतः राष्ट्रपति की विधायी शक्तियाँ संसद के कार्यों का विस्तार है।

1. राष्ट्रपति संसद में दोनों सदनों के सत्र आहूत करता है तथा सत्रावसान भी करता है किन्तु दो सत्रों के मध्य छः माह से अधिक अन्तर नहीं होना चाहिए।
2. लोकसभा चुनावों के प"चात् गठित सरकार तथा प्रतिवर्ष बजट सत्र के दौरान राष्ट्रपति संसद में अभिभाषण देता है जो सम्बन्धित सरकार की नीतियों का दर्पण होता है।
3. राष्ट्रपति संसद के किसी भी सदन को सन्दे"ा भेज सकता है।

5. **न्यायिक शक्तियाँ** –संविधान का अनुच्छेद 72, राष्ट्रपति को किसी अपराध के लिए सिद्धदोष ठहराए गए व्यक्ति के दण्ड को क्षमा करने, प्रकृति परिवर्तित करने या निलम्बित करने इत्यादि का अधिकार प्रदान करता है। राष्ट्रपति को क्षमादान की शक्ति निम्नांकित प्रकरणों में प्राप्त है –

1. यदि दण्ड या दण्डादे"ा सेना न्यायालय (कोर्ट मा"ाल) ने दिया हो।
2. यदि दण्ड या दण्डादे"ा ऐसे विषय से सम्बन्धित विधि के विरूद्ध अपराध है, जिस विषय पर संघ कार्यपालिका की शक्ति विस्तारित है।
3. उन सभी मामलों में जिनमें दण्डादे"ा, 'मृत्यु दण्डादे"ा' है।

6. आपातकालीन शक्तियाँ –भारत का संविधान राष्ट्रपति को तीन प्रकार की परिस्थितियों में आपातकाल (Emergency) लगाने की शक्तियाँ प्रदान करता हैं। यद्यपि आपातकाल की घोषणा राष्ट्रपति की संतुष्टि पर निर्भर है तथापि इस प्रकार का निर्णय प्रधानमन्त्री की इच्छा से प्रेरित होता है।

1. युद्ध या आन्तरिक अशांति –अनुच्छेद–352 के अनुसार यदि बाह्य आक्रमण (युद्ध) की सम्भावना हो या युद्ध छिड़ गया हो अथवा दे"ा में आन्तरिक अ"ाांति (स"ास्त्र विद्रोह या Armed Rebellion) के हालात पैदा हो गए हों तो राष्ट्रपति, सम्पूर्ण दे"ा में या किसी भाग में आपातकाल की घोषणा कर सकता है। शुरू में यह दो माह के लिए लगाया जाता है तथा संसद की स्वीकृति के प"चात् छः माह के लिए बढ़ाया जा सकता है। बंटवारा तथा राज्य सूची पर केन्द्र द्वारा विधान निर्माण इत्यादि के क्रम में भी राष्ट्रपति आदे"ा जारी कर सकता है।

2. राज्य में संवैधानिक तंत्र की विफलता –संविधान के अनुच्छेद–356 के अनुसार यदि किसी राज्य में राज्यपाल को संवैधानिक विफलता दिखाई दे तो वह राष्ट्रपति को उस राज्य में राष्ट्रपति "ाासन (President's Rule) की अनु"ांसा कर सकता है। राज्य मंत्रिपरिषद् का विघटन, मौलिक अधिकारों का निलम्बन, संसद द्वारा राज्य का बजट एवं विधि–निर्माण तथा राज्य विधानसभा का विघटन इत्यादि कदम उठाए जा सकते हैं। अनुच्छेद–356 के अधीन आरोपित राष्ट्रपति शासन शुरू में दो माह के लिए होता हे जिसे संसद का अनुमोदन आव"यक है। भारत में इस अनुच्छेद का प्रायः राजनीतिक कारणों से दुरूपयोग किया गया है तथा सन् 2002 तक 108 बार विभिन्न राज्यों में राष्ट्रपति शासन लगाया जा चुका था।

3. वित्तीय स्थायित्व या साख को खतरा –यदि राष्ट्रपति को ऐसा प्रतीत हो कि भारत की वित्तीय साख या स्थायित्व को खतरा उत्पन्न हो गया है तो वह अनुच्छेद – 360 के अन्तर्गत वित्तीय आपातकाल की घोषणा कर सकता है। ऐसी स्थिति में राष्ट्रपति राज्यों को वित्तीय प्र"ाासन से सम्बन्धित निर्दे"ा भेज सकता है, लोक सेवकों के वेतन–भत्ते कम कर सकता है तथा राज्य विधानमण्डल द्वारा पारित प्रत्येक धन विधेयक को अपने पास मंगवा सकता है। यह आपातकाल भी शुरू में दो माह के लिए होता है जो संसद की सिफारि"ा पर बढ़ाया जा सकता है। भारत में अभी तक इस अनुच्छेद का प्रयोग नहीं हुआ है।

3.3.2. प्रधानमन्त्री (The Prime Minister)

संसदीय लोकतंत्रात्मक शासन व्यवस्था में प्रधानमन्त्री वास्तविक कार्यपालिका की भूमिका निभाता है। इसी कारण उसकी पदस्थिति सर्वाधिक शक्ति"ााली मानी जाती है। भारत में भी प्रधानमन्त्री की पदस्थिति अत्यन्त सम्मानित, शक्तिसम्पन्न तथा गरिमायुक्त है। प्रधानमन्त्री पद हेतु निम्नांकित योग्यताएँ हैं :–

1. वह लोकसभा या राज्य सभा का सदस्य हो और यदि पदग्रहण करते समय संसद के किसी भी सदन का सदस्य न हो तो पदग्रहण से 6 माह के भीतर किसी भी सदन की सदस्यता ग्रहण करे।

2. उसे बहुमत वाले दल का समर्थन प्राप्त हो अर्थात् लोकसभा में प्रधानमन्त्री को वि"वास मत प्राप्त हो क्योंकि यह सरकार संचालन के लिए स्वाभावित आव"यकता है।

प्रधानमन्त्री की नियुक्ति संविधान के अनुच्छेद – 75(1) के अन्तर्गत राष्ट्रपति द्वारा की जाती है, तत्प"चात् प्रधानमन्त्री अपने अन्य सहयोगी मंत्रियों का चयन का मंत्रिपरियषद् का निर्माण करता है जो वास्तविक कार्यपालिका होती है।

कार्य (कर्त्तव्य) –संविधान के अनुच्छेद – 78 में प्रधानमन्त्री के निम्नांकित कर्तव्य बताए गए हैं –

1. राष्ट्रपति को संघयी सरकार के समस्त प्र"ाासनिक निर्णयों तथा प्रस्तावों से अवगत कराएगा जो कि मंत्रिपरिषद् ने लिए हैं।
2. किसी एक मंत्री द्वारा लिए गए निर्णय को मंत्रिपरिषद् के सम्मुख विचारार्थ रखवाएगा।
3. राष्ट्रपति द्वारा चाही गई सूचना या पराम"ा उपलब्ध कराएगा।

वस्तुतः प्रधानमन्त्री का प्रमुख कार्य राष्ट्रपति को सहायता एवं पराम"ा प्रदान करना है लेकिन वास्तविकता यह है कि शासन की समस्त कार्यकारी शक्तियाँ प्रधानमन्त्री स्वयं तथा अपने मंत्रियों के माध्य से प्रयोग में लाता है। राष्ट्रपति तो केवल हस्ताक्षर अंकित करने की औपचारिकताएँ निर्वाहित करते हैं।

3.3.2.1. प्रधानमन्त्री के वास्तविक कार्य –शासन सत्ता के "िाखर पर आसीन प्रधानमन्त्री की शक्तियाँ तथा कृत्य बहुआयामी हैं जिन्हें संक्षेप में यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है –

1. मंत्रिपरिषद् का निर्माण, परिवर्तन तथा विभागों का बंटवारा करना एंव मंत्रिपरिषद् के सभी सदस्यों के बीच समन्वय एवं सौहार्द बनाए रखना।
2. राष्ट्रपति को अपनी सरकार तथा प्र"ाासन के निर्णयों से अवगत कराना तथा गम्भीर मुद्दों पर विचार–विम"ा करना।
3. नियमित अन्तराल पर मंत्रिमण्डल की बैठक आयोजित करवाना तथा आव"यक निर्णय लेना।
4. सभी प्रमुख नीतियों (रक्षा, विदे"ा तथा औद्योगिक इत्यादि) का निरूपण तथा इनका क्रियान्वयन कराना।
5. संघ सूची के विषयों पर कानून तथा कार्यक्रम निर्माण करना।
6. संसद में सरकार का पक्ष प्रस्तुत करना तथा उठायी गई आपत्तियों का निवारण करना।
7. दे"ा की आन्तरिक एवं बाह्य शांति व्यवस्था सुनि"िचत करना तथा राष्ट्रीय एकता को बनाए रखना।
8. राष्ट्र की समस्याओं के समाधान के प्रति सार्थक कदम उठाना।
9. अन्तर्राष्ट्रीय तथा अन्य महत्वपूर्ण मंचों पर भारत की नीतियाँ स्पष्ट करना।

10. दे”ा के सर्वांगीण विकास का मार्ग प्र”ास्त करना।
11. विभिन्न गम्भीर मुद्दों पर राजनीतिक दलों में तालमेल स्थापित करना।
12. सार्वजनिक सभा–समारोह तथा अन्य अवसरों पर अपनी सरकार के कार्यक्रमों तथा दृष्टिकोणो से अवगत कराना।
13. समाज के सभी वर्गों वि”ाषतः पिछड़े, आदिवासियों, अल्पसंख्यकों तथा निर्योग्यताग्रस्त लोगों का उत्थान कराना।
14. लोक प्र”ाासन में सच्चरित्रता की स्थापना तथा नौकर”ााही पर अंकु”ा स्थापित कराना।

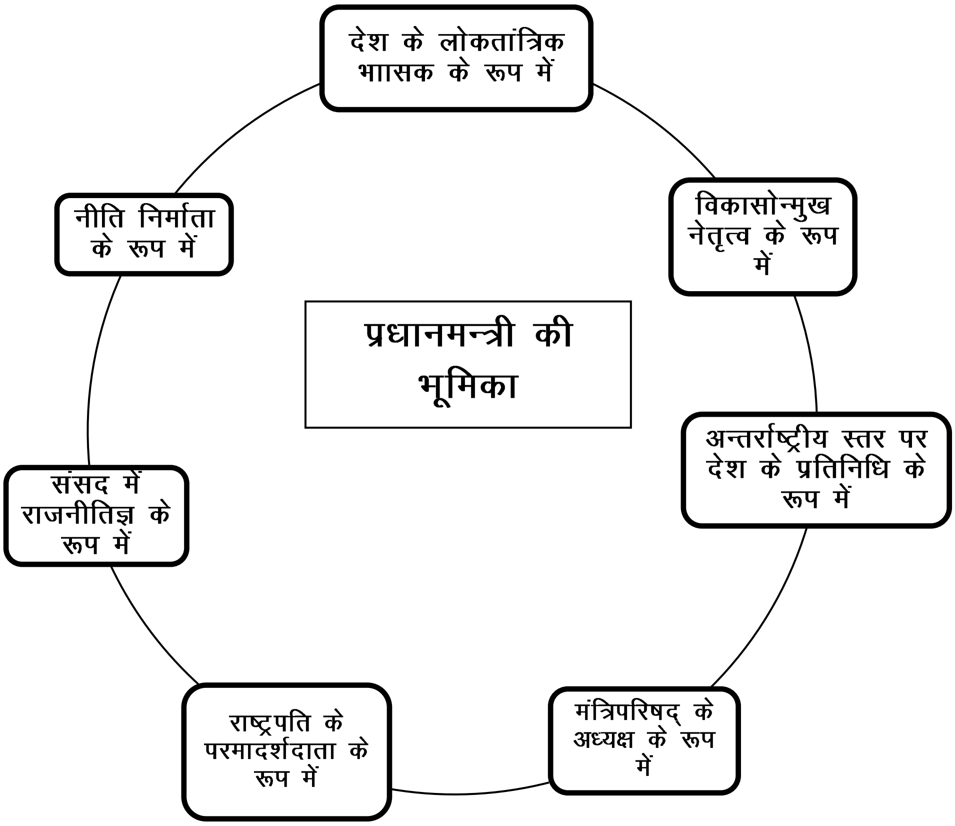

3.3.2.2 प्रधानमन्त्री की भूमिका (Role of Prime Minister)

वास्तविक तथा राजनीतिक प्रकृति की कार्यपालिका के रूप में पदस्थापित भारत का प्रधानमन्त्री दे”ा की जनता की आकांक्षाओं, विपक्ष की आलोचनाओं तथा शासन–सत्ता की असीम शक्तियों का केन्द्र बिन्दु होता है। प्रधानमन्त्री के पद पर रहते हुए उसे अनेक प्रकार की भूमिकाएँ (Roles) निर्वाहित करनी पड़ती है, यथा –

1. **देश के लोकतांत्रिक शासक के रूप में** –भारत प्रजातांत्रिक मूल्यों में आस्था रखने वाला कल्याणकारी राज्य है जहाँ संसदीय लोकतंत्र की शासन प्रणाली प्रवर्तित है। यद्यपि संवैधानिक दृष्टि से राष्ट्रपति की स्थिति सर्वोच्च प्रतीत होती है तथापि दे”ा का वास्तविक शासन प्रधानमन्त्री होता है। दे”ा में लोकतंत्र की वास्तविक स्थापना, जनसाधारण के कष्टों का निवारण तथा संवैधानिक निर्दे”ाों की अनुपालना मुख्यतः प्रधानमन्त्री तथा उसकी मंत्रिपरिषद् के अन्य मंत्रियों की कार्य”ौली से प्रभावित होती है। अधिसंख्य मामलों में प्रधानमन्त्री जनता–जनार्दन द्वारा समर्थन प्राप्त राजनीतिक तथा प्र”ाासनिक लक्ष्यों की पूर्ति कराता है। सत्तारूढ़ राजनीतिक दल की छवि तथा प्रधानमन्त्री की कार्य”ौली एक–दूसरे को प्रभावित करती हैं। आम जनता भी अधिकां”ा मामलों में प्रधानमन्त्री की भूमिका को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान करती है क्योंकि प्रधानमन्त्री जनाकांक्षाओं की पूर्ति का स्वाभाविक स्रोत है प्रधानमन्त्री की राष्ट्रीय स्तर पर समस्याओं से लड़ने की क्षमता जनसाधारण को प्रत्यक्षः प्रभावित करती है। यही कारण है कि प्रधानमन्त्री की विफलता सत्तारूढ़ दल के पतन का कारण बन जाती है। एच.आर.सी. ग्रीव्ज कहते हैं – ''सरकार सम्पूर्ण दे”ा की मास्टर है किन्तु प्रधानमन्त्री सरकार का मास्टर है।''

2. **नीति निर्माता के रूप में** –संसदीय लोकतंत्र में प्रधानमन्त्री तथा उसकी मंत्रिपरिषद्, व्यवस्थापिका या विधायिका का एक भाग होते हैं। इस प्रकार प्रधानमन्त्री कार्यपालिका तथा विधायिका दोनों में प्रभावी भूमिका निभाता है। प्रधानमन्त्री ही वह व्यक्ति है जो राष्ट्रीय समस्याओं, कार्यक्रमों, योजनाओं तथा सामाजिक–आर्थिक विकास के लिए आधारभूत नीतियाँ बनाता है। यद्यपि यह नीतियाँ उस दल की मान्यताओं से अत्यधिक प्रभावित होती हैं जिस दल का प्रधानमन्त्री सदस्य होता है तथापि नीति–निरूपण में प्रधानमन्त्री की भूमिका सर्वोपरि तथा निर्णायक होता है।

3. **विकासोन्मुख नेतृत्व के रूप में** –भारत उन दे”ाों में सम्मिलित है जहाँ सामाजिक–आर्थिक विकास के लक्ष्य नियोजन प्रणाली के माध्य से प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। योजना आयोग तथा राष्ट्रीय विकास परिषद् के अध्यक्ष के रूप में प्रधानमन्त्री का विकास के क्रम में दृष्टिकोण तथा पहल करने की क्षमता राष्ट्र के समग्र विकास में नि”चत रूप से निर्णायक भूमिका निर्वाहित करती है। राष्ट्र की समस्याओं, जनाकांक्षाओं, उपलब्ध संसाधनों तथा कु”ाल प्र”ाासनिक तंत्र के साथ दूरद”ितापूर्वक समन्वय स्थापित करने वाला प्रधानमन्त्री ही विकास को नए आया दे सकता है। इसलिए मुनरो ने प्रधानमन्त्री को 'राज्यरूपी जहाज का कप्तान' कहा है।

4. **संसद में राजनीतिज्ञ के रूप में** –सामान्यतः प्रधानमन्त्री लोकसभा का सदस्य होता है। बहुमत वाले दली का सर्वसम्मत नेता होने के कारण उसे अन्य राजनीतिक दलों अर्थात् विपक्ष के नेताओं के साथ राजनीतिक एवं वैचारिक भिन्नता तथा प्रधानमन्त्री होने के कारण स्वाभाविक दबावों का सामना करना पड़ता है। संसद में प्रस्तुत किए जाने वाले विधेयक, प्रस्ताव तथा आम बजट एवं रेल बजट में प्रधानमन्त्री की कार्य”ौली स्पष्ट

दिखाई देती है। इसी प्रकार प्र"नकाल, वि"वास मत प्रस्ताव या अवि"वास प्रस्ताव इत्यादि के समय प्रधानमन्त्री को सत्तारूढ़ दल तथा दे"ा की वास्तविक कार्यपालिका दोनों दृष्टियों से बहस में उत्तर देना पड़ता है।

5. **अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर देश के प्रतिनिध के रूप में** –तेजी से भागती दुनिया में हो रहे ध्रुवीकरणों के कारण किसी भी दे"ा की छवि उसके गुटों से भी प्रभावित होती है। गुटनिरपेक्ष आंदोलन, राष्ट्रमण्डल तथा सार्क के माध्यम से भारत की छवि न्यूनाधिक मात्रा में निष्पक्ष तथा शांतिप्रिय राष्ट्र की है। इसके लिए पूर्व प्रधानमंत्रियों की विचारधारा तथा अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर भारत की सार्थक उपस्थिति महत्वपूर्ण रही है। संयुक्त राष्ट्र की सभाओं तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं के क्रम में भारत के पक्ष को स्पष्ट करने में प्रधानमन्त्री की भूमिका महत्वपूर्ण सिद्ध होती है।

6. **मंत्रिपरिषद् के अध्यक्ष के रूप में** –प्रधानमन्त्री का चयन बहुमत वाले दल के सांसद करते हैं जबकि मंत्रिपरिषद् के सदस्यों का चयन स्वयं प्रधानमन्त्री पार्टी संगठन के पदाधिकारियों के साथ मिलकर करता है। किस मंत्री को कौन–सा विभाग तथा स्तर प्रदान किया जाना है और मंत्रिपरिषद् का कब विस्तार करना है इत्यादि का निर्णय प्रधानमन्त्री ही करता है। समय–समय पर होने वाली केबिनेट मीटिंग तथा उसके एजेण्डा का निर्धारण भी प्रधानमन्त्री करता है। केबिनेट मीटिंग की अध्यक्षता करते हुए प्रधानमन्त्री अन्य सहयोगी मंत्रियों के पराम"र् पर सरकार के महत्वपूर्ण निर्णय लेता है। इसलिए लॉर्ड मॉर्ले प्रधानमन्त्री को 'समकक्षों में प्रथम' का नाम देते हैं।

7. **राष्ट्रपति के परमादर्शदाता के रूप में** –सैद्धान्तिक तथा संवैधानिक रूप में राष्ट्रपति दे"ा की सर्वोच्च कार्यपालिका होता है लेकिन व्यावहारिक रूप में राष्ट्रपति का प्रत्येक कृत्य प्रधानमन्त्री के पराम"र् से प्रभावित होता है। महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्ति, संसद का सत्र बुलाने तथा सत्रावसान करने, मंत्रिपरिषद् का विस्तार या किसी मंत्री को हटाने, महत्वपूर्ण विधेयकों का प्रस्तुतिकरण, आपातकाल की घोषणा तथा लोकसभा को भंग करने इत्यादि मामलों में प्रधानमन्त्री ही राष्ट्रपति का सहायक तथा पराम"र्दाता होता है। यद्यपि अधिकां"ा परिस्थितियों में प्रधानमन्त्री या मंत्रिपरिषद् की सलाह के अनुसार ही राष्ट्रपति कार्य करता है किन्तु संवैधानिक संकट उत्पन्न होने की स्थिति में राष्ट्रपति स्वयं भी पहल कर सकता है। यदि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जबकि राष्ट्रपति को प्रधानमन्त्री के पराम"र् के बिना या उसके विरूद्ध निर्णय करना पड़े तो निस्संदेह दोष प्रधानमन्त्री का ही होगी।

3.4। पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

3.4.1. मंत्रिपरिशद् (Council of Ministers)

संसदीय लोकतंत्रात्मक शासन व्यवस्था में कार्यपालिका की वास्तविक शक्तियाँ मंत्रिपरिषद् मे सम्मिलित मंत्रियों तथा मंत्रिपरिषद् के अध्यक्ष अर्थात् प्रधानमन्त्री में निहित होती है। भारत के संविधान का अनुच्छेद – 74(1) यह प्रावधान करता है कि–''राष्ट्रपति को उसके कृत्यों के संचालन करने में सहायता तथा पराम"र् देने के लिए एक

मंत्रिपरिषद् (Council of Ministers) होगी, जिसका अध्यक्ष प्रधानमन्त्री होगा।'' आम बोलचाल की भाषा में सरकार से तात्पर्य मंत्रिपरिषद् से ही होता है।

नियुक्ति –मंत्रिपरिषद् के सदस्यों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा प्रधानमन्त्री के पराम"र्ा पर होती है (अनुच्छेद – 75 (1))। मंत्रिपरिषद् के सदस्यों या मंत्रियों का चयन करते समय प्रधानमन्त्री सैद्धान्तिक दृ"िट से स्वतंत्र दिखाई देता है लेकिन व्यावहारिक रूप में प्रधानमन्त्री कई प्रकार की बाध्यताओं से घिरा होता है। मंत्रिपरिषद् में मंत्रियों की संख्या संविधान द्वारा नि"िचत नहीं की गई है बल्कि यह राजनीतिक परिस्थितियों पर निर्भर करती है। स्वतन्त्र भारत की प्रथम मंत्रिपरिषद् में 14 सदस्य सम्मिलित थे जबकि सन् 1991 में पी.वी. नरसिम्हा राव सरकार ने 60 सदस्य मंत्रिपरिषद् में शामिल किए थे क्योंकि राव सरकार के पास पूर्ण बहुमत का अभाव था, अतः कई व्यक्तियों को मंत्रिपद देना पड़ा था। वाजपेयी मंत्रिपरिषद् में सन् 2003 में किए गए 13वें विस्तार के प"चात् 81 मंत्रि थे जो एक रिकॉर्ड हैं। प्र"ाासनिक सुधार आयोग (प्रथम) का मानना था कि मंत्रिपरिषद् का आकार 40–45 सदस्यों से अधिक नहीं होना चाहिए जिसके एक तिहाई सदस्य केबिनेट स्तर के हों। सन् 2003 में किए गए संविधान सं"ोधन (91वाँ सं"ोधन) के प"चात् अब मंत्रियों की संख्या 15 प्रति"ात सांसदों तक सीमित कर दी गई है अर्थात् केन्द्रीय मंत्रिपरिषद् में अधिकतम 79 (लोकसभा की संख्यानुसार) मंत्रि ही हो सकते हैं। यह कानून राज्यों की मंत्रिपरिषद् पर भी लागू है। मंत्रिपरिषद् के सदस्य अधिकां"ातः लोकसभा में निर्वाचित सांसद होते हैं तथापि राज्यसभा के सांसद या ऐसे व्यक्ति को भी मंत्री बनाया जा सकता है जो किसी भी सदन का सदस्य नहीं होता है। यदि ऐसे व्यक्ति को मंत्री बनाया जाता है तो उसे नियमानुसार छः माह के भीतर संसद के किसी सदन का सदस्य निर्वाचित होना पड़ेगा। इस प्रकार कहा जा सकता है कि केन्द्रीय मंत्रिपरिषद् के मंत्री की मूलभूत योग्यताएँ वही हैं जो किसी सांसद के लिए आव"यक है।

मंत्रिपरिषद् में चार प्रकार के मंत्री बनाए जाते हैं जो शक्तियों तथा स्तर के अनुसार क्रम"ाः निम्नांकित हैं –

1. केबिनेट मंत्री
2. राज्य मंत्री
3. उप मंत्री
4. संसदीय सचिव

शपथ–संविधान की तीसरी अनुसूची में वर्णित पद एवं गोपनीयता की शपथ प्रधानमन्त्री तथा अन्य मंत्रियों को लेनी होती है। राष्ट्रपति, मंत्रिपरिषद् को शपथ ग्रहण करवाता है।

1. **मंत्री–पद की शपथ** –''मैं अमुक, ई"वर की शपथ लेता हूँ सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूँ कि मैं, विधि द्वारा स्थापित भारत के संविधान के प्रति सच्ची श्रद्धा और निष्ठा रखूँगा। मैं संघ के मंत्री के रूप में अपने कर्तव्यों का श्रद्धापूर्वक और शुद्ध अन्तःकरण से निर्वहन करूँगा तथा मैं भय या पक्षपात, अनुराग या द्वेष के बिना, सभी प्रकार के लोगों के प्रति संविधान और विधि के अनुसार न्याय करूँगा।''

2. **मंत्री के लिए गोपनीयता की शपथ** –''मैं अमुक, ई"वर की शपथ लेता हूँ/सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूँ कि जो विषय संघ के मंत्री के रूप में मेरे विचार के लिए लाया जाएगा अथवा मुझे ज्ञात होगा, उसे किसी व्यक्ति या व्यक्तियों को, तब के सिवाय जबकि संघ में मंत्री के रूप में अपने कर्तव्यों के सम्यक् निर्वहन के लिए ऐसा करना अपेक्षित हो, मैं प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से संसूचित या प्रकट नहीं करूँगा।''

3.4.1.1. कार्य एवं भूमिका –मंत्रिपरिषद् का प्रमुख कार्य राष्ट्रपति को सहायता एवं परमा"ा प्रदान करना, नीति एवं कार्यक्रम बनाना तथा दे"ा का शासन–संचालन करना है जो व्यक्तिगत रूप में किसी मंत्री द्वारा विभाग पर नियंत्रण–निर्दे"ान और सामूहिक रूप से मंत्रिपरिषद् द्वारा लिए गए निर्णयों द्वारा संचालित होता है। मंत्रिपरिषद् के अधिकां"ा नीतिगत तथा उच्चस्तरीय कार्य प्रधानमन्त्री तथा मंत्रिमण्डल द्वारा निष्पादित होते हैं जबकि दैनन्दिन कार्य विभिन्न प्रकार के मंत्री अपने–अपने विभागों में पूरे करते हैं। मंत्रिपरिषद् के कार्यों को निम्नानुसार वर्णित किया जा सकता है –

1. **राष्ट्रपति को सहायता एवं परामर्श** –संविधान के प्रावधानों के अनुसार राष्ट्रपति को पराम"ा तथा सहायता देने हेतु मंत्रिपरिषद् का होना अनिवार्य है। यही कारण है कि किसी सरकार के पतन के प"चात् भी वह मंत्रिपरिषद् तक तक कार्य करती रहती है जब तक कि नयी सरकार गठित न हो जाए। मत्रिपरिषद् द्वारा विभिन्न मामलों में लिए गए निर्णयों से प्रधानमन्त्री, राष्ट्रपति को अवगत कराते हैं। वस्तुतः राष्ट्रपति वही कार्य करता है जैसा उसे प्रधानमन्त्री द्वारा पराम"ा प्रदान किया जाता है। सैद्धान्तिक दृष्टि से यह विवाद का विषय बना हुआ है कि क्या राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् की प्रत्येक मंत्रणा को स्वीकार करने को बाध्य है ? लेकिन व्यवहारिक स्तर पर यह अनेक बार स्पष्ट हो चुका है कि संसदीय शासन प्रणाली में राष्ट्रपति, मंत्रिपरिषद् का पराम"ा करने से न्यूनाधिक मात्रा में बाध्य अव"य है।

2. **नीति–निर्माण** –नीति वह दस्तावेज या विचारधारा सिद्ध होती है जो किसी तंत्र को उसे लक्ष्यों की प्राप्ति में न केवल मार्गद"ान प्रदान करती है बल्कि सरकार की मं"ाा को भी स्पष्ट करती है। मंत्रिपरिषद् ही सर्वोच्च नीति निर्मात्री संस्था है जो किसी दे"ा की रक्षा, विदे"ा, गृह, "ाक्षा, उद्योग तथा विकास इत्यादि की नीतियाँ निर्धारित करती है। ये नितियाँ सम्बन्धित दे"ा के इतिहास, सामाजिक–आर्थिक परिवे"ा, संवैधानिक मूल्यों तथा जनाकांक्षाओं से अभिप्रेरित अव"य होती हैं तथापि इनमें सत्तारूढ़ राजनीतिक पार्टी की छवि स्पष्ट नजर आती है।

3. **विधि–निर्माण** –यद्यपि विधि–निर्माण का प्रमुख कार्य संसद का है तथापि संसद का एक अभिन्न अंग होने के कारण मंत्रिपरिषद् की विधि–निर्माण में महत्ती भूमिका रहती है। विभिन्न प्रकार के नए विधेयकों का प्रारूप निर्माण, प्रवर्तित कानूनों में सं"ाोधन तथा सुधार का कार्य लोक सेवकों की सहायता से सर्वप्रथम मंत्रिपरिषद् ही निर्धारित करती है। संसद में बहुमत रखने के कारण अधिकां"ा विधेयक मंत्रिपरिषद् द्वारा ही प्रस्तुत कि ए जाते हैं। आपातकालीन परिस्थितियों में राष्ट्रपति को अध्यादे"ा जारी करने का पराम"र्ा तथा प्रारूप भी मंत्रिपरिषद् ही देती है।

4. **वास्तविक मुख्य कार्यपालिका के कृत्य** –मंत्रिपरिषद् वास्तविक सत्ता प्राप्त सर्वोच्च शक्तिसम्पन्न निकाय है जो सम्पूर्ण शासन तंत्र को निर्दे"ाित, नियंत्रित तथा व्यवस्थित करने का कार्य करती है। प्रत्येक मंत्रालय तथा विभाग का शीर्षस्थ पद मंत्री के रूप में एक राजनेता द्वारा धारण किया जाता है जो मंत्रिपरिषद् का सदस्य भी कहलाता है। सम्बन्धित विभाग की नीतियों, कार्यक्रमों, योजनाओं, बजट तथा लक्ष्यों की पूर्ति के क्रम में मंत्री द्वारा निर्णय लिए जाते हैं। मंत्री के अधीन कार्यरत सचिव तथा अन्य प्र"ाासनिक कर्मचारी केवल उसके सहायक होते हैं। वास्तविक तथा अन्तिम उत्तरदायित्व मंत्री का होता है। इसलिए यह आव"यक है कि शासन संचालन से सम्बन्धित कारगर रणनीति सम्बन्धित मंत्रिपरिषद् द्वारा तैयार की जाए।

5. **विकास की वाहक** –आधुनिक राज्य कल्याणकारी तथा लोकतंत्रात्मक हैं जहाँ व्यक्ति के सर्वांगीण विकास का दायित्व सरकार को सौंपा गया है। भारत में पंचवर्षीय योजनाओं का निर्माण योजना आयोग द्वारा किया जाता है, लेकिन इसमें केन्द्रीय मंत्रिपरिषद् की स्पष्ट भूमिका बनी रहती है क्योंकि समस्त राष्ट्रीय समस्याओं के समाधान के लिए मंत्रिपरिषद् प्रमुख स्रोत हैं। पिछड़े वर्गों, जनजातीय क्षेत्रों तथा प्राकृतिक रूप से विपन्नताग्रस्त सुदूर अंचलों में जीवन की मूलभूत सुविधाएँ, यथा – f"k{kk, पेयजल, यातायात, खाद्यान्न, ऊर्जा तथा स्वास्थ्य इत्यादि उपलब्ध करवाना सरकार की नैतिक जिम्मेदारी है।

6. **समन्वय करना** –लोक प्र"ाासन में प्र"ाासनिक संगठनों या संस्थाओं का वि"ााल एवं जटिल तंत्र कार्यरत है। एकाधिक संगठनों या व्यक्तियों में प्र"ाासनिक कृत्यों को लेकर उठने वाले विवादों को निबटाने में मंत्रिपरिषद् अहम् भूमिका निभाती है। एक ही मंत्रालय के विभिन्न मंत्रियों या अलग–अलग मंत्रालयों में मंत्रियों तथा सचिवों के मध्य कार्यक्षेत्र को लेकर उठने वाले विवादों का निवारण मंत्रिमण्डल करता है। समन्वय की यह समस्या अन्तरविभागीय ही नहीं बल्कि अन्तरराज्यीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय भी हो सकती है। निस्संदेह सामंजस्य तथा समन्वय की स्थापना मंत्रिपरिषद् ही करवा सकती है।

7. **लोक शिकायत निवारण तथा जनमत निर्माण** –शासन–सत्ता के शीर्ष पर स्थापित केन्द्रीय मंत्रिपरिषद् के समक्ष प्रतिदिन हजारों जन"िाकायतें पहुँचती हैं। इन "िाकायतों तथा जन समस्याओं का निराकरण कराना

मंत्रिपरिषद् का एक प्रमुख दायित्व है। इस क्रम में अनेक जाँच अभिकरण तथा नियंत्रणकारी संगठन कार्यरत हैं जिनके माध्यम से "िाकायत निराकरण सम्भव है। इसी तरह मंत्रिगण आकस्मिक दौरा करके भी प्र"ाासन को सजग रख सकते हैं।

3.5. स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress) :---------------Remove this sign in all subtitles please

निचे कुछ प्र"न दिए गए हैं उनका आपने उत्तर देना है :–

(i) भारत में कौन–सी शासन प्रणाली अपनाई गई है ?

(ii) राष्ट्रपति का चुनाव किस विधि के द्वारा किया जाता है ?

(iii) राष्ट्रपति के चुनाव के लिए कम–से–कम कितनी आयु होनी चाहिए ?

(iv) राष्ट्रपति को किस प्रक्रिया के द्वारा पद से हटाया जा सकता है ?

(v) मन्त्रिपरिषद में कितने प्रकार के मन्त्री होते हैं ?

(vi) मन्त्रिपरिषद की नियुक्ति कौन करता है ?

(vii) मन्त्रिपरिषद का मुख्य कार्य क्या है ?

3.6. सारांश (Summary)

इस अध्याय में विषयों का अध्ययन करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि भारत में राजनीति तथा प्र"ाासन की प्रक्रिया को कई स्तरों में बांटा गया है। भारत में प्र"ाासन की सुविधा को ध्यान में रखते हुए शक्तियों का विभाजन किया गया है क्योंकि कोई भी निर्वाचित व्यक्ति या राष्ट्रपति ताना"ााही ना कर सके। जहां पर भी सारी कार्यपालिका शक्तियों का केन्द्र राष्ट्रपति है, वहीं पर राष्ट्रपति पर 44वें संविधान सं"ाोधन के तहत यह अनिवार्य कर दिया गया है कि वह इन शक्तियों का प्रयोग मन्त्रिमण्डल की सलाह पर करेगा। राष्ट्रपति में कुछ आपातकालीन शक्तियां भी निहित है जिनका प्रयोग वह अपनी इच्छा से कर सकता है परन्तु कुछ विषयों पर उनमें भी राष्ट्रपति पर प्रतिबन्ध लगाया गया है।

भारत में राजनीतिक सारी शक्तियां तथा कार्यपत्रिका शक्तियों का वास्तविक प्रयोग तो प्रधानमन्त्री ही करता है, राष्ट्रपति तो केवल नाममात्र का कार्यपालक है वास्तविकता में कार्यपालन तो प्रधानमन्त्री ही है। प्रधानमन्त्री का चुनाव हमारे दे"ा की जनता प्रत्यक्ष मतदान के द्वारा करती है। प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल की सहायता से दे"ा का शासन चलाता है तथा नितियों के निर्माण के लिए जिम्मेदार होता है। प्रधानमन्त्री की सहायता के लिए मन्त्रिपरिषद होती है जो उनके कार्यों में सहयोग देती है दे"ा का विकास तथा विना"ा मन्त्रिमण्डल पर ही निर्भर होता है यदि

सही दि”ाा में कार्य किया जाए तो विकास तथा विपरीत दि”ाा में कार्य किया जाए तो विना”ा अंत में ये ही कह सकते हैं कि भारत दे”ा प्र”ाासनिक तथा राजनीतिक रूप से वि”व में सभी दे”ाों से अलग है क्योंकि इसमें शक्तियों का विभाजन कई स्तरों पर किया गया है जिससे कोई भी ताना”ााही नहीं कर सकता।

3.7. सूचक शब्द (Key Words)

- **राष्ट्रपति** –देश का सर्वोपरि, नागरिक जिसमें सारी कार्यपालिका शक्तियां निहित है।
- **प्रधानमन्त्री** –मन्त्रिमण्डल का प्रधान, जिसे मन्त्रिमण्डल में सर्वोपरि दर्जा प्राप्त हो, प्रधानमन्त्री कहलाता है।
- **मन्त्रिपरिषद** –मन्त्रियों का समूह जिसका निर्वाचन जनता के द्वारा किया जाता है।
- **महाभियोग** –वह प्रक्रिया जिसके द्वारा राष्ट्रपति यह गैर संवैधानिक कार्यों के लिए आरोप सिद्ध करके पद से हटाया जाता है।
- **तानाशाही** –वह प्रक्रिया जिसमें कोई भी कार्यपालक अपनी मर्जी से सभी निर्णय ले तथा नितियां बनाएं।

3.8. स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

Q.1. राष्ट्रपति के चुनाव प्रक्रिया का वर्णन करो।

Q.2. राष्ट्रपति की आपातकालिन शक्तियों का संक्षिप्त विवरण दें।

Q.3. प्रधानमन्त्री की चुनाव प्रक्रिया से आप क्या समझते हैं ?

Q.4. मन्त्रिमण्डल की भूमिका का वर्णन करें।

Q.5. प्रधानमन्त्री के कार्यों का विवरण दें।

3.9. उत्तर–स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

(i) संसदीय शासन प्रणाली

(ii) एकल–संक्रमणीय मत–प्रणाली द्वारा

(iii) 35 वर्ष

(iv) महाभियोग की प्रक्रिया के द्वारा

(v) 3 प्रकार के

(vi) राष्ट्रपति–प्रधानमन्त्रि की सिफारिस पर

(vii) राष्ट्रपति को सलाह और पराम”ा देना

3.10. सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

(१) Public Administration, Mcgraw Hill : Laxmi Kant. M

(२) New Horizons of Public Administration; Mohit Bhattacharya; Jawahar Publisher & Distribution.

(३) Indian Administration; S.R. Maheshwari, Orient Black Swan.

(४) Public Administration Theory and Practice; Hoshiar Singh and Pardeep Sachdeva; Pearson.

(५) प्रशासनिक चिंतक; प्रसाद एण्ड प्रसाद सत्यनारायण; जवाहर पब्लिकेशन एण्ड डिस्ट्रीब्यूशन।

Subject : लोक प्रशासन	
Course Code **: BA204**	Author **: Dr. Deepak**
Lesson No. **: 4**	Vetter **:Dr. Parveen Sharma**
राज्य कार्यपालिका : राज्यपाल, मन्त्रि–परिशद् तथा मुख्यमन्त्री	

अध्याय की सरंचना

4.1 अधिगम उद्देश्य **(Learning Objectives)**

4.2. परिचय **(Introduction)**

4.3. अध्याय के मुख्य बिन्दु

4.3.1. राज्यपाल की नियुक्ति **(Appointment of Governor)**

4.3.2. राज्यपाल की शक्तियाँ तथा कार्य **(Powers and Functions of Governor)**

4.4 पाठ का आगे का मुख्य भाग **(Further Main Body of the Text)**

4.4.1. मुख्यमन्त्री की शक्तियाँ और कार्य **(Powers and Functions of Chief Minister)**

4.4.2. मुख्यमन्त्री की स्थिति **(Position of the Chief Minister)**

4.5 स्वयं प्रगति जाँच **(Check your progress)**

4.6. सारांश **(Summary)**

4.7. सूचक शब्द **(Key Words)**

4.8. स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न **(Self- Assessment Questions)**

4.9 उत्तर–स्वयं प्रगति जाँच **(Answers to check your progress)**

4.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें **(References / Suggested Readings)**

4.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय में हम निम्नलिखित विषयों के बारे में अध्ययन करेंगे :–

- केन्द्रिय सचिवालय तथा राज्य सचिवालय का संक्षिप्त विवरण।
- राज्यपाल की भूमिका तथा कार्यों का अध्ययन।
- मुख्यमन्त्री के कार्यों तथा शक्तियों का विवरण।
- राज्यपाल की नियुक्ति की प्रक्रिया।
- मुख्यमन्त्री के चुनाव की प्रक्रिया।

4.2. परिचय (Introduction)

भारत में संघीय शासन–प्रणाली होने के कारण दोहरी शासन व्यवस्था है – एक संघ की तथा दूसरी संघ की इकाइयों (राज्यों) की। संघ की भांति राज्यों में भी संसदीय शासन–प्रणाली की व्यवस्था की गई है। इसके अनुसार, राज्यपाल राज्य का नाममात्र का अध्यक्ष होता है और उसको पराम"ा देने के लिए एक मन्त्रिमण्डल की व्यवस्था है, जिसका मुखिया मुख्यमन्त्री होता है। वास्तव में मुख्यमन्त्री तथा मन्त्रि–परिषद् ही राज्य के शासन का संचालन करते हैं। अतः राज्य में राज्यपाल की स्थिति एवं भूमिका वैसी ही है जैसी कि केन्द्र में राष्ट्रपति की है। भारतीय संविधान में राज्यपाल के पद सम्बन्धी नियुक्ति, शक्तियों तथा कार्यों करा वर्णन संविधान के अनुच्छेद 153 से 160 में किया गया है। इनका इस अध्याय में हम विस्तारपूर्वक वर्णन करेंगे। संविधान के अनुच्छेद 153 में कहा गया है, ''प्रत्येक राज्य के लिए राज्यपाल होगा, परन्तु एक ही व्यक्ति दो या दो से अधिक राज्यों का भी राज्यपाल हो सकता है।''

राज्यपाल की नियुक्ति (Appointment of the Governor)– भारतीय संविधान के अनुच्छेद 155 के अनुसार, ''राज्यपाल की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है।'' पिछले कई वर्षों से राज्यपाल की नियुक्ति के सम्बन्ध में दो परम्पराएँ प्रचलित हैं जिनका प्रायः पालन किया जाता है।

4.3. अध्याय के मुख्य बिन्दु

4.3.1. राज्यपाल की नियुक्ति (Appointment of Governor)

संविधान सभा में, जब राज्यपाल की नियुक्ति के विषय में वाद–विवाद चल रहा था, तब उस समय राज्यपाल के चुनाव की भी चर्चा हुई। राज्यपाल के पद के सम्बन्ध में संविधान सभा की 'प्रान्तीय संविधान समिति' (Provincial Constitution Committee) ने सुझाव दिया था कि राज्यपाल का सर्वसाधारण जनता द्वारा वयस्क मताधिकार के आधार पर चुनाव किया जाना चाहिए। यह विचार उनकी इस धारणा के अनुकूल था कि प्रत्येक राज्य

को संघ की इकाई होने के नाते अधिक–से–अधिक स्वायत्तता की स्थिति प्राप्त होनी चाहिए। इस सुझाव के अतिरिक्त संविधान सभा में दो अन्य सुझाव भी दिए गए। प्रथम राज्य विधानमण्डल के द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर राज्यपाल का निर्वाचन किया जाए। द्वितीय राज्य विधानमण्डल के निम्न सदन विधानसभा द्वारा चार नामों सहित सुझाव दिया जाए जिनमें से राष्ट्रपति द्वारा किसी भी एक को राज्यपाल नियुक्त किया जाए। इन तीनों ही सुझावों को अस्वीकार करते हुए संविधान सभा ने अन्त में यह निर्णय लिया कि राज्यपाल का चुनाव नहीं होना चाहिए, बल्कि उसकी नियुक्ति ही होनी चाहिए। राज्यपाल के चुनाव के विपक्ष में,जो तर्क दिए गए वे इस प्रकार है–

1. जनता द्वारा निर्वाचित राज्यपाल, संसदीय प्रणाली से मेल नहीं खाता। इससे मन्त्रिमण्डल और राज्यपाल में शक्ति के लिए संघर्ष होगा।

2. यदि राज्यपाल, राज्य विधानसभा के सदस्यों द्वारा निर्वाचित हो तो वह राजनीतिक रूप से उनका ऋणी होता हुआ सदैव उनके हाथों में कठपुतली बना रहेगा, क्योंकि राज्यपाल का निर्वाचन स्थायी न होते हुए केवल कुछ वर्षों के लिए होगा, इसलिए वह पुनर्निवाचन की आ"ाा में मण्डल के बहुसंख्यक दलों को प्रसन्न करने यत्न करता रहेगा।

3. जनता द्वारा निर्वाचित राज्यपाल, अपने राज्य की जनता का प्रतिनिधित्व तो करेगा, परन्तु केन्द्रीय सरकार का नहीं। इस दि"ाा में एक निर्वाचित राज्यपाल, संघ तथा राज्य सरकारों में, किसी बात पर मतभेद अथवा वाद–विवाद हो जाने पर केन्द्रीय सरकार का पक्ष नहीं कर सकेगा, न ही उसके हित का रक्षा कर सकेगा।

योग्यताएँ (Qualifications)– अनुच्छेद 157 के अन्तर्गत राज्यपाल के पद के लिए निम्नलिखित योग्यताएँ नि"चत की गई हैं :–

1. वह भारत का नागरिक हो।
2. उसकी आयु 35 वर्ष से कम न हो।
3. पागल व दिवालिया न हो।
4. उस पर कोई न्यायिक कार्यवाही न हो।

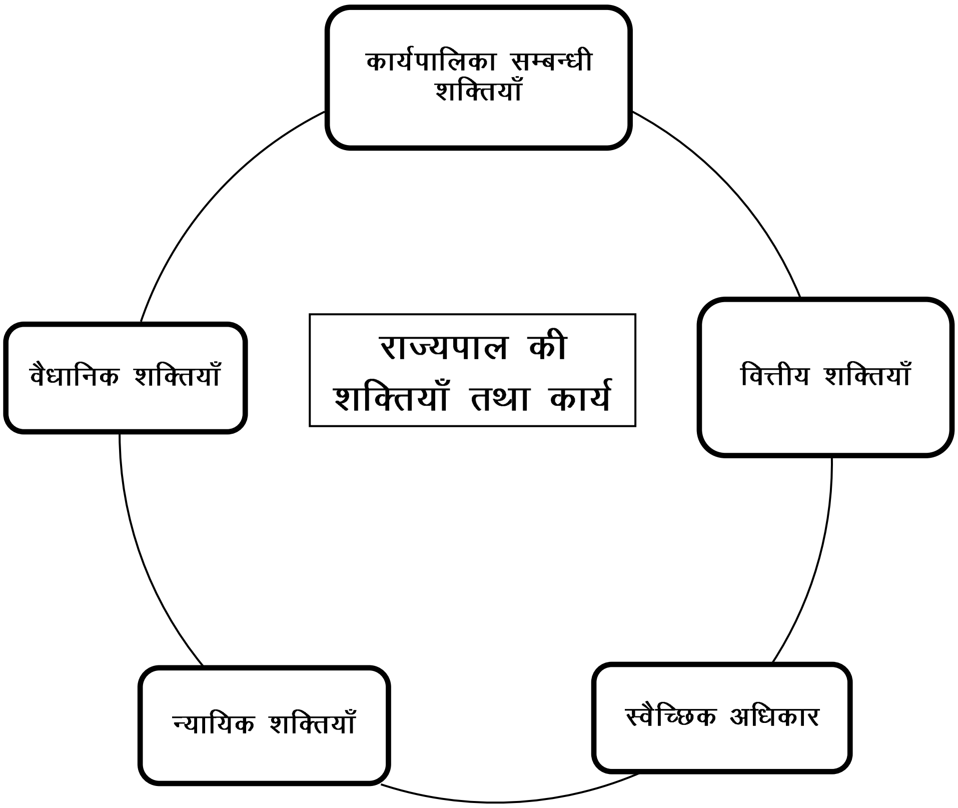

4.3.2. राज्यपाल की शक्तियाँ तथा कार्य (Powers and Functions of Governor)

भारतीय संविधान के द्वारा राज्यपाल को बहुत व्यापक शक्तियाँ प्रदान की गई हैं। राज्य में राज्यपाल को लगभग वही शक्तियाँ तथा अधिकार प्राप्त हैं, जो कि केन्द्र में राष्ट्रपति को प्राप्त हैं। अतः दोनों की शक्तियों को कुछ क्षेत्रों को छोड़कर बहुत समानता है। संविधान वि"ोषज्ञ **डी.डी. बसु (D.D. Basu)** के शब्दों में, ''राज्यपाल की शक्तियाँ राष्ट्रपति के समान हैं, सिर्फ कूटनीतिक, सैनिक तथा संकटकालीन अधिकारों को छोड़कर।'' राज्यपाल की शक्तियों का अध्ययन एवं वि"लेषण निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है –

1. **कार्यपालिका सम्बन्धी शक्तियाँ (Executive Powers)**– भारतीय संविधा के अनुच्छेद 154 के अनुसार, ''राज्य की कार्यपालिका शक्तियाँ संविधान द्वारा गवर्नर को प्राप्त हैं जिनका प्रयोग वह या तो स्वयं प्रत्यक्ष रूप से करता है या संविधान के अनुसार अपने अधीनस्थ कर्मचारियों द्वारा करता है।'' संविधान के अनुच्छेद 166 में कहा गया है कि राज्य के समस्त कार्य राज्यपाल के नाम से संचालित होंगे। अतः राज्यपाल ही राजय की काग्रपालिका का प्रधान होता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि राज्य की ओर से किए जाने वाले सभी कार्यपालिका

सम्बन्धी कार्य उसी के नाम से किए जाते हैं। अतः वह उन समस्त विषयों पर शासन का संचालन करता है जिनके सम्बन्ध में राज्य के विधानमण्डल को कानून बनाने का अधिकार है।

2. **वैधानिक शक्तियाँ (Legislative Powers)**– राज्यपाल की वैधानिक शक्तियाँ निम्नलिखित हैं –

क. विधानसभा का कार्यकाल पाँच वर्ष होता है, परन्तु राज्यपाल संविधान के अनुच्छेद 174 के भाग (2) के अन्तर्गत उसे पाँच वर्ष से पूर्व भी भंग कर सकता है। राज्यपाल के लिए यह आव"यक है कि वह वर्ष में कम–से–कम एक अधिवे"ान अव"य बुलाए। राज्यपाल को विधानसभा के एक अधिवे"ान की समाप्ति के दिन से छह मास के अन्दर–अन्दर दूसरा अधिवे"ान अव"य बुलाना चाहिए।

ख. राज्यपाल को यह अधिकार होता है कि वह आम चुनाव के बाद विधानपालिका का अधिवे"ान बुलाए और उसके सामने नीति तथा भावी कार्यक्रम का वर्णन करें। इस प्रकार उसे प्रतिवर्ष विधानमण्डल के प्रथम अधिवे"ान में ऐसा भाषण देने का अधिकार है।

ग. राज्य विधानमण्डल जो बिल पास करता है, वह राज्यपाल के पास स्वीकृति के लिए भेजा जाता है। इस अनुमति के प"चात् वह एक्ट बनता है तथा कानून के रूप में लागू किया जाता है। राज्यपाल कसिी भी बिल को अपनी सिफारि"ा के साथ विधानमण्डल को पुनर्विचार के लिए वापस भेज सकता है, परन्तु दूसरी बार विधानमण्डल जिस भी रूप में उसे स्वीकार करके राज्यपाल के पास भेज दे तो उसे अनुमति देनी पड़ती है। लेकिन संविधान के अनुच्छेद 200 के अनुसार राज्यपाल कुछ बिलों को राष्ट्रपति के पास उनकी अनुमति के लिए भेज सकता है। लेकिन विधानपालिका द्वारा पास बिल जो प्रान्तीय उच्च न्यायालय की शक्तियों से सम्बन्धित हो। धन बिल जिस भी रूप में विधानमण्डल द्वारा पास किए जाते हैं, उसी रूप में राज्यपाल उनको अनुमति देता है। वह उन्हें पुनर्विचार के लिए विधानमण्डल को लौटा नहीं सकता।

घ. जिन राज्यों में द्वि–सदनात्मक विधानपालिका है, वहाँ ऊपरी सदन (विधान–परिषद्) के कुछ सदस्यों को राज्यपाल सामाजिक सेवाओं और योग्यताओं के आधार पर मनोनीत करता है। अनुच्छेद 171 (5) के अनुसार यदि राज्य में ऐंग्लो–इण्डियन को विधानसभा में उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं हो सका हो, तो उनके कुछ व्यक्तियों को राज्यपाल विधानसभा का सदस्य मनोनीत कर सकता है।

ङ. जब राज्य के विधानमण्डल का अधिवे"ान न हो रहा हो, तो अनुच्छेद 213 के अनुसार राज्यपाल अध्यादे"ा जारी कर सकता है। इस अध्यादे"ा की वही स्थिति होती है जो कि विधानमण्डल द्वारा पास किए हुए कानूनों की होती है, परन्तु इसकी अवधि केवल छः मास होती है। किसी अध्यादे"ा के लागू किए जाने के प"चात् जब विधानमण्डल का अधिवे"ान हो तो इस अध्यादे"ा को विधानमण्डल के सम्मुख रखा जाता है। अगर छः सप्ताह के अन्दर विधानमण्डल उसकी पुष्टि न करे, तो वह अध्यादे"ा समाप्त हो जाता है। राज्यपाल साधारण समय

में अपने इस अधिकार का प्रयोग मन्त्रि–परिषद् की सलाह से करता है। अतः विधानमण्डल में उसको प्रायः स्वीकृति मिल जाती है, क्योंकि वहाँ मन्त्रि–परिषद् को बहुमत प्राप्त होता है।

3. **वित्तीय शक्तियाँ (Financial Powers)**– राज्यपाल को निम्नलिखित वित्तीय शक्तियाँ प्राप्त हैं –

क. राज्यपाल की सिफारि"ा के बिना कोई धन विधेयक विधानसभा में पे"ा नहीं किया जा सकता अर्थात् विधानसभा से धन की माँग राज्यपाल की सिफारि"ा पर ही की जा सकती है।

ख. वार्षिक बजट राज्यपाल वित्त मन्त्री द्वारा विधानसभा में पे"ा करवाता है। कोई भी अनुदान की माँग (demand for grant) बजट में बिना राज्यपाल की आज्ञा के प्रस्तुत नहीं हो सकती।

ग. राज्य की आकस्मिक निधि (contingency fund of the state) पर राज्यपाल का ही नियन्त्रण है। यदि संकट के समय आव"यकता पड़े तो राज्यपाल इसमें से आव"यकतानुसार व्यय कर लेता है तथा उनके प"चात् राज्य विधानमण्डल से उस व्यय की स्वीकृति ले लेता है।

4. **न्यायिक शक्तियाँ (Judicial Powers)**– राज्यपाल को निम्नलिखित न्यायिक शक्तियाँ प्राप्त हैं –

क. उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधी"ा तथा अन्य न्यायधी"ाों की नियुक्ति करते समय राष्ट्रपति राज्यपाल की सलाह लेता है।

ख. जिला न्यायधी"ाों की नियुक्ति और पदोन्नति राज्यपाल ही करता है।

ग. राज्यपाल यह भी देखता है कि किसी न्यायालय के पास अधिक कार्य तो नहीं है, यदि है, तो वह आव"यकतानुसार अधिक न्यायधी"ाों को नियुक्त करता है।

घ. राज्यपाल उस अपराधी के दण्ड को क्षमा कर सकता है, घटा सकता है तथा कुछ समय के लिए स्थगित कर सकता है, जिसे राज्य के कानून के विरूद्ध अपराध करने पर दण्ड मिला हो। राज्यपाल की क्षमादान की शक्ति के निम्नलिखित रूप हो सकते हैं :–

1. **क्षमा (Pardon)** – किसी व्यक्ति को अपराध के लिए दिया गया दण्ड पूरी तरह समाप्त हो जाता है तथा वह व्यक्ति सभी दण्ड तथा आरोपों से मुक्त हो जाता है।

2. **लघुकरण (Commuting)** – इसमें एक प्रकार के दिए गए दण्ड के स्थान पर उससे हल्के दण्ड दिया जाता है; जैसे यदि मृत्यु–दण्ड का निर्वासन, निर्वासन को कठोर कारावास, कठोर कारावास को साधारण कारावास तथा साधारण कारावास को जुर्माने में लघुकरण किया जा सकता है।

3. परिहार (Remission) – इसके अन्तर्गत दण्डादे"ा की प्रकृति को बदले बिना उसे कम किया जा सकता है; जैसे कारावास को ही कम समय का कारावास कर दिया जाए। उदाहरण के लिए 10 वर्ष के कारावास को एक वर्ष का कारावास कर दिया जाए।

4. राहत (Respite) – इसके अन्तर्गत किसी वि"ोष परिस्थिति को देखते हुए दण्ड की किसी कार्रवाई को समाप्त कर देना अथवा कम कड़े दण्ड का आदे"ा देना। उदाहरण के लिए अपराधी गर्भवती स्त्री का दण्ड कम करना।

5. प्रतिलम्बन (Reprieve) – इसका अर्थ है – किसी परिस्थिति के कारण अपराधी को दिए गए दण्ड को पालन करने से रोकना। यह केवल दण्ड के पालन करने में विलम्ब करने के लिए किया जाता है। वह इस अधिकार का प्रयोग उन विषयों में नहीं कर सकता जो संघ सरकार की न्यायपालिका के अधीन हो।

5. स्वैच्छिक अधिकार (Discretionary Powers)– कुछ राज्यों के राज्यपालों को स्वैच्छिक अधिकार भी दिए गए हैं; जैसे –

क. आसाम के राज्यपाल को अपने राज्य के अनुसूचित क्षेत्रों के सम्बन्ध के विषय में राष्ट्रपति को प्रतिवेदन का अधिकार है।

ख. सिक्किम के राज्यपाल को सिक्किम राज्य में शान्ति व्यवस्था बनाए रखने एवं समस्त वर्गों के सामाजिक–आर्थिक विकास के लिए वि"ोष उत्तरदायित्व सौंपा गया है।

ग. संघीय सरकार समय – समय पर राज्य सरकारों को विभिन्न प्रकार के निर्दे"ा भेजती रहती है। इनका पालन न करने पर राज्यपाल राज्य सरकार के विरूद्ध रिपोर्ट संघीय सरकार को भेज सकता है।

घ. राज्यपाल समय–समय पर अपने मुख्यमन्त्री एवं मन्त्रि–परिषद् को पराम"र्ा, प्रोत्साहन एवं चेतावनी दे सकता है। इस शक्ति का प्रयोग करते समय उसे किसी की सलाह नहीं लेनी पड़ती।

ड. राज्यपाल राज्य विधानमण्डल द्वारा पारित विधेयकों को राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए भेज सकता है। इस शक्ति का प्रयोग भी वह स्वेच्छा से करता है।

च. यदि कोई निर्णय एक मन्त्री अथवा मुख्यमन्त्री ने अपने–आप से लिया हो तो राज्यपाल ऐसे निर्णय को सम्पूर्ण मन्त्रिमण्डल के सामने रखने के लिए मुख्यमन्त्री को कह सकता है।

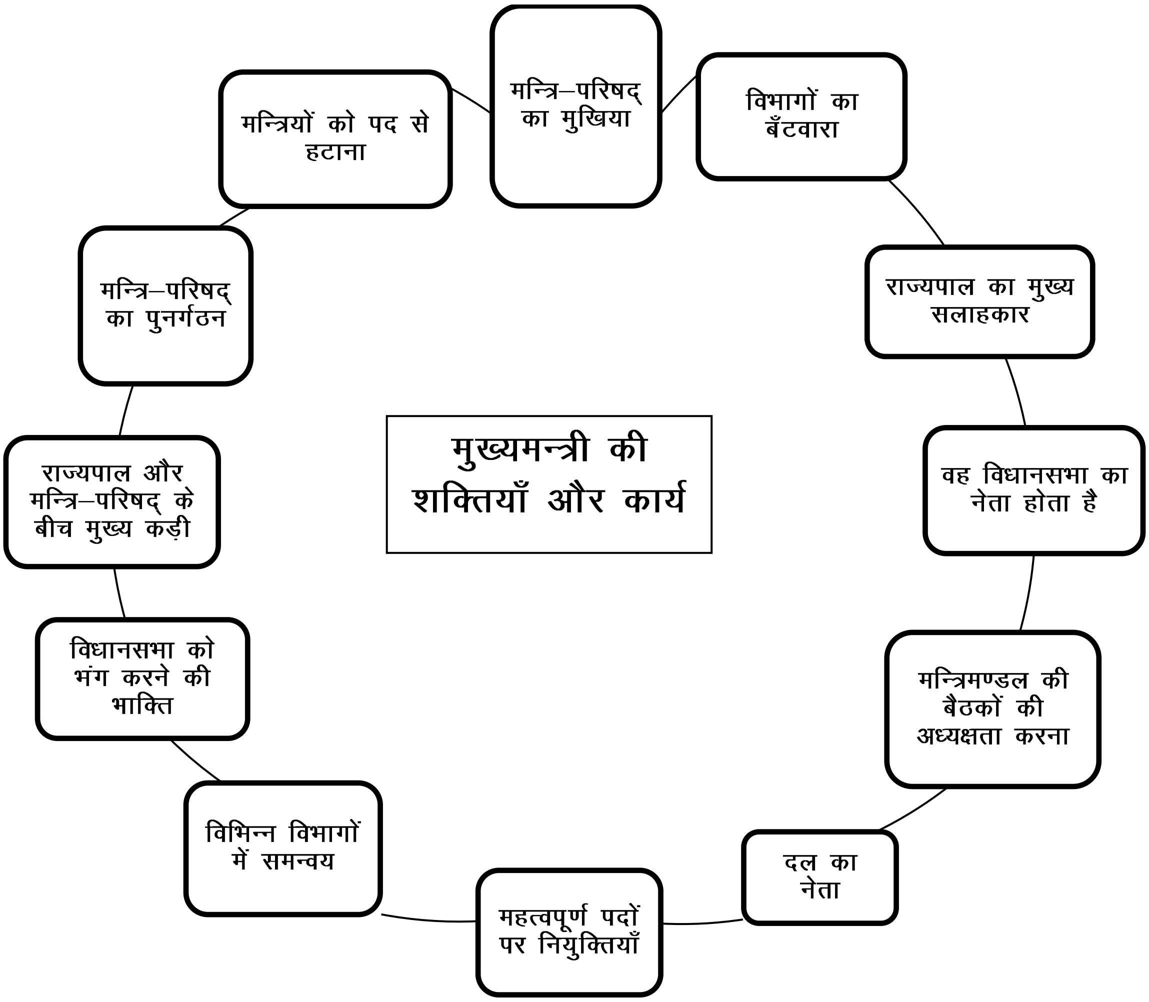

4.4 पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

4.4.1. मुख्यमन्त्री की शक्तियाँ और कार्य (Powers and Functions of Chief Minister)

मुख्यमन्त्री के कार्य बहुत विस्तृत हैं, उसकी शक्तियाँ भी बहुत विस्तृत हैं और इसी कारण उसकी स्थिति बहुत महत्वपूर्ण है। राज्य में उसकी स्थिति लगभग वैसी ही होती है, जैसी कि प्रधानमन्त्री की केन्द्र में। मुख्यमन्त्री राज्य में लगभग सर्वेसर्वा ही होता है। यद्यपि बहुत कुछ मुख्यमन्त्री के अपने व्यक्तित्व पर निर्भर है, अर्थात् वह कितना बड़ा नेता है, उसकी पार्टी का बहुमत कितना है, पार्टी के अन्दर उसका कैसा स्थान है, पार्टी में कितना संगठन तथा अनु"ाासन है, इन सब बातों का उसकी स्थिति पर काफी प्रभाव पड़ता है, तथापि मुख्यमन्त्री के पद में भी इतनी महानता कि कोई भी व्यक्ति जो इस पद को ग्रहण करता है, महान् प्रभाव और शक्तियों का अधिकारी बन जाता है और इस पर यदि उसका व्यक्तित्व भी प्रभाव"ाली हो तो सोने पर सुहागे का कार्य करता है।

1. **मन्त्रि–परिषद् का मुखिया** (Head of the Council of Ministers) – मुख्यमन्त्री अपनी मन्त्रि–परिषद् का नेता होता है और मन्त्रियों की नियुक्ति राज्यपाल उसी की सिफारि"ा पर करता है। वही उनमें शासन के विभागों का बँटवारा करता है। अनुच्छे 163 (1) तथा 164 (1) में इसके इन कार्यों का स्पष्ट वर्णन है। वह जब चाहे उनके विभागों में परिवर्तन भी कर सकता है। यदि कोई मन्त्री उसे सहयोग न दे तो वह उससे त्याग–पत्र मांग सकता है अथवा राज्यपाल से सिफारि"ा करके उसे अपदस्थ करवा सकता है। वह मन्त्रि–परिषद् की बैठकें बुलाता है तथा उनकी अध्यक्षता करता है। प्रान्तीय मन्त्रि–परिषद् की रचना, संगठन एवं कार्य कु"ालता मुख्यमन्त्री पर ही निर्भर करती है।

2. **मन्त्रियों को पद से हटाना** (Removal of Ministers)– संविधान के अनुसार मन्त्री राज्यपाल की इच्छा–पर्यन्त अपने पद पर रहते हैं, परन्तु व्यवहार में वे उतने समय तक पद पर रहते हैं जब तक वे मुख्यमन्त्री के वि"वास–पात्र रहते हैं। मुख्यमन्त्री तथा किसी अन्य मन्त्री के बीच मतभेद होने पर मन्त्री को अपना त्याग–पत्र देना पड़ता है। यदि कोई मन्त्री अपना त्याग–पत्र देने से इन्कार करता है तो मुख्यमन्त्री राज्यपाल से कहकर उसको पद से हटवा सकता है। उदाहरणस्वरूप, पंजाब के भूतपूर्व मुख्यमन्त्री सरदार प्रताप सिंह 'कौरों' ने राव वीरेन्द्र सिंह को राज्यपाल से कहकर मन्त्री–पद से हटवाया था। जून, 1983 को हरियाणा के तत्कालीन मुख्यमन्त्री श्री भजनलाल ने दो मन्त्रियों श्री लछमन सिंह तथा श्री फूलचन्द को राज्यपाल से कहकर पदच्युत (Dismiss) करवाया था। इसी तरह 17 मई, 2003 को उत्तर प्रदे"ा की तत्कालीन मुख्यमन्त्री सुश्री मायावती ने राज्य–मन्त्री अमरमणि त्रिपाठी को बहुचर्चित मधुमिता शुक्ला हत्याकांड के कारण मन्त्रिमण्डल से बर्खास्त कर दिया था। इस प्रकार स्पष्ट है कि ऐसे विषयों पर मुख्यमन्त्री का संकेत ही काफी होता है।

3. **विभागों का बँटवारा** (Distribution of Portfolios)– मुख्यमन्त्री ही मन्त्रि–परिषद् के सदस्यों में विभागों का बँटवारा करता है। इस काम में कई बार मुख्यमन्त्री को कठिनाई का सामना करना पड़ता है, क्योंकि एक ही समय में कई मन्त्री एक ही विभाग को लेना चाहते हैं। य़द्यपि अन्तिम रूप में होता वही है, जो मुख्यमन्त्री चाहता है, अतः ऐसी स्थिति में मुख्यमन्त्री को बड़ी समझदारी से काम लेना पड़ता है कि कहीं उसके दल में फूट न पड़े।

4. **मन्त्रि–परिषद् का पुनर्गठन** (Re-organization of the Council of Ministers)– मुख्यमन्त्री वास्तविक कार्यपालिका का मुखिया है, इसलिए प्र"ाासन के संयुक्त उत्तरदायित्व की पूर्ति के लिए मुख्यमन्त्री मन्त्रि–परिषद् में प्रत्येक प्रकार के परिवर्तन कर सकता है। यदि कोई मन्त्री मुख्यमन्त्री की नीति से सहमत नहीं है तो मुख्यमन्त्री उसको त्याग–पत्र देने के लिए कह सकता है। यदि कोई मन्त्री त्याग–पत्र देने से इन्कार करता है तो मुख्यमन्त्री उसको राज्यपाल द्वारा अपदस्थ (Dismiss) करवा सकता है।

5. राज्यपाल का मुख्य सलाहकार (Chief Advisor to the Governor)– मुख्यमन्त्री राज्यपाल का मुख्य सलाहकार होता है और वह प्र"ाासन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रतिदिन सलाह देता है। राज्यपाल साधारणतः मुख्यमन्त्री की सलाह के अनुसार ही कार्य करता है। यदि राज्यपाल ऐसा न करे तो मुख्यमन्त्री त्याग–पत्र दे सकता है, जिसके प"चात् राज्यपाल को बहुमत वाला मन्त्रिमण्डल बनाना कठिन हो जाता है।

6. राज्यपाल और मन्त्रि–परिषद् के बीच मुख्य कड़ी (Main link between Council of Ministers and the Governor)– मन्त्रि–परिषद् तथा राज्यपाल के मध्य मुख्यमन्त्री प्रमुख कड़ी है। वह ही राज्यपाल को मन्त्रि–परिषद् के निर्णयों के बारे में सूचित करता है और राज्यपाल के विचार मन्त्रि–परिषद् के सामने रखता है। उसकी आज्ञा के बिना कोई मन्त्री राज्यपाल को अपने विभाग सम्बन्धी कार्य के लिए नहीं मिल सकता।

7. वह विधानसभा का नेता होता है (He is the Leader of the Legislatvie Assembly)– द्वि सदनीय विधानमण्डल वाले राज्यों में भी विधानमण्डल की सारी शक्ति वास्तव में विधानसभा में केन्द्रित होती है ओर उसमें बहुमत का नेता होने के नाते मुख्यमन्त्री सदन का भी नेता माना जाता है। दूसरे सदन अर्थात् विधान–परिषद् के पास कोई वास्तविक शक्ति नहीं होती है। अतः मुख्यमन्त्री अपने प्रभाव से जो भी चाहे विधानमण्डल से पास करवा लेता है। वह सरकार की मुख्य नीति की घोषणा करता है और उसके पराम"र् से विधानमण्डल का अधिवे"ान बुलाया जाता है ओर उसका कार्यक्रम नि"िचत किया जाता है।

8. विधानसभा को भंग करने की शक्ति (The Power to get the state legislative assembly dissolved)– प्रान्तीय विधानसभा को कार्यकाल के पूरा होने से पहले भंग करने का अधिकार संवैधानिक रूप से राज्यपाल को प्राप्त है, परन्तु राज्यपाल साधारणतः अपनी इस शक्ति का प्रयोग मुख्यमन्त्री की सलाह से ही करता है। मुख्यमन्त्री स्वयं त्याग–पत्र देकर भी राज्यपाल को विधानसभा भंग अथवा स्थगित करने पर बाध्य कर सकता है।

9. मन्त्रिमण्डल की बैठकों की अध्यक्षता करना (To Preside over the meetings of the Cabinet)– मुख्यमन्त्री को ही मन्त्रिमण्डल की बैठकें बुलाने, उनका कार्यक्रम तैयार करने तथा उनकी अध्यक्षता करने का अधिकार है। मन्त्रिमण्डल की बैठकों में निर्णय भी प्रायः उसी की इच्छानुसार होते हैं। जनता तथा विधानसभा के सामने इन निर्णयों की घोषणा मुख्यमन्त्री ही करता है।

10. विभिन्न विभागों में समन्वय (Co-ordination among different Departments)– शासन के विभिन्न विभागों में तालमेल होना आव"यक है, क्योंकि एक विभाग की नीतियों का दूसरे विभाग पर अव"य प्रभाव पड़ता है। यह तालमेल मुख्यमन्त्री द्वारा ही स्थापित किया जाता है। मुख्यमन्त्री विभिन्न विभागों की देखभाल करता है और इस बात का ध्यान रखता है कि किसी विभाग की नीति का किसी दूसरे विभाग पर बुरा प्रभाव न पड़े।

11. दल का नेता (Leader of the Party)– मुख्यमन्त्री राज्य में अपनी पार्टी का नेता होता है। पार्टी की लोकप्रियता एवं चुनावों में सफलता मुख्यमन्त्री द्वारा अपनाई गई नीतियों पर निर्भर करती है। चुनाव के समय पार्टी की टिकटों को बाँटने में मुख्यमन्त्री की भूमिका महत्वपूर्ण होती है और वह अपनी पार्टी के उम्मीदवारों की सफलता के लिए सार्वजनिक सभाओं में भाषण देता है तथा पार्टी प्रचार के साधन अपनाता है।

12. महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्तियाँ (Appointment to Important posts)– राज्य में महत्वपूर्ण पदों–लोक सेवा आयोग तथा अन्य आयोगों के अध्यक्ष तथा सदस्य, महाधिकरणों आदि पदों पर नियुक्तियाँ राज्यपाल द्वारा की जाती हैं। वह इन पदों पर नियुक्तियाँ मुख्यमन्त्री की सिफारि"ा पर ही करता है। अतः इन नियुक्तियों के मामले में उसकी भूमिका बड़ी महत्वपूर्ण होती है।

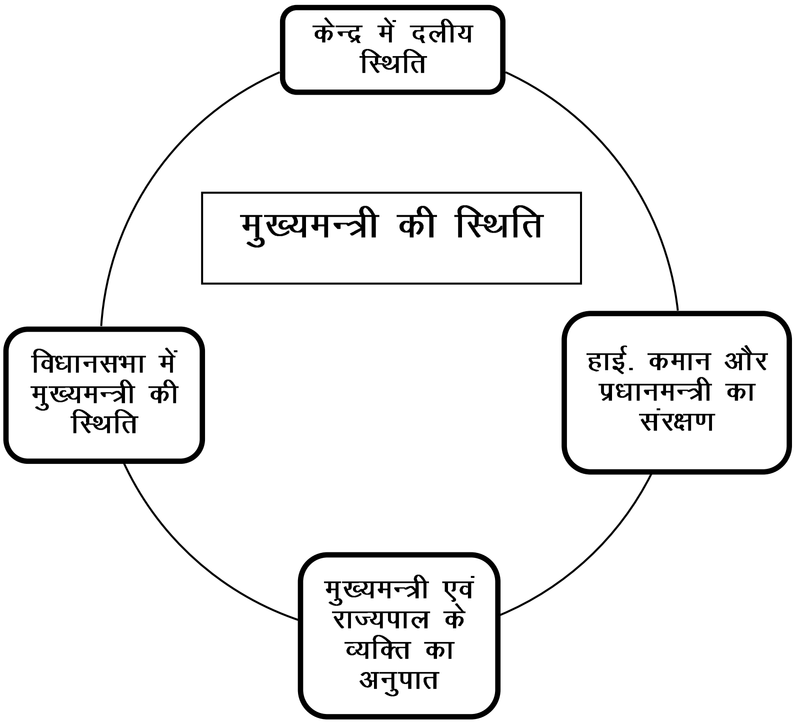

4.4.2. मुख्यमन्त्री की स्थिति (Position of the Chief Minister)

मुख्यमन्त्री की शक्तियों व अधिकारों को देखकर यह स्पष्ट हो जाता है कि उसको राज्य के प्र"ाासन में बहुत महत्वपूर्ण स्थिति प्राप्त है। वह मन्त्रि–परिषद् का निर्माण करता है तथा अपनी इच्छानुसार जिस मन्त्री को चाहे हटा सकता है। वह राज्यपाल का मुख्य सलाहकार है। वह राज्यपाल और मन्त्रिमण्डल के बीच कड़ी का काम करता है। मुख्यमन्त्री के त्याग–पत्र देने का अर्थ समस्त मन्त्रि–परिषद् का त्याग–पत्र होता है। वह राज्य विधानसभा

का नेता भी होता है तथा विधानसभा को जब चाहे भंग करवा सकता है। परन्तु इतना होते हुए भी उसकी वास्तविक स्थिति काफी हद तक परिस्थितियों तथा उसके व्यक्तित्व पर निर्भर करती है।

वास्तव में मुख्यमन्त्री की स्थिति अनेक बातों पर निर्भर करती है, जिसमें मुख्य निम्नलिखित हैंः–

1. **केन्द्र में दलीय स्थिति** (Party Position in Centre)– केन्द्र में यदि शासक दल वही है जो प्रान्त में है तो मुख्यमन्त्री की स्थिति इस बात पर निर्भर करती है कि केन्द्र में शासक दल की स्थिति क्या है ? जब श्रीमती इन्दिरा गाँधी प्रथम बार प्रधानमन्त्री बनीं, तो मुख्यमन्त्रियों ने श्रीमती इन्दिरा गाँधी को प्रधानमन्त्री बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी और इसी कारण मुख्यमन्त्रियों को 'किंग मेकर्स' कहा जाने लगा, परन्तु 1971 के लोकसभा चुनाव में श्रीमती इन्दिरा गाँधी को भारी बहुमत प्राप्त होने के कारण मुख्यमन्त्रियों की स्थिति कमजोर पड़ गई थी। मई 1991 में श्री राजीव गाँधी की मृत्यु के बाद कांग्रेस (आई) हाई कमान की स्थिति मजबूत हो गई थी।

2. **विधानसभा में मुख्यमन्त्री की स्थिति** (Position of Chief Minister in Legislative Assembly)– यदि मुख्यमन्त्री उस दल का नेता है, जिसे विधानसभा में स्पष्ट बहुमत प्राप्त है, तब उसकी स्थिति उस मुख्यमन्त्री की स्थिति से शक्ति"ाली होगी, जो कि मिले–जुले दलों के मन्त्रिमण्डल का नेता है।

3. **हाई. कमान और प्रधानमन्त्री का संरक्षण** (Protection from High Command and Chief Minister)– जिस मुख्यमन्त्री को हाई. कमान और प्रधानमन्त्री का संरक्षण प्राप्त हो, उस मुख्यमन्त्री की स्थिति शक्ति"ाली होती है और वह विधानसभा में गुटबन्दी उत्पन्न नहीं होने देता।

4. **मुख्यमन्त्री एवं राज्यपाल के व्यक्ति का अनुपात** (Personality proportion of Chief Minister and Governor)– मुख्यमन्त्री की स्थिति उसके अपने व्यक्तित्व तथा राज्यपाल के व्यक्तित्व पर निर्भर करती है। यदि राज्यपाल कमजोर व्यक्तित्व वाला है, तो मुख्यमन्त्रियों की स्थिति मजबूत हो जाती है, परन्तु इसके विपरीत यदि राज्यपाल का व्यक्तित्व प्रभाव"ाली है तब वह अवसर मिलते ही मुख्यमन्त्री को नीचा दिखा सकता है।

4.5 स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

निचे कुछ प्र"न दिए गए हैं, आपने उनका उत्तर देना है :–

(i) राज्यपाल की नियुक्ति किस अनुच्छेद में दी गई है ?

(ii) राज्यपाल की नियुक्ति कौन करता है ?

(iii) मुख्यन्त्रि की नियुक्ति कौन करता है ?

(iv) राज्य में वास्तविक कार्यपालक कौन है ?

(v) मन्त्रियों में विभागों का बंटवारा कौन करता है ?

(vi) राज्यपाल के पद के लिए कम से कम कितनी आयु सीमा होनी चाहिए?

4.6. सारांश (Summary)

ऊपर दिए गए अध्याय का अध्ययन करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि राज्य का प्र”ाासन राज्य सचिवालय के द्वारा चलाया जाता है। परन्तु नितियों का निर्माण विधानपालिका के द्वारा किया जाता है और इन नीतियों को लागू करने का कार्य सचिवालय के द्वारा किया जाता है। अतः हम कह सकते हैं कि सचिवालय तथा विधायिका एक साथ मिलकर कार्य करते हैं।

राज्य में राज्यपाल तो केवल नाममात्र का कार्यपाल होता है, वास्तविकता में कार्यपालक तो राज्य में मुख्यमन्त्रि तथा उसकी मन्त्रि परिषद् होती है क्योंकि कार्यपालिका शक्तियों का प्रयोग वास्तविकता में मुख्यमन्त्री के द्वारा ही किया जाता है अधिनियमों या प्रस्तावों को पास करके विधायिका राज्यपाल के पास अनुमति के लिए भेजती है और उस प्रस्ताव पर राज्यपाल को अपनी अनुमति देनी आव”यक होती है। राज्यपाल प्रस्ताव को एक बार पुनर्विचार के लिए विधायिका को भेज सकता है, परन्तु जब विधायिका उस प्रस्ताव को ज्यों का त्यों भे दे तो राज्यपाल को अपनी अनुमति देनी पड़ती है इसलिए हम मुख्यमन्त्री तथा उसकी मन्त्रिपरिषद को वास्तविक कार्यपालिका कहते हैं।

मुख्यमन्त्री अपने सारे कार्य मन्त्रिपरिषद् की सलाह पर करता है, मुख्यमन्त्री तब तक अपने पद पर रह सकता है जब तक उसी विधानपालिका में बहुमत प्राप्त हो यदि मुख्यमन्त्री के पास अपने विधायकों का बहुमत नहीं है तो उसे अपनी विधानसभा भंग करनी पड़ती है। राज्य प्र”ाासन में सभी विकास कार्य और नितियों को राज्यपाल की अनुमति के बाद ही लागू किया जा सकता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि राज्य एक प्र”ाासन राज्यपाल है और मुख्यमन्त्रि के सहयोग से चलता है, ये एक सिक्के के दो पहलू हैं इनमें से दोनों अलग–अलग विचारधारा से कार्य नहीं कर सकते। सभी कार्य और प्रस्तावों को पास करने के लिए दोनों का आपसी सहयोग अनिवार्य है।

4.7. सूचक शब्द (Key Words)

केन्द्रिय सचिवालय –केन्द्रिय सचिवालय, अधिनियम, विधेयक, आयातकाल, संवैधानिक मुखिया, वास्तविक कार्यपालक

अधिनियम –जब भी कोई प्रस्ताव संसद या विधायिका में वाद–विवाद के लिए रखा जाता है तो और उस पर राष्ट्रपति या राज्यपाल की अनुमति मिल जाती है तो उसे अधीनियम कहते हैं।

विधेयक –जब कोई प्रस्ताव विधायिका में वाद–विवाद के लिए रखा जाता है तो उसे विधेयक कहते हैं।

आपातकाल –दे”ा में ऐसी स्थिति जिसमें दे”ा का प्र”ाासन तथा राजनीति गड़बड़ा जाए तो उसे आपातकाल कहते हैं।

संवैधानिक मुखिया –संवैधानिक के अनुसार जिसे दे”ा का प्रथम व्यक्ति माना जाता है जिसके नाम पर सभी कार्य होते हैं उसे संवैधानिक मुख्या कहा जाता है।

वास्तविक कार्यपाल –वह व्यक्ति जो कार्यपालिका शक्तियों का प्रयोग करता है उसे वास्तविक कार्यपालक कहा जाता है।

4.8. स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

Q.1. केन्द्रिय सचिवालय तथा राज्य सचिवालय में अंतर द”ार्एं।

Q.2. राज्यपाल की नियुक्ति व कार्यों की चर्चा करें।

Q.3. मुख्यमन्त्री के निर्वाचन व कार्यों का विवरण।

Q.4. मुख्यमन्त्री की स्थिति की चर्चा करें।

Q.5. मुख्यमन्त्री की शक्तियों की व्याख्या करें।

4.9 उत्तर–स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

(i) अनुच्छेद 153 में

(ii) प्रधामन्त्री की सलाह पर राष्ट्रपति

(iii) राज्यपाल

(iv) मुख्यमन्त्रि

(v) राज्यपाल मुख्यन्त्रि की सलाह पर

(vi) राज्यपाल के पद के लिए कम से कम कितनी आयु सिमा होनी चाहिए

4.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

1. Public Administration, Mcgraw Hill : Laxmi Kant. M
2. New Horizons of Public Administration; Mohit Bhattacharya; Jawahar Publisher & Distribution.
3. Indian Administration; S.R. Maheshwari, Orient Black Swan.
4. Public Administration Theory and Practice; Hoshiar Singh and Pardeep Sachdeva; Pearson.
5. प्र”ाासनिक चिंतक; प्रसाद एण्ड प्रसाद सत्यनारायण; जवाहर पब्लिके”ान एण्ड डिस्ट्रीब्यू”ान।

Subject : लोक प्रशासन	
Course Code **: BA204**	Author **: Dr. Deepak**
Lesson No. **: 5**	Vetter **:Dr.Parveen Sharma**
राज्य प्रशासन	

अध्याय की सरंचना

5.1 अधिगम उद्देश्य **(Learning Objectives)**

5.2. परिचय **(Introduction)**

5.3. अध्याय के मुख्य बिन्दु

5.3.1. राज्य सचिवालय **(Secretariate)**

5.3.2. संरचना **(Organisation)**

5.4 पाठ का आगे का मुख्य भाग **(Further Main Body of the Text)**

5.1.1. सचिवालय के कार्य **(Functions)**

5.1.2. पदस्थिति **(Position)**

5.1.3. मुख्य सचिव की भाक्तियाँ और उसके कार्य **(Powers, Functions and Role of Chief Secretary)**

5.5 स्वयं प्रगति जाँच **(Check your progress)**

5.6. सारांश **(Summary)**

5.7. सूचक शब्द **(Key Words)**

5.8. स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न **(Self- Assessment Questions)**

5.9. उत्तर–स्वयं प्रगति जाँच **(Answers to check your progress)**

5.10. सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें **(References / Suggested Readings)**

5.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय में आप निम्नलिखित विषयों का अध्ययन करोगे :–

- राज्य सचिवालय का गठन का संक्षिप्त विवरण।
- राज्य सचिवालय की प्र"ाासन में भूमिका का अध्ययन।
- प्र"ाासन में मुख्य सचिव की भूमिका का अध्ययन।
- राज्य सचिवालय के कार्यों का संक्षिप्त विवरण।
- राज्य–मन्त्रिमण्डल की भूमिका।

5.2. परिचय (Introduction)

सरकार के कार्य को कार्योन्मुखी मंत्रालयों की सहायता से प्रभावकारी बनाया जाता है । केन्द्र में राज्य स्तर पर भी सचिवालय की सहायता के बिना कोई भी मंत्रालय आसानी से नहीं चल सकता है । सचिवालय नीति – निर्माण में और विधायी कार्यों के निष्पादन में सरकार की राज्य प्रशासन सहायता करता है । इस इकाई में राज्य सचिवालय की संरचना तथा कार्य का वर्णन किया गया है । राज्य सचिवालय में विभागीकरण का ढाँचा तथा सचिवालय विभाग एवं कार्यपालक विभाग में अंतर को स्पष्ट किया गया है। इसके अतिरिक्त मुख्य सचिव की स्थिति तथा कार्य की विवेचना की गई है ।

5.3. अध्याय के मुख्य बिन्दु

5.3.1. राज्य सचिवालय (Secretariate)

प्रत्येक राज्य का अपना सचिवालय होता है जो राज्य प्र"ाासन तंत्र का केन्द्र होता है। इसमें राज्य सरकार के कई विभाग होते हैं। विभागों के राजनीतिक प्रमुख 'मंत्री' और प्र"ाासनिक प्रमुख 'सचिव' होते हैं। मुख्य सचिव पूरे राज्य सचिवालय का प्रधान होता है, जबकि सचिव एक या दो विभाग/विभागों का प्रमुख होता हैं सचिव प्रायः वरिष्ठ आई.ए.एस. अधिकारी होते हैं (जिन्हें सामान्यज्ञ भी कहा जाता है) इस नियम के अपवादस्वरूप लोकनिर्माण विभाग का प्रमुख मुख्य अभियन्ता (वि"ाषज्ञ वर्ग का) होता है। यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि सचिव पूरे राज्य सरकार का सचिव होता है, न कि किसी मंत्री वि"ाष का।

5.3.2. संरचना (Organisation)

विभिन्न राज्यों के सचिवालय में विभागों की संख्या अलग–अलग है जो 15 से 35 के बीच होती है। जो विभाग सभी राज्यों में होते हैं, वे इस प्रकार है :–

(१) सामान्य प्रशासन

(२) सिंचाई और बिजली

(३) गृह

(४) कानून

(५) वित्त

(६) समाज कल्याण

(७) कारागार

(८) आवास

(९) कृषि

(१०) स्थानीय शासन

(११) श्रम और रोजगार

(१२) उत्पादशुल्क व कराधान

(१३) पंचायत राज

(१४) उद्योग धंधे

(१५) लोक निर्माण

(१६) सूचना व प्रचार

(१७) राजस्व

(१८) नागरिक आपूर्ति

(१९) वन

(२०) परिवहन

(२१) शिक्षा

(२२) सहकारिता

(२३) योजना

(२४) स्वास्थ्य

कार्मिक (Personnel)

सचिवालय के विभाग में अधिकारी होते हैं जिनकी नियुक्ति निर्धारित कार्यकाल के लिए होती है। सचिवालय के अधिकारियों का पदक्रम इस प्रकार है :–

- सचिव
- विशेष सचिव / अपर–सचिव
- संयुक्त सचिव
- उपसचिव
- अवर सचिव
- सहायक सचिव

सचिवालय में उक्त अधिकारियों के अधीन निम्नलिखित श्रेणी के कर्मचारी भी होते हैं–

(१) अधीक्षक

(२) सहायक अधीक्षक

(३) उच्च श्रेणी लिपिक

(४) अवर श्रेणी लिपिक

(५) आशुलिपिक–टंकक और टंकक

(६) श्रमिक

5.4 पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

5.4.1. सचिवालय के कार्य (Functions)

सचिवालय स्टाफ एजेंसी हैं। इसका प्रमुख कार्य मंत्री को उसकी भूमिका के निर्वहन में सहायता प्रदान करना है। सचिवालय द्वारा निम्नलिखित कार्य किए जाते हैं :–

- राज्य सरकार की नीतियाँ और कार्यक्रम तैयार करना
- राज्य सरकार की नीतियों और कार्यक्रमों के मध्य तालमेल बनाए रखना
- राज्य का बजट तैयार करना तथा सार्वजनिक व्यय पर नियंत्रण रखना
- विधान, नियम तथा विनियम बनाना
- फील्ड एजेंसियों द्वारा नीतियों और कार्यक्रमों के कार्यान्वयन पर ध्यान देना
- नीतियों के कार्यान्वयन के परिणामों की समीक्षा करना,
- केन्द्र और अन्य राज्य सरकारों के साथ संपर्क बनाए रखना,
- सांगठनिक स्पर्धा विकसित करने के उपाय शुरू करना अर्थात् संगठन और पद्धति से जुड़े कार्य के उपाय करना।
- मंत्रियों को, राज्य विधानमण्डल से जुड़ी जिम्मेदारियों (जैसे सदन में प्रश्नों का उत्तर देना) के निर्वहन में सहायता प्रदान करना।
- विभाग प्रमुखों की नियुक्ति करना तथा वेतन प्रशासन जैसे संस्थापना कार्य की देखरेख करना।
- राज्य सरकार के सूचना भंडार के रूप में कार्य करना।
- राज्य की वित्तीय स्थिति में सुधार लाने की संभावनाओं का पता लगाना।
- सर्वसाधारण की शिकायतें, अभ्यावेदन और अपीलें प्राप्त कर उनका समाधान और निराकरण करना।
- सेवा संबंधी नियमों और उनमें संशोधनों का अनुमोदन करना।

5.4.2. पदस्थिति (Position)

मुख्य सचिव का पद मूलतया ब्रिटि"ा शासनकालीन केन्द्र सरकार की देन हैं। वर्ष 1799 में तत्कालीन गवर्नर जनरल लार्ड वेलेजली ने इस पद का सृजन किया था। इस पद पर पहली बार जी.एस. बालों बैठे थे। समयांतराल पर स्वतन्त्रता प्राप्ति से कई वर्ष पहले ही यह पद केन्द्र सरकार से लुप्त होकर राज्य सरकार का पद बन गया था।

मुख्य सचिव राज्य सचिवालय का शासकीय प्रधान होता है। वह राज्य प्र"ाासन का प्र"ाासनिक प्रमुख होता है तथा राज्य के प्र"ाासनिक पदानुक्रम में उसका सर्वोच्च स्थान है। अन्य सचिवों की तुलना में मुख्य सचिव शीर्ष

होता है। वस्तुतः मुख्य सचिव सचिवों का प्रमुख है तथा सचिवालय के सभी विभाग उसके नियंत्रण में होते हैं। वह पूरे राज्य प्र"ाासन का नेता, मार्गद"ीक और नियंत्रक है। उसकी पदस्थिति अति महत्वपूर्ण है तथा राज्य की प्र"ाासनिक प्रणाली में उसकी अलग–अलग भूमिकाएँ हैं। मंगतराय ने इस संदर्भ में ठीक ही कहा है, ''मुख्य सचिव का कार्य किसी तकनी"ियन या किसी व्यावसायिक के कार्य की तरह नहीं है, न ही वह कु"ाल अभियंता है। वह पहले दर्जे का मजिस्ट्रेट तक नहीं है; वह सरकारी प्रक्रिया का एक भाग तथा जनतांत्रिक गणतंत्र में मानवीय प्रक्रिया का एक अंग है।''

वर्ष 1973 से मुख्य सचिव सभी राज्यों में वरिष्ठतम लोकसेवक माना जाता है। उससे पहले मुख्य सचिव को पंजाब में वित्त आयुक्त से तथा उत्तर प्रदे"ा में राजस्व बोर्ड के सदस्य से कनिष्ठ माना जाता था। दूसरी ओर, तमिलनाडु में मुख्य सचिव वरिष्ठतम लोकसेवक था। तथापि प्र"ाासनिक सुधार आयोग की सिफारि"ा पर व"ाी 1973 में इस पद का मानकीकरण किया गया तथा इस पद को दर्जे और परिलब्धियों दोनों ही दृष्टि से केन्द्र सरकार के सचिव के पद के समतुल्य बनाया गया।

इसके अतिरिक्त, मुख्य सविच पद को कार्यकाल प्रणाली से अलग रखा गया है अर्थात् इस पद का कोई नि"िचत कार्यकाल नहीं है। वैसे प्र"ाासनिक सुधार आयोग ने मुख्य सचिव का कार्यकाल तीन से चार वर्ष रखे जाने की सिफारि"ा की थी किंतु सिफारि"ा को अस्वीकार कर पुरानी प्रणाली ही कायम रखी गई।

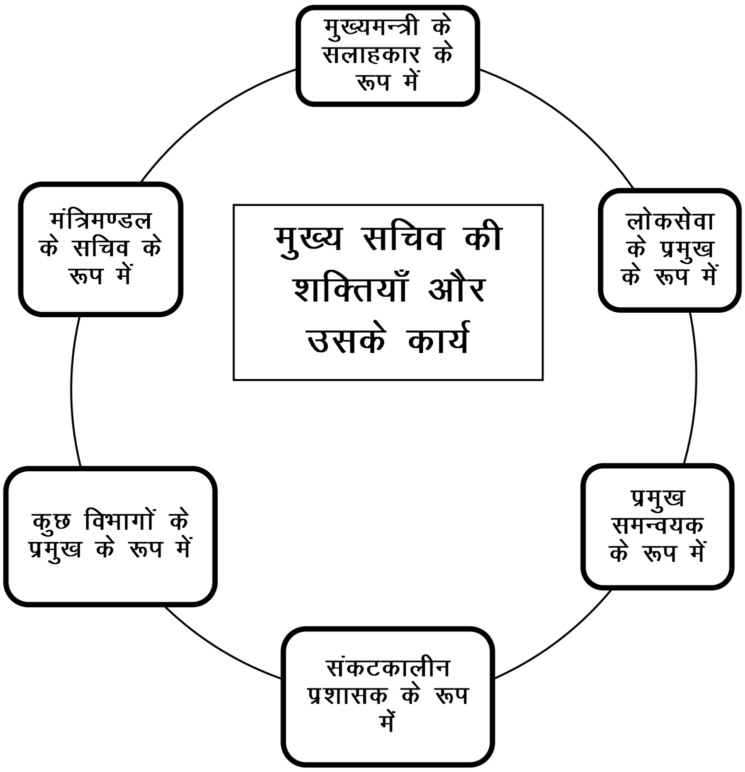

5.4.3. मुख्य सचिव की शक्तियाँ और उसके कार्य (Powers and Functions)

मुख्य सचिव के कार्य और उसकी शक्तियों का उल्लेख राज्य सरकार द्वारा तैयार 'सरकारी कार्य नियमावली (रूल्स ऑफ बिज़नेस)' में है। उसे पारंपरिक आधार पर भी कुछ कार्य शक्तियाँ प्राप्त हैं जिनका विवरण इस प्रकार है –

1. **मुख्यमन्त्री के सलाहकार के रूप में** –मुख्य सचिव राज्य प्र"ाासन से जुड़े सभी मामलों में मुख्यमन्त्री के प्रधान सलाहकार के रूप में कार्य करता है। मुख्यमन्त्री राज्य के शासन से संबंधित सभी नीतिगत मुद्दों पर मुख्य सचिव से पराम"ा करता है। मुख्य सचिव, राज्य के मंत्रियों द्वारा भेजे गए प्रस्तावों से संबंधित प्र"ाासनिक अड़चनों की जानकारी मुख्यमन्त्री को देता है। मुख्य सचिव, राज्य सरकार के सचिवों और मुख्यमन्त्री के बीच की बड़ी के रूप में भी कार्य करता है।

2. **मंत्रिमण्डल के सचिव के रूप में** –मुख्य सचिव राज्य मंत्रिमण्डल के सचिव के रूप में कार्य करता है। वह मंत्रिमण्डल सचिवालय का प्र"ाासनिक प्रमुख होता है तथा आव"यकतानुसार कैबिनेट और इसकी उपसमितियों की बैठक में भाग लेता है। मुख्य सचिव मंत्रिमण्डल की बैठक की कार्यसूची तैयार करता है और बैठक की कार्यवाहीयों का रिकार्ड भी रखता है। वह इन बैठकों में लिए गए निर्णयों को कार्यान्वित करता है।

3. **लोकसेवा के पमुख के रूप में** –मुख्य सचिव राज्य लोकसेवा के प्रमुख के रूप में कार्य करता है। वह राज्य के वरिष्ठ लोकसेवकों की नियुक्ति, स्थानांतरण तथा पदोन्नति से जुड़े मामले देखता है। वह राज्य की लोकसेवा के मनोबल को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है वह सभी लोकसेवकों की चेतना का रखवाला होता है।

4. **प्रमुख समन्वयक के रूप में** –मुख्य सचिव–राज्य प्र"ाासन का प्रमुख समन्वयक (तालमेल बैठाए रखने का कार्य करने वाला) है। सचिवालय स्तर पर उसका कार्य अंतर्विभागीय समन्वयन सुनि"चत करना है। वह सचिवों को अंतर्विभागीय कठिनाइयों के संबंध में सलाह देता है। वह, अंतर्विभागीय विवादों के समाधान के लिए गठित समन्वय समिति का अध्यक्ष होता है। वह विभागों के सचिव की बैठकों की अध्यक्षता भी करता है। सचिवालय स्तर से नीचे के संभागीय आयुक्त, जिलाधी"ाों और जिला प्र"ाासन के विभागध्यक्षों की बैठकों/सम्मेलनों की भी अध्यक्षता मुख्य सचिव द्वारा की जाती है और उनके बीच समन्वयन स्थापित किया जाता है।

5. **कुछ विभागों के प्रमुख के रूप में** –मुख्य सचिव, सचिवालय के कुछ विभागों का भी प्र"ाासनिक प्रमुख होता है। तथापि, हर राज्य में उसकी पदस्थिति एक–सी नहीं होती अर्थात् इस मामले में दे"ाभर में एकरूपता नहीं है। अधिकां"ा राज्यों में सामान्य प्र"ाासन विभाग, कार्मिक विभाग, योजना विभाग और प्र"ाासनिक

सुधार विभाग सीधे तौर पर मुख्य सचिव के प्रभार में होते हैं। राज्य सचिवालय में सामान्य प्र”ाासन विभाग सबसे महत्वपूर्ण होता है जिसका राजनीतिक प्रमुख स्वयं मुख्यमन्त्री होता है। यह विभाग राजय सरकार के समस्त कामकाज को प्रभावित करने वाले विभिन्न मामलों से संबंद्ध है। भारत के प्र”ाासनिक सुधार आयोग ने सिफारि”ा की थी कि सभी राज्यों में कार्मिक विभाग का प्रमुख मुख्य सचिव को ही होना चाहिए।

6. **संकटकालीन प्रशासक के रूप में** –मुख्य सचिव, बाढ़, सूखा, सांप्रदायिक दंगों और अन्य आपदाओं के समय अति महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। ऐसे समय में वह राहत कार्यों में लगे आधिकारियों और एजेंसियों को मार्गद”ान और नेतृत्व प्रदान करता है। मुख्य सचिव सामान्यतः संकटकाल के दौरान उच्च स्तरीय निर्णय लेने के लिए गठित समितियों का अध्यक्ष या महत्वपूर्ण सदस्य होता है। वास्तविकता यह है कि मुख्य सचिव संकटकाल के प्रमुख प्र”ाासक के रूप में कार्य करता है और राहत कार्य से संबद्ध सभी अधिकारियों के लिए राज्य सरकार का वि”ोषरूप से प्रतिनिधित्व करता है।

5.5. स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

निचे कुछ प्र”न दिए गए हैं आपने उनके उत्तर देना है :–

(i) मुख्य सचिव अपने कार्यों के लिए किसको रिपोर्ट करता है ?

(ii) मुख्य–सचिव को कब से राज्यों में वरिष्ठतम लोकसेवक माना जाने लगा है ?

(iii) राज्यों में नाममात्र का प्र”ाासन कौन होता है ?

(iv) आपातकाल के समय राज्यपाल किसकी सलाह पर कार्य करता है ?

(v) राज्य–प्र”ाासन में वरिष्ठतम लोकसेवक कौन होता है ?

5.6. सारांश (Summary)

उपरलिखित विषयों का अध्ययन करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि राज्य मन्त्रिमण्डल नतियों का निर्माण करता है तो सचिवालय उन नीतियों को धरातल पर लागू करने का काम करता है। राज्य प्र”ाासन में सभी समस्याओं का निवारण सचिवालय के द्वारा ही किया जाता है। जब तक मन्त्रिमण्डल और सचिवालय सहयोग से कार्य नहीं करेंगे तब प्र”ाासन अपने उद्दे”यों को प्राप्त करने में सफल नहीं हो पाऐगा। अतः प्र”ाासन में समन्वय का होना अति आव”यक है।

राज्य प्र”ाासन का सारा उत्तरदायित्व राज्य सचिवालय की तर्क नीति तथा विवेक”ाीलता पर निर्भर करता है, क्योंकि सचिवालय तक ....के रूप में कार्य करता है। राज्य सचिवालय समाज की समस्याओं से मन्त्रिमण्डल को

अवगत करवाता है कयोकि इन्हीं समस्याओं के आधार पर मन्त्रिमण्डल नीतियों का निर्माण करने का प्रयास करता है जो हमारे समाज के विकास में सहायक होती है।

राज्य–प्र"ाासन तथा सचिवालय में मुख्य पद मुख्य सचीव का होता है जिसके पदों पर सम्पूर्ण सचिवालय का भार होता है। मुख्य सचिव प्र"ाासन तथा कार्यपालिका में समन्वय का कार्य करता है जो समाज के विकास में मुख्य भूमिका निभाता है, जब तक मुख्य सचिव अपने कार्यो के प्रति सजग नहीं होगा तब तक प्र"ाासन अपनी समस्याओं के निवारण में सहायक सिद्ध नहीं होगा। मुख्य सचिव राज्य कार्यपालिका तथा प्र"ाासन की रीढ़ की हड्डी है। राज्य की विकासकारी योजनाएं तथा नीतियां मुख्य सचिव पर ही निर्भर करती है। इसलिए मुख्य सचिव को एक सजग ......तहत कार्य करने चाहिए तथा साथ में विवेक"ाील भी होना चाहिए ताकि समाज की समस्याओं के लिए नितियों को बनाया जा सके।

5.7. सूचक शब्द (Key Words)

- **सचिवालय** –राज्य प्रशासन की नीतियों के क्रियान्वयन के लिए ऐसे प्रशासनिक अधिकारियों का समुह जो साथियों के रूप में कार्य करते हैं।
- **कार्यपालिका** –राज्य स्तर पर अस्थाई तौर पर चुने हुए नेता जो नीतियों का निर्माण करते हैं कार्यपालिका में शामिल है।
- **विधानपालिका** –राज्य स्तर पर जो विधि का निर्माण करे उसे विधानमण्डल कहा जाता है।
- **मुख्य सचिव** –राज्य में प्र"ाासनिक अधिकारियों का सर्वोपरि सिविल सेवक मुख्य सचिव कहलाता है।
- **अधिनियम** –विधानमण्डल के द्वारा पास किया गया बिल जो मुख्य कार्यपालिका की स्वीकृति के बाद लागू होता है अधिनियम कहलाता है।

5.8. स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions) :

Q.1. मन्त्रिमण्डल के निर्वाचन की प्रक्रिया और कार्यों की व्याख्या कीजिए।

Q.2. मुख्य सचिव के कार्यों की विवेचना कीजिए।

Q.3. राज्य सचिवालय से आप क्या समझते हैं उनके कार्य की विवेचना कीजिए।

Q.4. राज्य सचिवालय की भूमिका पर व्याख्या कीजिए।

5.9.उत्तर–स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress):

(i) मुख्यमन्त्रि को (ii) 1973 से (iii) राज्यपाल

(iv) मुख्य सचिव की सलाह पर (v) मुख्यसचिव

5.10.सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings) :

- Public Administration, Mcgraw Hill : Laxmi Kant. M
- New Horizons of Public Administration; Mohit Bhattacharya; Jawahar Publisher & Distribution.
- Indian Administration; S.R. Maheshwari, Orient Black Swan.
- Public Administration Theory and Practice; Hoshiar Singh and Pardeep Sachdeva; Pearson.
- प्र”ाासनिक चिंतक; प्रसाद एण्ड प्रसाद सत्यनारायण; जवाहर पब्लिके”ान एण्ड डिस्ट्रीब्यू”ान।

Subject : लोक प्रशासन	
Course Code **: BA204**	Author **: Dr. Deepak**
Lesson No. **: 6**	Vetter **: Dr. Parveen Sharma**
गृह मन्त्रालय	

अध्याय की सरंचना

6.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

6.2. परिचय (Introduction)

6.3. अध्याय के मुख्य बिन्दु

6.3.1. गृह मन्त्रालय का संगठन (Organisation of Home Ministary)

6.3.2. कार्य (Functions)

6.3.2.1 आन्तरिक सुरक्षा (Department of Internal Security)

6.3.2.2. राज्य विभाग (Department of States)

6.3.2.3. राजभाशा विभाग (Department of Official Language)

6.3.2.4. जम्मू–कश्मीर विभाग (Department of Jammu-Kashmir Affairs)

6.3.2.5. सीमा प्रबन्धन विभाग (Department of Border Management)

6.4 पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

6.4.1. गृह मंत्रालय की भूमिका (Role of Ministry of Home Affairs)

6.4.2. संगठन एवं कार्य (Organisation & Functions)

6.4.2.1. आर्थिक कार्य विभाग (Department of Economic Affairs)

6.4.2.2. व्यय विभाग (Department of Expenditure)

6.4.2.3. राजस्व विभाग (Department of Revenue)

6.4.2.4. राजस्व सेवाएँ विभाग (Department of Financial Services)

6.4.2.5. विनिवेश विभाग (Department of Disinvestment)

6.5.स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

6.6. सारांश (Summary)

6.7. सूचक शब्द (Key Words)

6.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

6.9. उत्तर–स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

6.10.सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

6.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय में निम्नलिखित विषयों का अध्ययन करेंगे :–

- ग्रह मन्त्रालय की संरचना का अध्ययन
- ग्रह मन्त्रालय की भूमिका का अध्ययन
- वित्त मन्त्रालय की संरचना का संक्षिप्त वर्णन
- वित्त मन्त्रालय की संरचना का अध्ययन

6.2. परिचय (Introduction)

किसी भी समाज की आन्तरिक सुरक्षा एवं व्यवस्था को अनु"ाासित बनाए रखने तथा शासन द्वारा प्रवर्तित कानूनों की क्रियान्विति सुनि"चत कराने के लिए गृह विभाग की स्थापना प्राथमिक आव"यकता है। गृह विभाग जिसे सामान्यतः पुलिस विभाग का पर्याय समझा जाता है, की स्थापना मानव सभ्यता के आरम्भिक दौर में ही हो चुकी थी जबकि राज"ाही व्यवस्थाओं में नगर कोतवाल तथा चौकीदार के पद सृजित किये जाने लगे थे। भारत सरकार का वर्तमान गृह मंत्रालय ब्रिटि"ा शासन के दौरान स्थापित तथा बार–बार पुनर्संरचित विभाग है। सन् 1843 में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासनकाल में भारत सरकार का केन्द्रीय सचिवालय तथा बंगाल सरकार का सचिवालय पृथक् किए गए। उस समय इस विभाग के अधीन सामान्य, राजस्व, समुद्री, न्यायिक, विधि तथा चर्च सम्बन्धी कार्यों की छः शाखाएँ कार्यरत थीं। सन् 1861 में 'भारतीय पुलिस अधिनियम' के माध्य से पुलिस तथा सैनिक कार्यों को

पृथक् किया गया। भारतीय पुलिस तंत्र मूलतः सन् 1861 के कानून पर ही आधारित रहा है किन्तु अब राज्यों द्वारा नए पुलिस कानून बना दिए गए हैं।

आरम्भ से ही गृह विभाग का कार्यक्षेत्र अत्यन्त विस्तृत तथा जटिल प्रकृति का रहा है। अंग्रेजी शासन में सरकार के कार्यों के विस्तार तथा वि"ोषज्ञता के कारण सन् 1855 में सार्वजनिक निर्माण विभाग, सन् 1869 में विधि विभाग, सन् 1871 में राजस्व एवं कृषि विभाग तथा सन् 1905 में उद्योग विभाग इस विभाग से पृथक् किये गए। स्वतन्त्रता के समय दे"ाी रियासतों के मामलों के निबटारे के लिए बना 'राज्य विभाग' सन् 1955 में गृह मंत्रालय के अधीन कर दिया गया। सन् 1955 में मंत्रालय में 'प्र"ाासनिक सतर्कता संभाग' खोला गया था। इसी प्रकार सन् 1965 में विदे"ा मंत्रालय से 'असम राइफल्स' (पूर्वोत्तर का प्रहरी या पर्वतीय लोगों का मित्र) को हटाकर गृह मंत्रालय के नियंत्रण में लाया गया जबकि ओ. एण्ड एम., प्र"ाासनिक सुधार, कार्मिक तथा सामाजिक सुरक्षा नामक विभाग समय–समय पर इस मंत्रालय से सम्बद्ध होते रहे या पृथक् किये जाते रहे हैं। वर्तमान में स्वतंत्र कल्याण मंत्रालय (सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय), मानव संसाधन विभाग मंत्रालय, कार्मिक, लोक ि"ाकायत तथा पें"ान मंत्रालय बनाये जाने के कारण गृह मंत्रालय का बोझ कुछ कम अव"य हुआ है किन्तु आतंकवाद के प्रसार ने नई चुनौतियाँ भी खड़ी कर दी है। आम बोल–चाल की भाषा में गृह मंत्रालय को 'नोर्थ ब्लॉक' के नाम से भी पुकारा जाता है। वस्तुतः पुलिस तथा कानून व्यवस्था नामक विषय राज्य सूची के (द्वितीय प्रविष्टि) विषय हैं किन्तु अनुच्छेद – 355 के अन्तर्गत केन्द्र सरकार का यह दायित्व है कि वह प्रत्येक राज्य को बाहरी आक्रमण तथा आन्तरिक गड़बड़ी से सुरक्षा प्रदान करे। इसी परिप्रेक्ष्य में केन्द्रीय गृह मंत्रालय की भूमिका महत्वपूर्ण हो गई है। आन्तरिक सुरक्षा की बढ़ती समस्याओं तथा कार्यभार के कारण गृहमंत्री पी. चिदम्बरम ने आन्तरिक सुरक्ष मंत्रालय पृथक् बनाने का सुझाव दिया है।

6.3. अध्याय के मुख्य बिन्दु

6.3.1. गृह मन्त्रालय का संगठन (Organisation of Home Ministry)

गृह मंत्रालय का शीर्ष पद एक केबिनेट स्तर के मंत्री द्वारा ग्रहण किया जाता है। गृह मंत्री की स्थिति मंत्रालय की वि"ाालता, गम्भीरता तथा उपादेयता के कारण प्रधानमन्त्री के प"चात् नम्बर दो पर होती है। गृह मंत्री के अधीन राज्य मंत्री तथा उप मंत्री भी आव"यकतानुसार नियुक्त किये जाते हैं। गृह मंत्रालय के समस्त नीतिगत निर्णय गृह मंत्री द्वारा स्वयं अथवा प्रधानमन्त्री एवं केन्द्रीय मंत्रिमण्डल के पराम"ार्नुसार लिए जाते हैं। दे"ा की आन्तरिक सुरक्षा, शांति एवं व्यवस्था से सम्बद्ध यह मंत्रालय छः विभागों में विभक्त है जिनके प्र"ाासनिक प्रमुख सचिव कहलाते हैं। गृह सचिव के अधीन गृह विभाग तथा जम्मू–क"मीर विभाग हैं जबकि आन्तरिक सुरक्षा विभाग एवं सीमा प्रबन्धन विभाग के सचिव पृथक् हैं। राज्य विभाग का कार्य वि"िाष्ट सचिव निष्पादित करता है। एक अन्य

सचिव के अधीन केवल राजभाषा विभाग रखा गया है। मंत्रालय के सचिव आई.ए.एस. होते हैं जिनके अधीन वि"ोष सचिव, संयुक्त सचिव, निदे"ाक, वि"ोषाधिकारी तथा उप सचिव इत्यादि पदस्थापित होते हैं। कार्यों की दृष्टि से आन्तरिक सुरक्षा विभाग सबसे बड़ा विभाग है जिसमें 14 संयुक्त सचिव तथा अनेक निदे"ाक एवं उप सचिव कार्यरत हैं जबकि राज्य विभाग, गृह विभाग, सीमा प्रबन्धन विभाग, राजभाषा विभाग तथा जम्मू–क"मीर विभाग में अधिकारियों की संख्या तुलनात्मक रूप से कम है। मंत्रालय का प्र"ाासनिक प्रमुख गृह सचिव कहलाता है जो सचिव (न्याय) का भी अतिरिक्त कार्य सँभालता है।

गृह मंत्रालय को कार्य विभाजन की दृष्टि से छः विभागों में बाँटा गया है –

(१) गृह विभाग,

(२) आन्तरिक सुरक्षा विभाग,

(३) राज्य विभाग,

(४) सीमा प्रबन्धन विभाग,

(५) जम्मू–क"मीर विभाग, तथा

(६) राजभाषा विभाग

6.3.2. कार्य (Functions)

गृह मंत्रालय का कार्यक्षेत्र सदैव से ही विस्तृत तथा गम्भीर प्रकृति का रहा है। गृह मंत्रालय के कार्य इसके विभागों के अनुसार यहाँ वर्णित किये जा रहे हैं –

गृह विभाग (Department of Home)

यह विभाग संवैधानिक प्रावधानों की क्रियान्विति तथा मंत्रालय की शीर्ष नीतियों का निर्माण एवं निष्पादन करता है। इसके अतिरिक्त अन्य कार्य हैं –

(१) राष्ट्रपति एवं उप राष्ट्रपति द्वारा कार्यभार ग्रहण करने की अधिसूचना तथा राष्ट्रपति का शपथ ग्रहण समारोह आयोजित करना;

(२) विधायिका में आचार संहिता तथा शांति व्यवस्था सुनि"चत कराना और मंत्रियों हेतु आचरण संहित बनवाना;

(३) संसद में सदस्यों का मनोनयन कराना;

(४) अनुच्छेद 352 तथा अनुच्छेद 356 के अन्तर्गत राष्ट्रपति शासन की कार्यवाही कराना;

(५) राष्ट्रीय गीत, राष्ट्रगान, राष्ट्रीय झण्डा, राष्ट्रीय चरित्र की स्थापना में सहायता करना;

(६) प्रधानमन्त्री तथा संघ के अन्य मंत्रियों की नियुक्ति एवं पदत्याग की अधिसूचनाएँ निकालना;

(७) जन्म–मृत्यु पंजीकरण तथा जनगणना से सम्बन्धित कार्य करना;

(८) राज्यपाल द्वारा राष्ट्रपति के पास भेजे जाने वाले विधेयकों, अध्यादे”ाों तथा विनियमों पर आव”यक कार्यवाही करना (मंत्रालय का राज्य विभाग भी सहयोग करता है);

(९) राष्ट्रपति द्वारा क्षमादान की शक्तियों के मामले देखना;

(१०) राष्ट्रपति के नाम से कागज पत्रों के अधिप्रमाणीकरण (Authentication) के नियम बनाना;

6.3.2.1 आन्तरिक सुरक्षा (Department of Internal Security)

राष्ट्रीय स्तर पर शांति एवं व्यवस्था बनाए रखना इस विभाग का मुख्य दायित्व है। यद्यपि पुलिस, लोक व्यवस्था तथा कारागार राज्य सूची के विषय हैं तथापि अति महत्वपूर्ण एवं संवदेन”ाील विषय होने के कारण केन्द्रीय गृह मंत्रालय का सहयोग और समन्वय आव”यक हो जाता है। यह विभाग निम्नांकित कार्य करता है –

(१) राष्ट्र में आन्तरिक सुरक्षा एवं व्यवस्था सुनि”िचत करना;

(२) राज्य सरकारों तथा केन्द्र”ाासित क्षेत्रों में पुलिस प्र”ाासन को समुचित मार्गद”ान एवं सहायता देना;

(३) साम्प्रदायिक सौहार्द, राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता, विधि का शासन, समानता एवं भाईचारा तथा आपसी सामंजस्य बनाने में सहयोग करना;

(४) दे”ा की सीमाओं पर तथा आन्तरिक तंत्र में पुलिस बल तैनात करना;

(५) लोक उपक्रमों में सुरक्षा व्यवस्था सुनि”िचत करना;

(६) आतंकवाद, अलगाववाद, घुसपैठ, अ”ाांति एवं विद्रोह पर नियंत्रण पाना;

(७) अन्तर्राष्ट्रीय आपराधिक पुलिस संगठन (इण्टरपोल) में समन्वय स्थापित करना;

(८) नागरिक सुरक्षा, अग्नि”ामन, होमगार्ड्स तथा युद्धकाल में व्यवस्था से सम्बन्धित कार्य करना;

(९) भारतीय पुलिस सेवा के अधिकारियों की संवर्ग वृद्धि, नियुक्ति, प्रतिनियुक्ति, प्रशिक्षण, पदोन्नति, विदेशी पुलिस प्रशिक्षण तथा अन्य पुलिसकर्मियों से सम्बन्धित वृत्तिका विकास प्रकरण निस्तारित करना;

6.3.2.2. राज्य विभाग (Department of States)

जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है कि यह विभाग राज्यों से सम्बन्धित कार्यों का निस्तारण करता है। केन्द्र–राज्य सम्बन्धों में सुधार तथा केन्द्रशासित प्रदेशों के प्रशासन का सुचारू संचालन इसके मुख्य दायित्व हैं। पूर्वोत्तर परिषद् अधिनियम, 1971 के अन्तर्गत सन् 1972 में बनी पूर्वोत्तर परिषद् (NEC) एक परामर्शकारी निकाय है। मई 1990 में बनी अन्तर्राज्यीय परिषद् एवं विभिन्न क्षेत्रीय परिषदों के माध्यम से केन्द्र–राज्यों, केन्द्रशासित प्रदेशों तथा राज्यों के मध्य आपसी विवाद सुलझाने का प्रयास किया जाता है। यह विभाग कई प्रकार की गुरुतर जिम्मेदारियाँ पूरी करता है, जैसे –

(१) केन्द्र–राज्य सम्बन्धों को सुधारना तथा बाधाओं को दूर करना;

(२) अन्तर्राज्यीय परिषद्, राष्ट्रीय एकता परिषद्, क्षेत्रीय परिषदों तथा अन्य परामर्शदात्री निकायों या समितियों को प्रशासनिक सहायता उपलब्ध कराना;

(३) नए राज्यों का निर्माण, क्षेत्र में परिवर्तन, नाम में परिवर्तन तथा इससे सम्बन्धित अन्य कार्य करना और राज्यों के पुनर्गठन से सम्बन्धित कानूनों का क्रियान्वयन कराना;

(४) पूर्व नरेशों तथा रजवाड़ों से सम्बन्धित विवादों का निस्तारण करना;

(५) राज्यों से सम्बन्धित मामलों में जाँच आयोगों का गठन एवं सहायता देना;

(६) राज्यों के साथ समझौते एवं अन्य कार्यवाहियाँ करना;

(७) राज्यों को शांति व्यवस्था हेतु मार्गदर्शन, सहायता एवं समन्वय प्रदान करना;

(८) संविधान के अनुच्छेद 239–241 के अन्तर्गत संघराज्य क्षेत्रों के प्रशासन संचालन में सहयोग देना;

6.3.2.3. राजभाषा विभाग (Department of Official Language)

संघीय सरकार के मंत्रालयों एवं विभागों में राजभाषा हिन्दी के प्रसार तथा मान्यता हेतु यह विभाग केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो तथा केन्द्रीय हिन्दी समिति के माध्यम से 'राजभाषा अधिनियम, 1963' की क्रियान्विति सुनिश्चित कराता है। मानव संसाधन विकास मंत्रालय के उच्चतर शिक्षा विभाग के अधीन कार्यरत केन्द्रीय हिन्दी संस्थान तथा

अन्य प्र"िक्षण संस्थाओं के माध्यम से केन्द्रीय लोक सेवकों को हिन्दी में प्रवीण बनाने का प्रयास करता है। राजभाषा विभाग के मुख्य कार्य इस प्रकार है –

(१) केन्द्रीय सचिवालय राजभाषा सेवा का संचालन, निर्धारण तथा विकास करना;

(२) विभिन्न मंत्रालयों में संघ की राजभाषा हिन्दी में कार्य को प्रोत्साहन देना और प्रचार साहित्य का प्रका”ान एवं वितरण करना;

(३) केन्द्रीय मंत्रालयों में पदस्थापित निदे”ाक (राजभाषा) के माध्यम से प्रत्येक मंत्रालय एवं विभाग द्वारा हिन्दी में किये गए कार्य का मासिक प्रबोधन एवं मूल्यांकन करना;

(४) राजभाषा प्रसार हेतु प्र"िक्षण, कार्य”ाला तथा अन्य आव”यक व्यवस्थाएँ करना;

(५) पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो के माध्यम से पुलिस विषय पर हिन्दी में लिखी पुस्तकों को पण्डित गोविन्द बल्लभ पंत पुरस्कार प्रदान करना

6.3.2.4. जम्मू–कश्मीर विभाग (Department of Jammu-Kashmir Affairs)

भारत के संविधान के अनुच्छेद – 370 के अनुसार जम्मू–क”मीर एक वि”ोष दर्जा प्राप्त राज्य है अतः इस राज्य के संविधान, कानून तथा कन्द्र के साथ सम्बन्धों को लेकर प्रकार की तकनीकी समस्याएँ उत्पन्न होती रहती हैं। दूसरी ओर पाकिस्तान के साथ लगी जम्मू–क”मीर की दुर्गम सीमा को लेकर भी अनेक प्रकार की समस्याएँ हैं। इसीलिए जम्मू–क”मीर राज्य हेतु एक पृथक् विभाग कार्यरत है जो इस राज्य से सम्बन्धित समस्त नीति विषयक, उग्रवाद–नियंत्रण, केन्द्र–राज्य सम्बन्ध तथा विकास कार्यक्रमों से सम्बन्धित मुद्दों पर आव”यक कार्यवाही करता है।

जम्मू–क”मीर विभाग के मुख्य कार्य निम्नलिखित हैं :–

(१) जम्मू–क”मीर राज्य से सम्बन्धित संवैधानिक प्रावधान क्रियान्वित कराना;

(२) रक्षा मंत्रालय एवं विदे”ा मंत्रालय से समन्वय रखते हुए जम्मू–क”मीर में आतंकवाद नियंत्रण तथा भारत–पाक सीमा पर तैनाती के प्रकरण निपटाना;

(३) स”ास्त्र बल (जम्मू–क”मीर) वि”ोष शक्तियाँ अधिनियम, 1990 का क्रियान्वयन करना; और

(४) जम्मू–क”मीर के विकास एवं कल्याण हेतु सभी सम्बन्धित मंत्रालयों से समन्वय करना।

6.3.2.5. सीमा प्रबन्धन विभाग (Department of Border Management)

जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है कि यह विभाग भारत की अन्तर्राष्ट्रीय सीमाओं से सम्बन्धित कार्य निष्पादित करता है। इन कार्यों में निम्नांकित सम्मिलित हैं –

(१) अन्तर्राष्ट्रीय भूमि एवं तटीय सीमाओं का प्रबन्ध करना जिसमें वे विषय (कार्यक्षेत्र) सम्मिलित नहीं हैं जो रक्षा मंत्रालय या विदे"ा मंत्रालय को आवण्टित हैं;

(२) सीमा प्रबन्धन के क्रम में भारत सरकार के अन्य विभागों तथा राज्य सरकारों से समन्वय करना;

(३) सीमा पुलिस एवं सुरक्षा को सुदृढ़ करना;

(४) रक्षा मंत्रालय एवं विदे"ा मंत्रालय के समन्वय से सड़कों जैसी आधारभूत संरचना का निर्माण, सीमाओं पर बाड़ (Fencing) लगाना तथा फ्लड लाइट की व्यवस्था करना; और

(५) सीमावर्ती क्षेत्र विकास कार्यक्रम (BADP) का संचालन करना। (उत्तर–पूर्वी क्षेत्रों हेतु यह कार्यक्रम उनके पृथक् विभाग को दिया गया है)

6.4 पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

6.4.1. गृह मंत्रालय की भूमिका (Role of Ministry of Home Affairs)

केन्दीय स्तर पर कार्यरत गृह मंत्रालय न केवल दे"ाभर में कानून एवं व्यवस्था पर कड़ी नजर रखता है बल्कि यह मंत्रालय केन्द्र"ाासित प्रदे"ाों के प्र"ाासन को संचालित करने के लिए भी उत्तरदायी है। इस मंत्रालय की स्थापना ईस्ट इण्डिया कम्पनी के द्वारा गठित इम्पीरियल सेक्रेटेरिएट के प्रारम्भिक विभागों के समय ही हो चुकी थी। वर्तमान में राज्य विभाग, आन्तरिक सुरक्षा विभाग, गृह विभाग, राजभाषा विभाग तथा जम्मू–क"मीर विभाग से युक्त यह मंत्रालय अनेक गुरुतर दायित्व वहन करता है। गृह मंत्रालय की कानून एवं व्यवस्था के निर्माण में अग्रांकित भूमिका है :–

(१) कानून एवं व्यवस्था को बनाए रखने के लिए गुप्तचर एजेन्सियों को सचेत रखना।

(२) केन्द्र एवं राज्यों के मध्य समन्वय स्थापित करना।

(३) बेतार, इण्टरपोल तथा अन्य सुविधाओं में सामंजस्य करना।

(४) केन्द्रीय अर्द्ध सैनिक सुरक्षा बलों की राज्यों में नियुक्ति तथा हथियारों की आपूर्ति करना।

(५) भारतीय पुलिस सेवा के अधिकारियों का प्र"ाक्षण तथा अन्य कार्मिक नीतियाँ बनाना।

(६) राज्य पुलिस तंत्र को मार्गदर्शन, परामर्श तथा सहायता प्रदान करना।

(७) राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो तथा सूचना प्रणाली पर नियंत्रण रखना

6.4.2. संगठन एवं कार्य (Organisation & Functions)

वित्त मंत्रालय का सर्वोच्च पद वित्त मंत्री द्वारा धारण किया जाता है जो केन्द्रीय मंत्रिपरिषद् में एक वरिष्ठ, अनुभवी तथा कार्यकु"ाल राजनीतिज्ञ होता है। वित्त मंत्री तथा उप मंत्री भी नियुक्त किये जाते हैं। सत्तारूढ़ दल की नीतियों तथा कार्यकु"ालता, आम बजट एवं जनकल्याण हेतु शुरू की जाने वाली नवीन योजनाओं के माध्यम से वित्त मंत्री ही राष्ट्र के सम्मुख आता है। वित्त मंत्री को प्र"ाासनिक सहायता उपलब्ध कराने के लिए सचिव कार्यरत होता है जो सामान्यतः भारतीय प्र"ाासनिक सेवा का वरिष्ठ अधिकारी होता है किन्तु प्रधानमन्त्री वी.पी. सिंह के शासनकाल में बिमल जालान तथा पी.वी. नरसिम्हाराव के समय मोण्टेक सिंह आहलूवालिया जो अर्थ"ाास्त्री हैं, को वित्त सचिव बनाया गया था। वित्त सचिव की सहायतार्थ चार सचिव क्रम"ाः सचिव, आर्थिक मामलात, सचिव, व्यय, सचिव, राजस्व तथा सचिव विनिवे"ा कार्यरत रहते हैं जो अपने–अपने विभागों के प्रमुख भी होते हैं। चारों सचिवों की सहायतार्थ अनेक वि"ाष्ट सचिव, अतिरिक्त सचिव, संयुक्त सक्रिय तथा उप सचिव इत्यादि पदस्थापित होते हैं जो भारतीय प्र"ाासनिक सेवा, भारतीय लेखा एवं लेखा परीक्षण सेवा, केन्द्रीय राजस्व सेवा, केन्द्रीय उत्पाद एवं सीमा शुल्क सेवा, भारतीय रेलवे सेवा तथा केन्द्रीय सचिवालय सेवा से सम्बन्धित होते हैं। वित्त मंत्रालय के अधीन लगभग 1 लाख 70 हजार कार्मिक कार्यरत हैं।

6.4.2.1. आर्थिक कार्य विभाग (Department of Economic Affairs)

दे"ा के आम बजट तथा राष्ट्रपति शासन वाले राज्य का बजट तैयार करने, आर्थिक मामलों पर निगरानी रखने विदे"ाी मुद्रा प्रबन्धन करने, आर्थिक विकास हेतु विदे"ाी सहायता प्राप्त करने, घरेलू वित्त प्रकरण नियंत्रित करने तथा मुद्रा तंत्र को नियंत्रित करने का दायित्व यह विभाग निभाता है। विभाग में निम्नांकित संभाग हैं –

(१) आर्थिक संभाग

(२) वित्त संभाग

(३) बजट संभाग

(४) पूँजी बाजार संभाग

(५) द्विपक्षीय सहयोग संभाग

(६) सहायता, लेखा एवं अंकेक्षण नियंत्रक संभाग

(७) विदेश व्यापार संभाग

(८) प्रशासन संभाग

(९) फण्ड बैंक संभाग

(१०) भारतीय आर्थिक सेवा संभाग

(११) आधारभूत संरचना संभाग

करेंसी नोट प्रेस (नासिक रोड़) 10, 50 तथा 100 रूपये के नोट छापती है जबकि बैंक नोट प्रेस (देवास) 20, 50, 100 तथा 500 रूपये के नोट छापती है। सिक्यूरिटी प्रिन्टिंग प्रेस (हैदराबाद) द्वारा पोस्टकार्ड, लिफाफे, नॉन ज्यूडिशियल स्टाम्प तथा केन्द्रीय एक्साइज स्टाम्प मुद्रित किये जाते हैं। सिक्यूरिटी पेपर मिल (होशंगाबाद) बैंक नोट तथा अन्य महत्वपूर्ण कागजात मुद्रित करती है। मुंबई, कोलकाता, हैदराबाद तथा नोएडा स्थित टकसालों (Mints) द्वारा सिक्कों का उत्पादन, सोना तथा चाँदी की परख (Assaying), मैडल तथा स्मृति सिक्कों (Commemorative Coins) का निर्माण किया जाता है।

कार्य (Functions)

संक्षेप में आर्थिक कार्य विभाग के मुख्य दायित्व (कार्य) इस प्रकार है –

(१) देश की आर्थिक स्थिति और बजटीय स्थिति पर नजर रखना तथा इस सम्बन्ध में सभी आवश्यक कदम उठाना;

(२) रेलवे के अतिरिक्त अन्य मंत्रालयों एवं विभागों की माँगों से युक्त आम बजट (Union Budget) निर्मित करना, संसद में प्रस्तुत करना तथा उसका क्रियान्वयन कराना;

(३) विदेशी मुद्रा प्रबन्धन अधिनियम, 1999 का क्रियान्वयन तथा तत्सम्बन्धी नीति निर्माण करना;

(४) राष्ट्रपति शासन लगे राज्य अथवा संघ राज्य क्षेत्र का बजट निर्मित करना;

(५) अनुच्छेद – 360 के अन्तर्गत वित्तीय आपातकाल की घोषणा करना;

(६) बजटीय स्थिति से सम्बन्धित सभीं मार्गोपय या अर्थोपाय (Ways and Means) अपनाना;

(७) विदेशी मुद्रा प्रबन्ध सभी नीतियों का निरूपण, नियंत्रसण तथा क्रियान्वयन करना;

(८) रूपए की विनिमय दर सम्बन्धी नीति निरूपित करना;

(९) भारतीय प्रत्यक्ष विदे"ाी निवे"ा के कार्य निष्पादित करना;

6.4.2.2. व्यय विभाग (Department of Expenditure)

यह विभाग मुख्यतः भारत सरकार के समस्य विभागों में मितव्ययता लाने, व्यय को नियंत्रित करने, लोक सेवाओं पर नियंत्रण रखने, वित्तीय शक्तियों का प्रत्यायोजन करने, लागत–लेखा पर पराम"र्ा देने तथा लेखा सम्बन्धी कार्यों को निष्पादित करता है। इस विभाग के अधीन निम्नांकित संभाग कार्यरत हैं –

(१) संस्थापना संभाग

(२) योजना वित्त – प्रथम संभाग

(३) योजना वित्त – द्वितीय संभाग

(४) वित्त आयोग संभाग

(५) वेतन अनुसंधान इकाई

कार्य (Functions)

व्यय विभाग के मुख्य कार्य इस प्रकार है –

(१) वित्तीय नियम एवं विनियम बनाना तथा वित्तीय शक्तियों का प्रत्यायोजन करना;

(२) वित्त आयोग को प्रशासनिक सहायता देना तथा उसकी अनुशंसाओं की क्रियान्विति कराना;

(३) भारतीय लेखा एवं अंकेक्षण विभाग के कार्यों में सहायता प्रदान करना;

(४) केन्द्रीय राजकोष नियमों, केन्द्रीय शासकीय लेखा (प्राप्ति एवं भुगतान) नियमों, प्रबन्ध लेखांकन व्यवस्था, सरकारी लेखांकन के सामान्य सिद्धान्तों, भारतीय रिजर्व बैंक से सरकार के नकद शेष का समाधान (Reconciliation) इत्यादि के प्रकरण जो लेखा महानियंत्रक से सम्बन्धित हैं, में कार्यवाही कराना;

(५) भारत सरकार के समस्त मंत्रालयों एवं कार्यालयों को बड़ी वित्तीय स्वीकृतियाँ जारी करना;

(६) मितव्ययता सुनिश्चित करने की दृष्टि से लोक सेवकों की संख्या पुनर्निर्धारित करना;

6.4.2.3. राजस्व विभाग (Department of Revenue)

यह विभाग सरकार के लिए आय एकत्र करने वाले करों से सम्बन्धित प्र"ाासन संचालित करता है। राजस्व विभाग के अधीन चार कार्यकारी विभाग कार्यरत हैं –

(१) आयकर विभाग

(२) सीमा शुल्क विभाग

(३) केन्द्रीय उत्पाद शुल्क विभाग

(४) स्वापक पदार्थ (Narcotics) विभाग

6.4.2.4. राजस्व सेवाएँ विभाग (Department of Financial Services)

यह विभाग वित्त मंत्रालय के निर्दे"ान में दी जाने वाली वित्तीय सेवाओं एवं वित्तीय, बीमा तथा बैंकिंग सेवाओं से सम्बन्धित समस्त कार्य निष्पादित करता है। इस विभाग की रचना आर्थिक कार्य विभाग के बैंकिंग एवं बीमा संभाग को पृथक् करके की गई है। बैंकिंग एवं बीमा संभाग वाणिज्यिक बैंक नीति, शाखा विस्तार, कृषि साख, दे"ा–विदे"ा के बैंक तथा राष्ट्रीय आवास बैंक से सम्बन्धित कार्य निष्पादित करता है जो मुख्यतः बैंकिंग परिचालन, औद्योगिक वित्त, प्राथमिकता क्षेत्र, कार्मिक सम्बन्ध तथा सतर्कता से सम्बन्धित होते हैं। 19 जुलाई, 1969 को अध्यादे"ा द्वारा बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया गया था। अगस्त, 1991 में वित्तीय प्रणाली के ढाँचे, संगठन तथा कामकाज को लेकर बनी एम. नरसिंहम समिति की अनु"ांसा के प"चात् यह संभाग बैंकों की बैलेंस शीट पर अधिक निगरानी रखने लगा है। भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम, 1934 के अन्तर्गत 1 अप्रैल, 1935 को गठित तथा 1 जनवरी, 1949 को राष्ट्रीयकृत रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया इस क्रम में वित्त मंत्रालय को तकनीकी पराम"ाि प्रदान करता है। एक रुपये का नोट वित्त मंत्रालय ही जारी करता है।

6.4.2.5. विनिवेश विभाग (Department of Disinvestment)

10 दिसम्बर, 1999 को विनिवे"ा विभाग बनाया गया था जिसे 6 नवम्बर, 2001 को मंत्रालय का स्तर प्रदान किया गया किन्तु सन् 2004 से इसे वित्त मंत्रालय के अधीन एक विभाग बना दिया गया है। सन् 1991 के आर्थिक सुधारों के प"चात् शुरू हुई निजीकरण प्रक्रिया को नियंत्रित करने तथा तत्सम्बन्धी नीतिगत निर्णय यह विभाग करता है। वर्तमान में इस विभाग की नीति है कि 'नवरत्न' का स्तर प्राप्त तथा लाभार्जन कर रहे लोक उपक्रमों का

निजीकरण नहीं किया जाए बल्कि इन्हें बाहरी बाजार से पूँजी एकत्रण एवं संसाधन गति”ीलन हेतु अधिक स्वायत्तता प्रदान की जाए। अत्यंत घाटे में चल रहे लोक उपक्रमों को श्रमिक हितों को ध्यान में रखते हुए बन्द किया जाना है या निजीकरण किया जाना है। साथ ही सरकार निजीकरण के सामाजिक दायित्वों एवं सन्दर्भों को भी ध्यान में रखेगी।

कार्य (Functions)

विनिवे”ा विभाग को निम्नांकित कार्य दिए गए हैं –

(१) केन्द्रीय लोक उपक्रमों से केन्द्र सरकार की ईक्विटी (Equity) के विनिवेश सम्बन्धी नीतिगत निर्णय लेना;

(२) केन्द्रीय लोक उपक्रमों से सरकारी अंश (Equity) का विक्रय या उन्हें निजी हाथों में बेचने के सभी प्रकरणों का निस्तारण करना;

(३) विनिवेश आयोग की अनुशंसाओं के क्रम में विनिवेश के तौर–तरीकों तथा लोक उपक्रमों के पुनर्गठन पर कार्यवाही करना; और

(४) विनिवेश सम्बन्धी निर्णयों का क्रियान्वयन करना। इसमें सलाहकारों की नियुक्ति, शेयरों की कीमत का निर्धारण तथा विनियोग की अन्य शर्तें भी यही विभाग निर्धारित करता है।

(५) विनिवेश आयोग को प्रशासनिक सहायता प्रदान करना;

(६) केन्द्रीय लोक उपक्रमों के क्रम में सरकार की भागीदारी या अंश के प्रकरण देखना;

6.5. स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress) :

निचे कुछ प्र”न दिए गए हैं आपने उनका उत्तर देना है :

(i) राज्यों में राष्ट्रपति शासन किन–किन अनुच्छेदों के माध्यम से लगता है ?

(ii) विनिवे”ा विभाग का गठन कब किया गया था ?

(iii) बजट को बनाने का कार्य किस मन्त्रालय का है ?

(iv) दे”ा में वित्तिय–आपातकाल किस अनुच्छेद के माध्यम से लगता है ?

(v) संसद में बजट कौन पे”ा करता है ?

(vi) किस अनुच्छेद को खत्म करते हुए सरकार ने जम्मू–क”मीर को संघ–”ाासित प्रदे”ा का दर्जा दिया है ?

6.6. सारांश (Summary)

उपरलिखित विषयों का अध्ययन करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि नीतियों को बनाने और लागु करने में तथा दे”ा के लिए विकासकारी योजनाओं के द्वारा दे”ा के विकास में गृह मन्त्रालय तथा वित्त मन्त्रालय की अहम भूमिका है। इन मन्त्रालयों को सभी मन्त्रालयों में प्राथमिकता दी जाती है क्योंकि सभी योजनाओं के लिए बजट का बंटवारा वित्त मन्त्रालय के द्वारा तथा दे”ा के सभी आन्तरिक मामलों का निपटारा तथा समस्याओं का निवारण ग्रह मन्त्रालय के द्वारा किया जाता है।

गृह मन्त्रालय की संरचना इस प्रकार की गई है कि उसे दे”ा के सभी आन्तरिक मामलों की जानकारी रहती है और तुरन्त कार्यवाही के द्वारा सुरक्षा ऐजेंसियों के माध्यम से सभी समस्याओं का तुरन्त निवारण करने का प्रयास करता है। इस मन्त्रालय में कई विभाग होते हैं जिनको अलग–अलग कार्यों के लिए उत्तरदायी बनाया जाता है और ये विभाग दे”ा के विभिन्न भागों की जानकारी सीधे गृह मन्त्रालय पर होती है। यह मन्त्रालय दे”ा के आर्थिक सामाजिक तथा सांस्कृतिक विकास में अहम भूमिका निभाता है।

सभी योजनाओं को बनाने तथा लागू करने के लिए बजट की आव”यकता होती है बिना पैसे के कोई भी योजना न तो बन सकती और न ही लागू हो सकती। बजट बनाने का कार्य वित्त मन्त्रालय के द्वारा किया जाता है। वित्त मन्त्रालय प्रत्येक वर्ष की योजनाओं के लिए बजट का निर्माण करवाता है और उसको संसद में पास करवाकर सभी विभागों तथा मन्त्रालयों को संचित निधि से पैसे का आबंटन करवाता है। अतः हम कह सकते हैं कि गृह मन्त्रालय तथा वित्त मन्त्रालय दे”ा के विकास के लिए रीढ़ की हड्डी के समान है। ये दोनों मन्त्रालय प्रत्यक्ष तौर पर विकासकारी योजनाओं के माध्यम से दे”ा का सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक विकास के लिए उत्तरदायी है। और ये दोनों अपने उद्दे”यों की प्राप्ति के लिए मिलकर कार्य करते हैं।

6.7. सूचक शब्द (Key Words)

गृह मन्त्रालय –जो मन्त्रालय दे”ा की आन्तरिक सुरक्षा तथा विकास के लिए कार्य करे।

वित्त मन्त्रालय –जो मन्त्रालय बजट के निर्माण के लिए तथा सभी योजनाओं के लिए वित्तिय कार्य करता हो उसे वित्त मन्त्रालय कहते हैं।

बजट–जिसके माध्यम से वार्षिक वित्तिय विवरण की जानकारी मिलती हो बजट कहलाता है।

विभाग–जब किसी मन्त्रालयों के कार्यों को कई इकाईयों में बांट दिया जाता है उन्हीं इकाईयों को विभाग कहा जाता है।

नीति निर्भाजक –दे"ा के विकास के लिए मन्त्रालयो के द्वारा किसी कार्य के बारे में निर्णय लेना ही नीति निर्माण कहलाता है।

6.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

Q.1. गृह मन्त्रालय की संरचना का विवरण दीजिए।

Q.2. गृह मन्त्रालय के कार्यों की जानकारी दीजिए।

Q.3. वित्त मन्त्रालय की संरचना से आप क्या समझते हैं ?

Q.4. दे"ा के विकास में वित्त मन्त्रालय की क्या भूमिका है ?

Q.5. बजट से आप क्या समझते हैं।

6.9. उत्तर–स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

(i) अनुच्छेद 356 तथा अनुच्छेद 365 (ii) 10 दिसम्बर 1999 को

(iii) वित्त–मन्त्रालय का (iv) अनुच्छेद 360 के माध्यम से

(v) वित्त मन्त्री (vi) अनुच्छेद 370 को

6.10.सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

1. Public Administration, Mcgraw Hill : Laxmi Kant. M

2. New Horizons of Public Administration; Mohit Bhattacharya; Jawahar Publisher & Distribution.

3. Indian Administration; S.R. Maheshwari, Orient Black Swan.

4. Public Administration Theory and Practice; Hoshiar Singh and Pardeep Sachdeva; Pearson.

5. प्र"ाासनिक चिंतक; प्रसाद एण्ड प्रसाद सत्यनारायण; जवाहर पब्लिके"ान एण्ड डिस्ट्रीब्यू"ान।

Subject : Indian Administrative System	
Course Code : PUBA 301	Author **: Dr. Parveen sharma**
Lesson No. : 7	Vetter **:**
Prime Minister Office: Significance, Functions and Role **प्रधान मंत्री कार्यालय: महत्व, कार्य और भूमिका**	

अध्याय की सरंचना

7-1-अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

7-2-परिचय (Introduction)

7-3-अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

7.3.1.प्रधानमन्त्री पद की संवैधानिक स्थिति(Constitutional status of the Prime Minister)

7.3.2.प्रधानमन्त्री की नियुक्ति (Appointment of Prime Minister)

7.3.3.प्रधानमंत्री पद हेतु पात्रता (Eligibility for the post of Prime Minister)

7.3.4. प्रधानमन्त्री का कार्यकाल (Tenure of Prime Minister)

7.3.5.प्रधानमन्त्री के कार्य व शक्तियाँ (Powers and functions of the Prime Minister)

7-4 पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

7.4.1.प्रधानमंत्री कार्यालय (Prime Minister Office)

7.4.2.प्रधानमंत्री कार्यालय का संगठन (Organisation of the Prime Minister's Office)

7.4.3.प्रधानमंत्री कार्यालय (सचिवालय) के कार्य (Functions of Prime Minister Office)

7.4.4.प्रधानमंत्री कार्यालय की बदलती भूमिका (Changing Role of Prime Minister Office)

7.4.5. प्रधानमंत्री कार्यालय का महत्व (Importance of Prime Minister's Office)

7-5- स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

7-6- सारांश (Summary)

7-7- सूचक शब्द (Key Words)

7-8- स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

7-9- उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

7.10. सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

7.1.अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

अध्याय के अध्ययन के उपरान्त विद्यार्थी-

- प्रधान मंत्री कार्यालय के संगठन को जान पायेगें
- प्रधान मंत्री कार्यालय के महत्त्व को जान पायेगें।
- प्रधान मंत्री कार्यालय के कार्य और भूमिका को जान पायेगें।
- प्रधान मंत्री के स्वरूप ,कार्य ,शक्तियों ,को जान पाएंगे।

7.2.परिचय (Introduction)

भारत गणराज्य के प्रधानमंत्री का पद भारतीय संघ के शासन प्रमुख का पद है। भारतीय संविधान के अनुसार, प्रधानमन्त्री केंद्र सरकार के मंत्रिपरिषद् का प्रमुख और राष्ट्रपति का मुख्य सलाहकार होता है। वह भारत सरकार के कार्यपालिका का प्रमुख होता है और सरकार के कार्यों को लेकर संसद के प्रति जवाबदेह होता है। भारत की संसदीय राजनैतिक प्रणाली में राष्ट्रप्रमुख और शासनप्रमुख के पद को पूर्णतः विभक्त रखा गया है।

सैद्धान्तिक रूप में संविधान भारत के राष्ट्रपति को देश का राष्ट्रप्रमुख घोषित करता है और सैद्धांतिक रूप में, शासनतन्त्र की सारी शक्तियों को राष्ट्रपति में निहित करता है तथा संविधान यह भी निर्दिष्ट करता है कि राष्ट्रपति के पास इन अधिकारों को प्रयोग करने के लिए अधीनस्थ अधिकारी होंगे। राष्ट्रपति को सलाह देने की शक्ति प्रधानमन्त्री को दी गयी है।संविधान अपने भाग 5 के विभिन्न अनुच्छेदों में प्रधानमन्त्री पद के संवैधानिक अधिकारों और कर्तव्यों को निर्धारित करता है।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 74 में स्पष्ट रूप से मन्त्रिपरिषद की अध्यक्षता तथा संचालन हेतु प्रधानमन्त्री की उपस्थिति को आवश्यक माना गया है। वह स्वेच्छा से ही मंत्रीपरिषदका गठन करता है। राष्ट्रपति मन्त्रिगण की नियुक्ति उसकी सलाह से ही करते हैं। मन्त्रियों के विभाग का निर्धारण भी वही करता है। कैबिनेट के कार्य का निर्धारण भी वही करता है। देश के मन्त्रियों को निर्देश भी वही देता है तथा सभी कार्यकारी निर्णय भी वही लेता है। राष्ट्रपति तथा मन्त्रिषद के मध्य सम्पर्क सूत्र भी वही हैं। मन्त्रिपरिषद का प्रधान प्रवक्ता भी वही है। वह सत्तापक्ष के नाम से लड़ी जाने वाली संसदीय बहसों का नेतृत्व करता है। संसद मे हो रही किसी भी बहस मे वह भाग ले सकता है। मन्त्रीगण के मध्य समन्वय भी वही करता है। वह किसी भी मंत्रालय से कोई भी सूचना आवश्यकतानुसार मंगवा सकता है।

प्रधानमन्त्री, आम तौर पर लोकसभा में बहुमत-धारी राजनैतिक दल का नेता होता है। उसकी नियुक्ति भारत के राष्ट्रपति द्वारा होती है। इस पद पर किसी प्रकार की समय-सीमा निर्धारित नहीं की गई है परंतु एक व्यक्ति इस पद पर केवल तब तक रह सकता है जब तक लोकसभा में बहुमत उसके पक्ष में हो।

संविधान, विशेष रूप से, प्रधानमन्त्री को केंद्रीय मंत्रिमण्डल पर पूर्ण नियंत्रण प्रदान करता है। इस पद के पदाधिकारी को कार्यपालिका पर दी गयी अत्यधिक नियंत्रणात्मक शक्ति, प्रधानमन्त्री को भारतीय गणराज्य का सबसे शक्तिशाली और प्रभावशाली व्यक्ति बनाती है।

इस पद पर नियुक्त होने वाले पहले पदाधिकारी जवाहरलाल नेहरू थे जबकि भारत के वर्तमान प्रधानमन्त्री नरेंद्र मोदी हैं ।

7.3.अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

7.3.1.प्रधानमन्त्री पद की संवैधानिक स्थिति (Constitutional status of the Prime Minister)

भारत के संविधान-निर्माताओं ने भारतीय राजनैतिक प्रणाली को वेस्ट्मिन्स्टर प्रणाली से प्रभावित होकर एक संसदीय गणराज्य का रूप दिया था, जिसमें राष्ट्रप्रमुख तथा शासनप्रमुख के पदों को पूर्णतः विभक्त रखा गया था। भारतीय राजनैतिक प्रणाली में प्रधानमन्त्री का पद संविधान द्वारा स्थापित कार्यपालिका प्रमुख का पद है, जिसपर योग्य व्यक्ति को भारत के राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किया जाता है। वहीँ भारत के राष्ट्रपति का पद भारत गणराज्य के राष्ट्रप्रमुख का पद है, जिन्हें संसद तथा विधान सभा सदस्यों द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित किया जाता है। प्रधानमन्त्री का पद निःसंदेह भारतीय राजनैतिक प्रणाली का सबसे शक्तिशाली एवं वर्चस्वपूर्ण पद है। कार्यपालिका तथा केंद्रीय मंत्रिमण्डल की सारी गतिविधियों पर अंत्यतः नियंत्रण प्रधानमन्त्री के पास ही होता है। केंद्रीय मंत्रियों की नियुक्ति व निष्कासन भी प्रधानमन्त्री ही करते हैं।

मंत्रियों की नियुक्ति व निष्कासन राष्ट्रपति द्वारा प्रधानमन्त्री के सलाह पर होता है। भारतीय संविधान क्रमशः ऐसे कई विधान प्रेषित करता है, जिनके द्वारा वैधिक रूप से यह सुनिश्चित किया गया है कि सामान्य (गैर-आपातकालीन) हालातों में, कार्यपालिका के मामले में राष्ट्रपति पर केवल नाममात्र शक्तियाँ निहित हों, जबकि वास्तविक शक्तियाँ प्रधानमन्त्री के हाथों में हो।

7.3.2.प्रधानमन्त्री की नियुक्ति (Appointment of Prime Minister)

साधारणतः, प्रधानमन्त्री को संसदीय आम चुनाव के परिणाम के आधार पर राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किया जाता है। प्रधानमन्त्री, आम तौर पर लोकसभा में बहुमत-धारी दल (या गठबंधन) के नेता होते हैं। हालाँकि, प्रधानमन्त्री का स्वयँ लोकसभा सांसद होना अनिवार्य नहीं है परंतु उन्हें लोकसभा में बहुमत सिद्ध करना होता है और नियुक्ति के छह महीनों के भीतर ही संसद की सदस्यता लेनी पड़ती है। प्रधानमन्त्री संसद के दोनों सदनों में से किसी भी एक सदन के सदस्य हो सकते हैं। प्रत्येक चुनाव पश्चात्, नवीन सभा की बैठक में बहुमत दल के नेता के चुनाव के बाद, राष्ट्रपति, बहुमत दल के नेता को प्रधानमन्त्री बनने हेतु आमंत्रित करते हैं, आमंत्रण स्वीकार करने के पश्चात, संबंधित व्यक्ति को लोकसभा में मतदान द्वारा विश्वासमत प्राप्त करना होता है। तत्पश्चात् विश्वासमत-प्राप्ति की आदेश को राष्ट्रपति तक पहुँचाया जाता है, जिसके बाद एक समारोह में प्रधानमन्त्री तथा अन्य मंत्रियों को पद की शपथ दिलाई जाती है और उन्हें प्रधानमन्त्री नियुक्त किया जाता है। यदि कोई एक व्यक्ति, लोकसभा में बहुमत प्राप्त करने में अक्षम होता है, तो, यह पूर्णतः महामहिम राष्ट्रपति के विवेक पर निर्भर होता है कि वे किस व्यक्ति को प्रधानमन्त्रीपद प्राप्त करने हेतु आमंत्रित करें। ऐसी स्थिति को त्रिशंकु सभा की स्थिति कहा जाता है। त्रिशंकु सभा की स्थिति में राष्ट्रपति साधारणतः सबसे बड़े राजनैतिक दल के नेता को निम्नसदन में बहुमत सिद्ध करने हेतु आमंत्रित करते है(हालाँकि संवैधानिक तौर पर वे इस विषय में अपने पसंद के किसी भी व्यक्ति को आमंत्रित करने हेतु पूर्णतः स्वतंत्र हैं)। निमंत्रण स्वीकार करने वाले व्यक्ति का लोकसभा में विश्वासमत सिद्ध करना अनिवार्य है और उसके बाद ही वह व्यक्ति प्रधानमन्त्री नियुक्त किया जा सकता है।

7.3.3.प्रधानमंत्री पद हेतु पात्रता (Eligibility for the post of Prime Minister)

भारतीय संविधान, प्रधानमंत्री पद हेतु किसी प्रकार की विशेष अर्हताएँ निर्दिष्ट नहीं करता है। परंतु एक आवश्यक्ता ज़रूर निर्धारित की गई है: प्रधानमन्त्री के पास लोकसभा में बहुमत का समर्थन होना चाहिये। नियुक्ति के ६ महीनों के मध्य उन्हें संसद की सदस्यता स्वीकार करना अनिवार्य है अन्यथा उनका प्रधानमंत्रित्व खारिज हो जायेगा। भारतीय संविधान के पंचम् भाग का 84वाँ अनुच्छेद, संसद की सदस्यता को निर्दिष्ट करता है, उसके अनुसार: कोई व्यक्ति संसद के किसी स्थान को भरने के लिए चुने जाने के लिए अर्हित तभी होगा जब

•वह भारत का नागरिक है और निर्वाचन आयोग द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किसी व्यक्ति के समक्ष तीसरी अनुसूची में इस प्रयोजन के लिए दिए गए प्रारूप के अनुसार शपथ लेता है या प्रतिज्ञान करता है और उस पर अपने हस्ताक्षर करता है;

•वह राज्य सभा में स्थान के लिए कम से कम तीस वर्ष की आयु का और लोकसभा में स्थान के लिए कम से कम पच्चीस वर्ष की आयु का है; और

•उसके पास ऐसी अन्य अर्हताएँ हैं जो संसद द्वारा बनाई गई किसी विधि द्वारा या उसके अधीन इस निमित्त विहित की जाएँ।

तीसरे बिंदू के अनुसार पात्र को संसद द्वारा पारित पात्रता के किसी भी योगयता पर खरा उतारना होगा। अतः प्रधानमंत्रित्व के पात्र को संसद का सदस्य होने योग्य होने हेतु, कुछ अर्हताओं पर खरा उतरना होता है, जिनमें उसका विकृत चरित्र वाला व्यक्ति या दिवालिया घोषित ना होना, स्वेच्छा से किसी विदेशी राज्य की नागरिकता प्राप्त कर लेना, किसी न्यायालय द्वारा उसका निर्वाचन शून्य घोषित कर दिया जाना, तथा राष्ट्रपति या राज्यपाल नियुक्त होना शामिल हैं। साथ ही, पात्र का, केंद्रीय सरकार, किसी भी राज्य सरकार अथवा पूर्वकथित किसी भी सरकार के अधीन किसी भी कार्यालय तथा प्रशासनिक या गैर-प्रशासनिक निकाय की सेवा में किसी भी

लाभकारी पद का कर्मचारी नहीं होना चाहिए। अतः वह लोकसभा या राज्यसभा का निर्वाचित सदस्य (अर्थात सांसद, जो एक लाभकारी पद है) भी नही हो सकता। सदन से प्रस्ताव-स्वीकृत निष्कासन से भी पात्र की सदस्यता समाप्त हो जाती है। नियुक्ती के पश्चात, इनमें से, पूर्वकथित किसी भी अर्हताओं पर, प्रधानमंत्री की अयोग्यता, किसी विधिक न्यायालय में सिद्ध की जाती है, तो, उस व्यक्ती का निर्वाचन शून्य घोषित कर दिया जाता है, और उसे प्रधानमंत्री के पद से निष्कासित कर दिया जाता है।

7.3.4. प्रधानमन्त्री का कार्यकाल (Tenure of Prime Minister)

प्रधानमन्त्री के कार्यकाल के लिए कोई काल-सीमा निर्धारित नहीं की गई है। प्रधानमन्त्री का एक पूरा कार्यकाल आम तौर पर 5वर्ष का होता है, इसका वास्तविक अर्थ यह है की एक व्यक्ति केवल तब तक प्रधानमन्त्री पद पर बना रह सकता है, जबतक लोकसभा में बहुमत का विश्वास उसके विपक्ष में न हो।, लोकसभा का पूरा कार्यकाल 5वर्ष होता है, जिसके बाद नए चुनाव कराये जाते हैं, और नवीन सभा आम तौर पर पुनः प्रधानमन्त्री के पक्ष में विश्वासमत पारित करती है, यदि नव-निर्वाचित सभा प्रधानमन्त्री में अविश्वास घोषित कर देती है तो फिर प्रधानमन्त्री का कार्यकाल समाप्त हो जाता है।

प्रधानमन्त्री का कार्यकाल 5 वर्षों से पूर्व भी समाप्त हो सकता है, यदि किसी कारणवश, लोकसभा, प्रधानमंत्री के विरोध में अविश्वास मत पारित करे अथवा यदि किसी कारणवश, प्रधानमन्त्री की संसद की सदस्यता शुन्य घोषित हो जाए तो प्रधानमन्त्री, किसी भी समय, अपने पद का त्याग, राष्ट्रपति को एक लिखित त्यागपत्र सौंप के कर सकते हैं। प्रधानमन्त्री के कार्यकाल पर ना ही किसी प्रकार की समय-सीमा है ना कोई ऊपरी आयु सीमा निर्दिष्ट की गई है।

7.3.5.प्रधानमन्त्री के कार्य व शक्तियाँ (Powers and functions of the Prime Minister)

- **कार्यकारी शक्तियाँ (Executive powers)**

भारतीय प्रधानमन्त्रीपद के वर्चस्व व महत्व का सबसे अहम कारण है, उसके पदाधिकारी को प्रदान की गई कार्यकारी शक्तियाँ। संविधान का अनुच्छेद 74प्रधानमन्त्री के पद को स्थापित करता है, एवं यह निर्दिष्ट करता है कि एक मंत्रीपरिषद् होगी जिसका मुखिया प्रधानमन्त्री होगा, जो भारत के राष्ट्रपति को "सलाह और सहायता" प्रदान करेंगे। तथा अनुच्छेद 75 यह स्थापित करता है कि मंत्रियों की नियुक्ति, राष्ट्रपति द्वारा प्रधानमन्त्री की सलाह के अनुसार की जायेगी, एवं मंत्री को विभिन्न कार्यभार भी राष्ट्रपति, प्रधानमन्त्री की सलाह के अनुसार ही देंगे। अतः संविधान यह निर्दिष्ट करता है की, संवैधानिक कार्यकारी अधिकार भारत के राष्ट्रपति के पास है। परंतु क्योंकि इन संबंधों में भारत के राष्ट्रपति आम तौर पर प्रधानमन्त्री की सलाहनुसार हस्ताक्षर करते हैं, अतः वास्तविक रूप से, इन कार्यकारी अधिकारों का प्रयोग प्रधानमन्त्री अपनी इच्छानुसार करते हैं। इन विधानों द्वारा संविधान यह स्थापित करता है, की भारत के राष्ट्रप्रमुख होने के नाते राष्ट्रपति पर निहित सारे कार्यकारी अधिकार, अप्रत्यक्ष रूप से, प्रधानमन्त्री ही किया करेंगे, तथा संपूर्ण मंत्रिपरिषद् के प्रधान होंगे तथा अनुच्छेद 75द्वारा मंत्रिपरिषद् का गठन, मंत्रियों की नियुक्ति एवं उनका कार्यभार सौंपना भी प्रधानमन्त्री की इच्छा पर छोड़ दिया गया है, बल्कि मंत्रियों और मंत्रालयों के संबंध में संविधान, प्रधानमन्त्री को पूरी खुली छूट प्रदान करता है। प्रधानमन्त्री, अपने मंत्रिमण्डल में किसी भी व्यक्ति को शामिल कर सकते है, निकाल सकते है, नियुक्त कर सकते हैं या निलंबित करवा सकते हैं।क्योंकि मंत्रियों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा केवल प्रधानमन्त्री की सलाह पर होती है, अतः इसका अर्थ यह है की केंद्रीय मंत्रिपरिषद् वास्तविक रूप से प्रधानमन्त्री की पसंद के लोगों द्वारा निर्मित होती है, जिसमें वे अपनी पसंदानुसार कभी भी फेर-बदल कर सकते है। साथ ही मंत्रियों को विभिन्न कार्यभार प्रदान करना भी पूर्णतः प्रधानमन्त्री की इच्छा पर निर्भर करता है; वे अपने मंत्रियों में से किसी को भी कोई भी मंत्रालय या कार्यभार सौंप सकती हैं, छीन सकते हैं या दूसरा कोई कार्यभार/मंत्रालय सौंप सकते हैं। इन मामलो में संबंधित मंत्रियों से सलाह-मश्वरा करने की, या उनकी अनुमति प्राप्त करने की, प्रधानमन्त्री पर किसी भी प्रकार की कोई संवैधानिक बाध्यता नहीं है।बल्कि मंत्रियों व मंत्रालयों के विषय में पूर्वकथित किसी भी मामले

में संबंधित मंत्री या मंत्रियों की सलाह या अनुमति प्राप्त करने की, प्रधानमन्त्री पर किसी भी प्रकार की संवैधानिक बाध्यता नहीं है। वे कभी भी अपनी इच्छानुसार, किसी भी मंत्री को मंत्रिपद से इस्तीफ़ा देने के लिए भी कह सकते है, और यदि वह मंत्री, इस्तीफ़ा देने से इंकार कर देता है, तो वे राष्ट्रपति से कह कर उसे पद से निलंबित भी करवा सकते हैं।

मंत्रियों की नियुक्ति एवं मंत्रालयों के आवण्टन के अलावा, मंत्रिमण्डलीय सभाएँ, कैबिनेट की गतिविधियाँ और सरकार की नीतियों पर भी प्रधानमन्त्री का पूरा नियंत्रण होता है। प्रधानमन्त्री, मंत्रिपरिषद् के संवैधानिक प्रमुख एवं नेता होते हैं।वे संसद एवं अन्य मंचों पर मंत्रिपरिषद् का प्रतिनिधित्व करते है। वे मंत्रिमण्डलीय सभाओं की अध्यक्षता करते हैं, तथा इन बैठकों की कार्यसूची, तथा चर्चा के अन्य विषय वो ही तय करते हैं। बल्कि कैबिनेट बैठकों में उठने वाले सारे मामले व विषयसूची, प्रधानमन्त्री की ही स्वीकृति व सहमति से निर्धारित किये जाते हैं। कैबिनेट की बैठकों में उठने वाले विभिन्न प्रस्तावों को मंज़ूर या नामंज़ूर करना, प्रधानमन्त्री की इच्छा पर होता है। हालाँकि, चर्चा करने और अपने निजी सुझाव व प्रस्तावों को बैठक के समक्ष रखने की स्वतंत्रता हर मंत्री को है, परंतु अंत्यतः वही प्रस्ताव या निर्णय लिया जाता है, जिसपर प्रधानमन्त्री की सहमति हो और निर्णय पारित किये जाने के पश्चात् उसे पूरे मंत्रिपरिषद का अंतिम निर्णय माना जाता है, और सभी मंत्रियों को प्रधानमन्त्री के उस निर्णय के साथ चलना होता है। अतः यह कहा जा सकता है की संवैधानिक रूपतः, केंद्रीय मंत्रिमण्डल पर प्रधानमन्त्री को पूर्ण नियंत्रण व चुनौतीहीन प्रभुत्व हासिल है। नियंत्रण के मामले में प्रधानमन्त्री, मंत्रिपरिषद् का सर्वेसर्वा होता है, और उसके इस्तीफे से पूरी सरकार गिर जाती है, अर्थात् सारे मंत्रियों का मंत्रित्व समाप्त हो जाता है। मंत्रिपरिषद् की अध्यक्षता के अलावा संविधान, प्रधानमन्त्री पर एक और ख़ास विशेषाधिकार निहित करता है, यह विशेषाधिकार है मंत्रिपरिषद् और राष्ट्रपति के बीच का मध्यसंपर्क सूत्र होना। यह विशेषाधिकार केवल प्रधानमन्त्री को दिया गया है, जिसके माध्यम से प्रधानमन्त्री समय-समय पर, राष्ट्रपति को मंत्रीसभा में लिए जाने वाले निर्णय और चर्चाओं से संबंधित जानकारी से राष्ट्रपति को अधिसूचित कराते रहते हैं। प्रधानमन्त्री के

अलावा कोई भी अन्य मंत्री, स्वेच्छा से मंत्रीसभा में चर्चित किसी भी विषय को राष्ट्रपति के समक्ष उद्घाटित नहीं कर सकता है।यह विशेषाधिकार की महत्व व अर्थ यह है की मंत्रिमण्डलीय सभाओं में चर्चित विषयों में से किन जानकारियों को गोपनीय रखना है, एवं किन जानकारियों को राष्ट्रपति के सामने प्रस्तुत करना है, यह तय करने का अधिकार भी प्रधानमन्त्री के पास है।

- **प्रशासनिक शक्तियाँ (Administrative powers)**

प्रधानमन्त्री, राज्य के विभिन्न मंत्रालयों के मुख्य प्रबंधक के रूप में कार्य करते है, जिसका कार्य, राज्य के सरे मंत्रालयों से, अपनी इच्छानुसार कार्य करवाना है। सरकार के विभिन्न मंत्रालयों के बीच समन्वय बनाना, और कैबिनेट द्वारा लिए गए निर्णयों को कार्यान्वित करवाना तथा विभिन्न मंत्रालयों को निर्देशित करना भी उनका काम है। मंत्रालयों के बीच के प्रशासनिक मतभेद सुलझना और अंतिम निर्णय लेना भी उनका काम है[

सरकारी कार्यों के कार्यान्वयन के अलावा भी, कार्यपालिका पर प्रधानमन्त्री का अत्यधिक प्रभाव और पकड़ होता है। शासन व सरकार के प्रमुख होने के नाते, कार्यकारिणी की तमाम नियुक्तियाँ वास्तविक तौरपर प्रधानमन्त्री और संवैधानिक तौर पर राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। सारे उच्चस्तरीय अधिकारी व पदाधिकारी, प्रधानमन्त्री विधि अनुसार नियुक्त करते हैं। इन नियुक्तियों में, उच्च-सलाहकारों तथा सरकारी मंत्रालयों और कार्यालयों के उच्चाधिकारी समेत, विभिन्न राज्यों के राज्यपाल, महान्यायवादी, महालेखापरीक्षक, लोक सेवा आयोग के अधिपति, व अन्य सदस्य, विभिन्न देशों के राजदूत, वाणिज्यदूत इत्यादि, सब शामिल हैं। यह सारे उच्चस्तरीय नियुक्तियाँ, भारत के राष्ट्रपति द्वारा, प्रधानमन्त्री की सलाह पर किये जाते हैं।

- **विधानमण्डलीय शक्तियाँ (Legislative powers)**

मंत्रिपरिषद के प्रमुख होने के नाते, मंत्रीपरिषद का प्रतिनिधित्व करना प्रधानमन्त्री का कर्त्तव्य माना जाता है। साथ ही यह आशा की जाती है कि सदन में सरकार(मंत्रीपरिषद) द्वारा लिए गए महत्वपूर्ण निर्णयों के विषय में

मंत्रीपरिषद की तरफ़ से प्रधानमन्त्री उत्तर देंगे। लोकसभा अध्यक्ष का चुनाव, निर्वाचन द्वारा होता है, अतः साधारणतः, सभापति भी आम तौर पर बहुमत राजनैतिक दल का होता है। अतः, बहुमत राजनैतिक दल के नेता होने के नाते, सभापति के ज़रिये, आम तौर पर प्रधानमन्त्री, लोकसभा की कार्रवाई को भी सीमितरूप से प्रभावित करने की क्षमता रखते हैं, क्योंकि सभापति, सभा का अधिष्ठाता होता है, और सदन में चर्चा की विषयसूची भी सभापति ही निर्धारित करता है, हालाँकि सदन की कार्रवाई को अधिक हद तक प्रभावित नहीं किया जा सकता है। संविधान का अनुच्छेद 85,लोकसभा के सत्र बुलाने और सत्रांत करने का अधिकार, भारत के राष्ट्रपति को देता है, परंतु इस मामले में आम तौर पर राष्ट्रपति प्रधानमन्त्री की सलाह के अनुसार निर्णय लेते है।अर्थात् वास्तविकरूपे, आम तौर पर लोकसभा का सत्र बुलाना और अंत करना प्रधानमन्त्री के हाथों में होता है। यह अधिकार, निःसंदेह, प्रधानमन्त्री के हाथों में दी गयी सबसे महत्वपूर्ण अधिकार है, जोकि उनको आम तौर पर न केवल अपने राजनैतिक दल पर, बल्कि विपक्ष के सांसदों की गतिविधियों पर भी सीमित नियंत्रण का अवसर प्रदान करता है।

- **वैश्विक संबंधों में प्रधानमन्त्री की भूमिका (Role of Prime Minister in Global Relations)**

सरकार और देश के नेता होने के नाते, वैश्विक मंच पर भारत का प्रतिनिधित्व करना प्रधानमन्त्री की सबसे महत्वपूर्ण ज़िम्मेदारियों में से एक है। सरकार और मंत्रिपरिषद् पर अपनी अपार नियंत्रण के कारण, भारतीय राज्य की वैश्विक नीति निर्धारित करने में प्रधानमन्त्री की सबसे अहम भूमिका होती है। देश की विदेश नीति से संबंधित निर्णय, देश की सामरिक, कूटनीतिक, आर्थिक, वाणिज्यिक इत्यादि आवश्यकताओं के अनुसार आमतौर पर मंत्रिपरिषद् में चर्चा द्वारा निर्धारित की जाती है, जिनमे अंतिम निर्णय प्रधानमन्त्री लेते हैं।वैश्विक संबंधों और उनसे जुड़े मामलों भारत का विदेश मंत्रालय संभालता है, जिसके लिए विदेश मंत्री के नाम से एक स्वतंत्र कैबिनेट मंत्री भी नियुक्त किया जाता रहा है(कई बार प्रधानमन्त्री स्वयँ भी विदेश मंत्रालय का प्रभार संभालते हैं), परंतु क्योंकि विदेश नीतियाँ, इत्यादि, प्रधानमन्त्री निधारित करते हैं, अतः, विदेश मंत्री अंत्यतः प्रधानमन्त्री द्वारा लिए गए निर्णयों और नीतियों को कार्यान्वित करने का काम करता है।

विभिन्न देशों से सामरिक, आर्थिक, कूटनीतिक, वाणिज्यिक और संसाधनिक, इत्यादि संधियाँ और समझौते, तथा उनसे जुड़ी कूटनीतिक बहस और वार्ताओं में प्रधानमन्त्री का किरदार सबसे महत्वपूर्ण होता है, और ऐसी वार्ताओं में वे देश का प्रतिनिधित्व करते हैं।

विभिन्न देशों के के राष्ट्राध्यक्षों व प्रतिनिधिमंडलों का स्वागत-सत्कार करना व उनकी मेजबानी करना भी प्रधानमन्त्री की ज़िम्मेदार होती है। विदेशी प्रतिनिधियों की मेज़बानी के आलावा, प्रधानमन्त्री, जनप्रतिनिधि व शासनप्रमुख होने के नाते, विदेशों में भारत का प्रतिनिधित्व भी करते हैं। वे संयुक्त राष्ट्र संघ, जी-२०, ब्रिक्स, सार्क, गुट निरपेक्ष आंदोलन, राष्ट्रमण्डल, इत्यादि जैसे अंतर्राष्ट्रीय संगठनों में भारत का प्रतिनिधित्व करते हैं, और भारत का पक्ष रखते हैं। अंतर्राष्ट्रीय मंच पर देश की छवि बनाने, और कूटनीतिक वार्ताओं द्वारा देश के हित की आपूर्ति करने में प्रधानमन्त्री का स्थान बेहद महत्वपूर्ण है।

भारतीय संविधान, राष्ट्रप्रमुख और सर्व सामरिक बलों के अधिपति होने के नाते, किसी अन्य देश से युद्ध व शांति घोषित करने का अधिकार भारत के राष्ट्रपति को देता है,] परंतु इसका वास्तविक अधिकार प्रधानमन्त्री को है, क्योंकि राष्ट्रपति इस मामले में प्रधानमन्त्री की सलाह के अनुसार कार्य करने हेतु बाध्य हैं। युद्ध की घोषणा के अलावा, युद्ध की रणनीति निर्धारित करना तथा सामरिक बलों को नियंत्रित करना भी प्रधानमन्त्री द्वारा ही होता है तथा शांति-घोषणा करना और शांति-समझौता करना भी प्रधानमन्त्री का कर्त्तव्य है।

- **प्रधानमंत्री विभिन्न मंत्रालयों या विभागों के प्रभारी के रूप में (The Prime Minister is in charge of various ministries or departments).**

  भारत सरकार के कुछ विशेष, संवेदनशील एवं उच्चस्तरीय विभाग व मंत्रालय जैसे- केंद्रीय सचिवालय, कैबिनेट रक्षा समिति,कैबिनेट आर्थिक समिति,कैबिनेट नियुक्ति समिति,नीतिआयोग,परमाणुऊर्जाविभाग,अंतरिक्षविभाग,नाभिकीयकमानप्राधिकरण,कार्यकर्मी, जनशिकायत व पेंशन मंत्रालय हैं जिनकी विशेषता, संवेदनशीलता या अन्य किसी कारणवश प्रधानमन्त्री के

अलावा अन्य किसी भी मंत्री को इनका कार्यभार नहीं सौंपा जाता है। इन विभिन्न विभागों के कार्यों के प्रति वे संसद को जवाबदेह है, और आवश्यकता पड़ने पर उन्हें संसद् में पूछे गए प्रश्नो का उत्तर देना देना पड़ता है।

7.4. पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

7.4.1.प्रधानमंत्री कार्यालय (Prime Minister Office)

प्रधानमंत्री को सचिवालयी सहायता प्रदान करने के लिए स्वतंत्रता के तुरन्त पश्चात् प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने 'प्रधानमंत्री सचिवालय की स्थापना करवाई थी जो आज प्रधानमंत्री कार्यालय या पी.एम.ओ. कहलाता है। स्वतंत्रता से पूर्व गवर्नर जनरल की कार्यकारी परिषद् पी.एम.ओ. के कार्य सम्पादित करती थी। जिस प्रकार राज्यों में मुख्यमंत्री कार्यालय शासन-सत्ता का केन्द्र बनता जा रहा है उसी प्रकार संघीय स्तर पर पी.एम.ओ. की स्थिति बन रही है। भारत सरकार के 'कार्यविधि नियम, 1961' के अन्तर्गत पी.एम.ओ. को एक विभाग का दर्जा प्राप्त है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में संसदीय शासन-व्यवस्था को अपनाया गया है। राष्ट्रपति शासन-व्यवस्था का प्रधान है। शासन के सारे कार्य उसी के नाम से सम्पादित किये जाते हैं। उसे शासन कार्यों में सहायता तथा सलाह देने के लिए प्रधानमंत्री के नेत्तृत्व में मंत्रिपरिषद् की व्यवस्था होती है। व्यवहार में प्रधानमंत्री ही राष्ट्रपति की सारी शक्तियों का उपभोग करता है अतः प्रधानमंत्री को ही देश का सर्वोच्च या 'वास्तविक शासक माना जाता है। उसे सारे देश में सबसे शक्तिशाली संस्था माना जाता है। उसे देश का मुख्य प्रशासक, राजनीतिक सिक, मंत्रिमण्डल का निर्माता, पुनर्गठनकर्ता, समन्वयकर्ता तथा नियंत्रणकर्ता, राष्ट्रीय नीतियों का निर्माता तथा आधिकारिक प्रवक्ता, सर्वोच्च मुख्यमंत्री, विदेश नीति का निर्माता तथा संचालनकर्त्ता और देश की प्रशासनिक व्यवस्था का केन्द्र-बिन्दु माना जाता है। ऐसी शक्तिशाली संस्था से सम्बद्ध होने के कारण प्रधानमंत्री सचिवालय की शक्ति

और भूमिका स्वाभाविक रूप से ही महत्वपूर्ण बन जाती है। वर्तमान में प्रधानमंत्री सचिवालय की भूमिका उत्तरोत्तर रूप से बढ़ती जा रही है।

7.4.2.प्रधानमंत्री कार्यालय का संगठन (Organisation of the Prime Minister's Office)

प्रधानमंत्री कार्यालय का प्रत्यक्ष नियंत्रण स्वयं प्रधानमंत्री द्वारा किया जाता है तथापि कई बार राज्य मंत्री या उपमंत्री का पद भी इस कार्यालय में सृजित कर दिया जाता है जैसा कि पी.वी. नरसिम्हा राव सरकार ने भुवनेश चतुर्वेदी तथा बाद में असलम शेर खां को पी.एम.ओ. में राज्य मंत्री का कार्यभार दिया था। इसी प्रकार यह व्यवस्था प्रायः अल्पकालीन ही रही है।प्रशासनिक स्तर पर पी.एम.ओ. का एक प्रधान सचिव होता है। सन् 1947 में पंडित नेहरू ने एच.वी.आर. आयंगर को प्रधान निजी सचिव नियुक्त किया। उसके पश्चात् लाल बहादुर शास्त्री के प्रधानमंत्री काल में एल. के. झा प्रधान सचिव बने, जिन्होंने पी.एम.ओ. को एक अत्यंत महत्वपूर्ण संगठन में परिवर्तित किया। इंदिरा गांधी के शासनकाल में पी.एन. हक्सर, पी.सी. अलेक्जेण्डर तथा पी.एन. धर, राजीव गांधी के समय सरला ग्रेवाल तथा बी.जी. देशमुख एवं पी.वी. नरसिम्हा राव के काल में पी.एम.ओ. का सचिव प्रधानमंत्री का अत्यंत विश्वासपात्र अधिकारी होने के कारण नीति निर्माण तथा अन्य शासकीय कार्यों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्रधान सचिव के पद पर सेवारत या सेवानिवृत्त आई.ए.एस. अधिकारी अथवा किसी अन्य की नियुक्ति प्रधानमंत्री द्वारा की जाती है। प्रधान सचिव की सहायतार्थ एक अतिरिक्त सचिव. तीन संयुक्त सचिव, चार निदेशक तथा एक विशेषाधिकारी कार्यरत है जो क्रमशः कार्मिक एवं नीति विषयक मामले, विधि एवं न्याय, रेलवे, परिवहन, संचार, विशेष तथा अणुशक्ति, ग्रामीण विकास, गृह मंत्रालय समन्वय, आपातकालीन समस्याएं तथा उत्तरी-पूर्वी राज्यों के प्रकरणों में प्रमुख सचिव की सहायता करते हैं। इन अधिकारियों को प्रदत्त कार्य इस बात पर निर्भर करता है कि सत्तारूढ़ प्रधानमंत्री के पास कौन से मंत्रालय है। विशेषाधिकारी पद पर नियुक्ति प्रायः राजनीतिक तथा मित्रता लाभों के लिए की जाती है। पी.एम.ओ. में अन्य अधिकारी-कर्मचारी आवश्यकता के अनुसार नियुक्त किए जाते हैं। गृह मंत्रालय के अधीन रहे 'जम्मू-कश्मीर विभाग को एक नवम्बर, 1994 से

प्रधानमंत्री के अधीन कर दिए जाने के कारण यह कार्यालय इससे संबंधित कार्य भी संभालता था किन्तु मई, 1998 में जम्मू-कश्मीर विभाग पुनः गृह मंत्रालय को सौंप दिया गया। आवश्यकतानुसार अन्य अनुभाग या प्रकोष्ठ भी प्रधानमंत्री कार्यालय में स्थापित किए जा सकते हैं। जैसे अटल बिहारी वाजपेयी कार्यालय में 'अयोध्या प्रकरण' पृथक् से बनाया हुआ था।

प्रधानमंत्री कार्यालय के वर्तमान अधिकारियों की सूची (List of current officers of the Prime Minister's Office)-

प्रधानमंत्री के प्रमुख सचिव	डॉ. पी. के. मिश्र
राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार	श्री अजीत डोभाल (कीर्ति चक्र)
प्रधानमंत्री के सलाहकार	श्री अमित खरे, श्री तरुण कपूर
प्रधानमंत्री के अपर सचिव	सुश्री पुण्य सलिला श्रीवास्तव,श्री अरविंद श्रीवास्तव,श्री हरि रंजन राव,श्री आतिश चंद्र
प्रधानमंत्री के संयुक्त सचिव	श्री दीपक मित्तल,श्री सी श्रीधर,श्री रोहित यादव
प्रधानमंत्री के निजी सचिव	श्री विवेक कुमार,श्री हार्दिक सतीशचंद्र शाह
विशेष कार्याधिकारी (संचार & सूचना प्रौद्योगिकी)	डॉ. हीरेन जोशी
विशेष कार्याधिकारी (अनुसंधान एवं रणनीति)	श्री प्रतीक दोषी
विशेष कार्याधिकारी (अपॉइंटमेंट एंड टूर	श्री संजय आर. भावसर

ओएसडी (मीडिया रिसर्च	श्री आशुतोष नारायण सिंह
निदेशक	श्री सौरभ शुक्ला,श्रीमती ऐश्वर्या सिंह,श्री नवल किशोर राम,श्री हृषीकेश अरविंद मोदक,सुश्री श्वेता सिंह,सुश्री वी.ललिता लक्ष्मी,श्री राजेश कुमार साहू,सुश्री शोबना प्रमोद, Sh. Rituraj,Sh. Parthiban P,श्री मंगेश घिल्डियाल,डॉ. विपिन कुमार
उप सचिव	सुश्री निधि तिवारी,Ms. Reshma Reghunathan Nair,सुश्री मनमीत कौर,श्री बिप्लब कुमार रॉय
संचार अधिकारी	डॉ. नीरव के. शाह,श्री यश राजीव गाँधी,श्री सुहास एन अंबाले
विश्लेषण एवं अनुसंधान अधिकारी	सुश्री अदिति ठक्कर
अवर सचिव (प्रशासन)	श्री चंद्र शेखर सिंह
अवर सचिव (पब्लिक)	श्री मुकुल दीक्षित
अवर सचिव (एच आर)	श्रीमती वेद ज्योति
अवर सचिव (टीजी)	श्री चंद्र किशोर शुक्ल

अवर सचिव (संसद)	श्री बिनोद बिहारी सिंह
अवर सचिव (एफएस)	श्री राजेश कुमार नीरज
अवर सचिव (एआर)	श्री सुनील कुमार पांडे
अवर सचिव (आईआर)	श्री संजय कुमार मिश्रा
अवर सचिव (एसडब्ल्यू)	श्री दीपक कुमार
अवर सचिव (निधि)	श्री प्रदीप कुमार श्रीवास्तव
अवर सचिव (एफई)	श्री अनंत कुमार
अवर सचिव (RTI)	श्री प्रवेश कुमार
अवर सचिव (एमसी)	श्री चिराग एम. पांचाल
संदर्भ अधिकारी	श्री अभिनव प्रसून,श्री अविश्रांत मिश्रा

वर्तमान तक प्रधानमंत्री के प्रधान सचिवों की सूची (List of Principal Secretaries to the Prime Minister till present)-

श्री पी. एन. हक्सर	(06.12.1971 to 28.02.1973)
Shri V. Shankar	(04.04.1977 to 31.07.1979)

डॉ. पी.सी. सिकंदर	(02.05.1981 to 18.01.1985)
श्री बी.जी. देशमुख	(27.03.1989 to 11.12.1990)
श्री एस.के. मिश्रा	(11.12.1990 to 24.06.1991)
श्री ए.एन. वर्मा	(25.06.1991 to 15.05.1996)
.**श्री टी.आर. सतीसचंद्रन**	(12.06.1996 to 30.03.1997)
श्री एन.एन. वोहरा	(01.07.1997 to 19.03.1998)
.**Shri Brajesh Misra**	(19.03.1998 to 22.05.2004)
श्री टी.के.ए. नायर	(28.05.2004 to 03.10.2011)
श्री पुलोक चटर्जी	(03.10.2011 to 26.05.2014)
श्री नृपेन्द्र मिश्र	(28.05.2014 to 11.09.20190
डॉ. पी.के. मिश्रा	(11.09.2019 to till date

7.4.3.प्रधानमंत्री कार्यालय (सचिवालय) के कार्य (Functions of Prime Minister Office)

इस कार्यालय (सचिवालय) का प्रमुख कार्य प्रधानमंत्री को उसके समस्त कार्यों एवं दायित्वों के निर्वहन में सचिवीय सहायता प्रदान करना है। देश के सम्मुख सामान्य परिस्थितियां हों अथवा आपातकालीन, प्रधानमंत्री को वास्तविक मुख्य कार्यपालिका के रूप में संघीय सरकार के समस्त प्रशासनिक एवं अन्य दायित्वों को पूर्ण करने में यह कार्यालय कदम-कदम पर सहायता करता है। प्रधानमंत्री कार्यालय प्रधानमंत्री के अतिरिक्त हाथ, आँख और कान का कार्य करता है। यह विभिन्न मामलों से संबंधित सूचना, जानकारियां, आकडे, सामग्री एकत्रित कर उन

पर गम्भीरता से विचार करता है और आवश्यकतानुसार निर्णय लेने के लिए प्रधानमंत्री को सुझाव देता है। इस प्रकार यह कार्यालय (सचिवालय) प्रधानमंत्री के लिए अतिरिक्त मस्तिष्क का कार्य करता है।

प्रधानमंत्री कार्यालय के प्रमुख कार्यों को निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर अधिक स्पष्ट किया जा सकता है-

- **कार्य व्यापार नियम सम्बन्धी कार्य (Business Operations Rules) :** कार्य व्यापार नियमों के तहत प्रधानमंत्री के अधीन केन्द्रीय सरकार के कुछ विभाग और मंत्रालयों का प्रत्यक्ष दायित्व होता है। इन विभागों और और मंत्रालयों के कुशल संचालन का दायित्व प्रधानमंत्री के कन्धों पर होता है। इन विभागों में आन्तरिक सहयोग एवं समन्वय बनाए रखने, कुशल और प्रभावी प्रशासनिक संचालन आदि में यह कार्यालय प्रधानमंत्री को सचिवालय सहायता प्रदान करता है।
- **प्रधानमंत्री को दायित्वों के पूर्ण करने में सहायता देना (Support in Performing Prime Minister's Responsibility):** भारत देश में संसदात्मक व्यवस्था के तहत प्रधानमंत्री वास्तविक राजनैतिक कार्यपालिका (सरकार) का मुखिया होता है। इस रूप में प्रधानमंत्री को केन्द्रीय सरकार के समस्त विभागों और मंत्रालयों के मध्य सहयोग और समन्वय बनाए रखना पड़ता है। यही नहीं, उसे समस्त राज्य सरकारों और केन्द्र शासित प्रदेशों से भी सम्पर्क बनाए रखना पड़ता है। समस्त प्रशासनिक संस्थाएँ प्रधानमंत्री के कुशल प्रशासनिक नेत्तृत्व की अपेक्षा रखती है। केन्द्रीय सरकार की श्रेष्ठ नीतियों के निर्माण और कुशल संचालन के दायित्वों के निर्वाह में यह कार्यालय प्रधानमंत्री कार्यालय को सहायता देता है।
- **योजना सम्बन्धी कार्यों में सहायता देना (Help in Planning Functions) :** प्रधानमंत्री कार्यालय, प्रधानमंत्री को योजना सम्बन्धी कार्यों के कुशल निर्वाह के लिए भी सचिवीय सहायता उपलब्ध कराता है। प्रधानमंत्री देश के नीती आयोग का अध्यक्ष होता है। यह संस्थान देश के चहुँमुखी विकास के लिए योजनाओं का निर्माण और मूल्यांकन करती है। ऐसी स्थिति में योजनाओं के निर्माण और मूल्यांकन में भी प्रधानमंत्री कार्यालय, प्रधानमंत्री को सचिवीय सहायता उपलब्ध कराता है।

- **प्राकृतिक आपदाओं के समय सहायता देना (Assist at the time Natural Disaster) :** भारत भौगोलिक दृष्टि से विविधता वाला देश है, जिसमें आए दिन देश के किसी क्षेत्र में बाढ़, अकाल, सूखा, भूकम्प, महामारी आदि अनेक प्राकृतिक आपदाएँ होती रहती हैं। इन आपदाओं से निपटने तथा जनता को तुरन्त राहत प्रदान करने के लिए प्रधानमंत्री राहत कोष' का निर्माण किया गया है, जिसका संचालन प्रधानमंत्री कार्यालय द्वारा ही किया जाता है। इस कोष से समस्त राज्यों या नागरिकों को दी गई सहायता का पूरा लेखा-जोखा रखने का दायित्व इसी कार्यालय का होता है।
- **जनसम्पर्क सम्बन्धी कार्य (Public Relation Functions):** आज का युग जनसम्पर्क का युग है। सरकार के प्रमुख होने की हैसियत से प्रधानमंत्री को जनसम्पर्क बनाए रखना अति आवश्यक है। प्रधानमंत्री अपने कार्यालय के माध्यम से निरंतर प्रेस, रेडियो, दूरदर्शन आदि संचार माध्यमों से जनसम्पर्क बनाए रखता है। यह जनसम्पर्क बनाए रखने का कार्य प्रधानमंत्री कार्यालय करता है। इसके अतिरिक्त जनता द्वारा प्रधानमंत्री को व्यक्तिगत तौर पर प्राप्त अनेक आवेदनों, शिकायतों, अनुरोधों का भी संतोषप्रद उत्तर देना प्रधानमंत्री कार्यालय का अनिवार्य कार्य है। इस प्रकार प्रधानमंत्री के जनसम्पर्क सम्बन्धी कार्यों को भी प्रधानमंत्री कार्यालय पूर्ण करता है।
- वे समस्त कार्य जो किसी मंत्रालय अथवा विभाग को नहीं सौंपे गये है प्रधानमंत्री कार्यालय (सचिवालय) के क्षेत्राधिकार में आ जाते हैं।
- यह कार्यालय प्रधानमंत्री के आवयक सरकारी कागजात तैयार करके उनके संधारण के लिए जिम्मेदार है। प्रधानमंत्री द्वारा मांगी गई सूचना, आंकड़े एवं सामग्री उपलब्ध कराता है।
- प्रधानमंत्री के अतिथियों का स्वागत सत्कार करना भी इस कार्यालय का कार्य है।
- प्रधानमंत्री द्वारा समय-समय पर दिए जाने वाले भाषण तैयार करना भी इस कार्यालय का ही कार्य है।
- इसके अतिरिक्त प्रधानमंत्री की देश-विदेश यात्राओं के विस्तृत कार्यक्रम भी यही कार्यालय तैयार करता है।

प्रधानमंत्री कार्यालय के उपरोक्त महत्वपूर्ण कार्यों को देखकर समय-समय पर अनेक विद्वानों ने इसे 'सरकार का लघु स्वरूप तथा लघु मंत्रिमण्डल' तक कहा है। प्रधानमंत्री कार्यालय के बढ़ते महत्व के कारण कैबिनेट सचिवालय तथा केन्द्रीय सचिवालय का महत्व कम हो गया है।

7.4.4.प्रधानमंत्री कार्यालय की बदलती भूमिका (Changing Role of Prime Minister Office)

प्रधानमंत्री कार्यालय (सचिवालय) की भूमिका सदैव देश के प्रशासन में एक-सी नहीं रही है। समय के साथ-साथ इसकी भूमिका में भी परिवर्तन होते रहे हैं। इस कार्यालय की भूमिका पर इसमें रहे सचिवों की पृष्ठभूमि, व्यक्तित्व, महत्वाकांक्षा, कार्यक्षमता, कार्यशैली और प्रधानमंत्री द्वारा उन पर किए गए विश्वास का भी प्रभाव पडे बिना नहीं रहा है। प्रधानमंत्री कार्यालय की बदलती भूमिका का वर्णन काल-क्रम के अनुसार निम्नांकित प्रकार से रहा है-

पं. जवाहरलाल नेहरू जी स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री थे। उनके शासनकाल में प्रधानमंत्री सचिवालय की भूमिका प्रधानमंत्री को केवल सचिवीय सहायता देने तक ही सीमित थी। नेहरू के काल में प्रधानमंत्री सचिवालय की भूमिका ज्यादा प्रभावी नहीं थी क्योंकि नेहरू जी ने अपने काल में कैबिनेट सचिवालय को अधिक महत्व दिया। नेहरू जी के बाद लालबहादुर शास्त्री जी देश के प्रधानमंत्री बनाए गये। शास्त्री जी के काल में प्रधानमंत्री सचिवालय को प्रभावशाली और शक्तिशाली भूमिका प्राप्त हुई। नेहरू जी एवं शास्त्री जी के प्रशासन में यह अन्तर था कि नेहरू जी कुछ मंत्रालय स्वयं के पास रखते थे जबकि शास्त्री जी अपने स्वयं के पास कोई विभाग या मंत्रालय नहीं रखते थे। सम्भवतः इसी कारण शास्त्री जी की निर्भरता कैबिनेट सचिवालय कि तुलना में प्रधानमंत्री सचिवालय पर बढ़ गई थी। शास्त्री जी मंत्रिमण्डल की गतिविधियों में समन्वय स्थापित करते थे।1966 को जब देश की प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी बनी तब प्रधानमंत्री सचिवालय के प्रधान पद पर एल.के. झा थे। झा एक अनुभवी और योग्य सचिव थे। इसलिए इंदिरा गांधी ने प्रधानमंत्री सचिवालय को अत्यधिक महत्व दिया। इंदिरा गांधी सभी प्रकार के कार्यों में

झा से परामर्श लेती थी। झा को यह इतना महत्व देती थी कि शायद ही कोई निर्णय वह उनके बिना लेती थी। मंत्रालयों तथा कैबिनेट सचिवालय का काम तो इन्हें क्रियान्वित करने का ही था। इस प्रकार इन्दिरा गांधी के इस काल में प्रधानमंत्री सचिवालय की भूमिका तथा महत्व अत्यधिक प्रभावी और शक्तिशाली था। मोरारजी देसाई ने देश की सता संभालते ही प्रधानमंत्री सचिवालय का नाम बदलकर प्रधानमंत्री कार्यालय कर दिया। प्रधानमंत्री कार्यालय को लोकतांत्रिक रूप प्रदान किया। प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई ने इसी क्रम में प्रधानमंत्री कार्यालय के आकार और शक्तियों में कमी की इस कार्यालय का स्वरूप वही हो गया जो नेहरू काल में था। निजी सचिव और गिने-चुने सहायक मात्र रह गये। इन्दिरा गांधी जब दूसरी बार देश की प्रधानमंत्री बनीं तब अपनी स्थिति को सुदृढ करने के लिए इन्दिरा गांधी ने फिर से प्रधानमंत्री सचिवालय को शक्ति का केन्द्र बनाया। इसके अधिकारियों और कर्मचारियों की संख्या में फिर से वृद्धि की गई। इंदिरा गांधी के द्वितीय काल के शासन में प्रधानमंत्री सचिवालय अन्य सचिवालयों तथा मंत्रालयों की तुलना में काफी शक्तिशाली रहा।राजीव गांधी के शासनकाल में प्रधानमंत्री सचिवालय पर प्रधानमंत्री की अश्रितता अधिक थी।राजीव गांधी ने प्रधानमंत्री सचिवालय का विस्तार करके इसकी शक्तियों में वृद्धि की। राजीव गांधी के शासनकाल में प्रधानमंत्री सचिवालय देश की सत्ता में इतना छाया हुआ था कि उसे 'लघु मंत्रिमण्डल कहा जाता था।नरसिम्हाराव ने अपने प्रधानमंत्री काल में प्रधानमत्री सचिवालय को महत्व दिया। लेकिन इतना नहीं जितना इंदिरा गांधी एवं राजीव गांधी ने दिया। लेकिन प्रधानमंत्री नरसिम्हाराव ने अपने कार्यालय में 1992 में प्रधानमंत्री सचिवालय में अयोध्या प्रकोष्ठ स्थापित करके एक नई परम्परा डाली।अटलबिहारी वाजपेयी, एच.डी. देवेगौड़ा एवं इन्द्रकुमार गुजराल जब प्रधानमंत्री बने तो तीनों ही को स्पष्ट बहुमत नहीं था, अतः प्रधानमंत्री कार्यालय की भूमिका प्रभावी नहीं रही। अक्टूबर 1999 में अटलबिहारी वाजपेयी प्रधानमंत्री बने इस समय में प्रधानमंत्री कार्यालय की छवि को लेकर समय-समय पर आलोचना होती रही हैं। वर्ष 2004 में डॉ. मनमोहन के नेतृत्व में अन्य दलों के गठबन्धन के साथ यू.पी.ए. सरकार बनी। किंतु इस कार्यकाल में भी प्रधानमंत्री कार्यालय की भूमिका तथा महत्व अधिक शक्तिशाली नहीं था। कार्यात्मक मामलों में

प्रधानमंत्री कार्यालय अलग संस्था बन गया था। सुब्रमण्यम समिति की सिफारिशों के अनुसार सुरक्षा पहलुओं की जिम्मेदारियों से इसे अलग कर दिया गया था। 2014 से वर्तमान प्रधानमंत्री कार्यालय शक्ति का केन्द्र है। इस प्रकार अब तक तक प्रधानमंत्री सचिवालय के आकार, शक्तियों में समय के अनुसार वृद्धि तथा कमी होती गई है।

7.4.5.प्रधानमंत्री कार्यालय का महत्व (Importance of Prime Minister's Office)

- **प्रधानमंत्री का कार्यालय प्रधानमंत्री को सलाह देने और उनके कामकाज के दौरान उनका प्रतिनिधित्व करने के लिए जिम्मेदार होता है।**
- **केंद्र सरकार के बेहतर कामकाज में समन्वय और सहायता करने में।**
- **कार्यालय अलग-अलग मंत्रालयों के साथ समन्वय करने और उनकी गतिविधियों की निगरानी करने के लिए जिम्मेदार है।**
- **शासन में सुधार, नीतियों और कार्यक्रमों को तैयार करने, प्रशासनिक प्रणालियों और प्रक्रियाओं को मजबूत करने आदि में ।**
- **सरकारी ढांचे में सबसे शक्तिशाली और प्रभावशाली कार्यालयों में से एक है।**
- **प्रधानमंत्री का कार्यालय सरकारी नीति की रूपरेखा बनाने और उसे लागू करने, कार्यकारी निर्णय लेने और दिन-प्रतिदिन के कार्यों को चलाने के लिए जिम्मेदार होता है।**
- **प्रधानमंत्री का कार्यालय अंतरराष्ट्रीय संबंधों में देश का प्रतिनिधित्व करता है और विदेशी राजनयिकों से निपटता है।**
- **सरकार का गठन करना और उसके कैबिनेट सदस्यों को लोगों की आम भलाई के लिए मिलकर काम करने के लिए प्रेरित करना उनकी जिम्मेदारी है।**
- **यह भी सुनिश्चित करना होता है कि देश के मामले बिना किसी बाधा के सुचारू रूप से और प्रभावी ढंग से चलें।**
- **देश से संबंधित सभी वित्तीय मामलों को नियंत्रित और ऑडिट करना है।**

- **वर्तमान राजनीतिक मुद्दों और अंतर्राष्ट्रीय चिंताओं से संबंधित नीति का विश्लेषण करना है।**

7.5.स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

(अ). देश का सर्वोच्च या 'वास्तविक शासक' किसे माना जाता है ?

(आ).किस प्रधानमंत्री के कार्यालय में 'अयोध्या प्रकरण' पृथक् से बनाया हुआ था ?

(इ).भारत सरकार के कौनसे 'कार्यविधि नियम' के अन्तर्गत पी.एम.ओ. को एक विभाग का दर्जा प्राप्त है ?

(ई).1947 में पंडित नेहरू ने किसे निजी सचिव नियुक्त किया ?

(उ). 'सरकार का लघु स्वरूप तथा लघु मंत्रिमंडल' किसे कहा गया है?

(ऊ). संविधान के किस भाग के अनुच्छेदों में प्रधानमन्त्री पद के संवैधानिक अधिकारों और कर्तव्यों को निर्धारित किया गया है?

(ए).देश के किस प्रधान मंत्री ने प्रधानमंत्री सचिवालय का नाम बदलकर प्रधानमंत्री कार्यालय कर दिया था।

7.6.सारांश (Summary)

प्रधानमंत्री कार्यालय (पीएमओ) को एक ऐसी एजेंसी के रूप में माना जा सकता है जिसमें भारत के प्रधानमंत्री के कर्मचारी शामिल होते हैं। तात्कालिक कर्मचारियों के साथ, प्रधानमंत्री को रिपोर्ट करने के लिए कई स्तरों पर विभिन्न सहायक कर्मचारी उपलब्ध हैं। इस कार्यालय का नेतृत्व भारत के प्रधानमंत्री के प्रधान सचिव करते हैं। पीएमओ की मुख्य जिम्मेदारी प्रधानमंत्री को सचिवीय सहायता प्रदान करना है।पीएमओ की संरचना में राजनीतिक दृष्टि से पीएमओ का नेतृत्व प्रधानमंत्री करते हैं। प्रशासनिक दृष्टि से प्रधानमंत्री कार्यालय का नेतृत्व प्रधानमंत्री के प्रधान सचिव करते हैं। प्रधानमंत्री के एक या दो अतिरिक्त सचिव हो सकते हैं जो पीएमओ का हिस्सा होते हैं।प्रधानमंत्री के 5 संयुक्त सचिव हैं जो पीएमओ का हिस्सा हैं।प्रधानमंत्री कार्यालय में अनेक निदेशक,

सचिव और कनिष्ठ सचिव हो सकते हैं।पीएमओ को प्रधानमंत्री और सरकार के अन्य मंत्रियों के बीच की कड़ी के रूप में भी देख सकते हैं।चूंकि प्रधानमंत्री सरकार में मुख्य कार्यकारी अधिकारी होता है, इसलिए उसे उचित तरीके और दिशा में काम करना होता है। पीएमओ का काम प्रधानमंत्री को प्रधानमंत्री या मुख्य कार्यकारी अधिकारी के तौर पर अपनी जिम्मेदारी निभाने में मदद करना है। प्रधानमंत्री कार्यालय, प्रधानमंत्री के पास आने वाले दिशा-निर्देशों और व्यावसायिक नियमों के अंतर्गत आने वाले सभी संदर्भों का ध्यान रखता है और उनसे निपटता है। भारत के प्रधानमंत्री योजना आयोग के अध्यक्ष भी हैं और पीएमओ प्रधानमंत्री को योजना आयोग के अध्यक्ष के रूप में अपनी सभी जिम्मेदारियों को पूरा करने में मदद करता है। पीएमओ प्रधानमंत्री को उनके समक्ष प्रस्तुत किए गए नए मामलों की जांच करने और उन्हें अनुकूलित करने में भी सहायता प्रदान करता है।प्रधानमंत्री कार्यालय, प्रधानमंत्री कार्यालय के जनसंपर्क संबंधी कार्यों के लिए भी जिम्मेदार है।

7.7.सूचक शब्द (Key Words)

- **प्रधानमंत्री**-प्रधानमंत्री एक राजनैतिक पद होता है, जिसके पदाधिकारी पर सरकार की कार्यकारिणी का संचालन करने का भार होता है। सामान्यतः, प्रधानमंत्री अपने देश की संसद का सदस्य भी होता है।
- **कार्यालय**-कार्यालय (संस्कृत:कार्य=काम +आलय=घर) या दफ्तर एक कमरा या इमारत होती है जिसका प्रयोग मुख्य रूप से लिपीकीय या प्रशासनिक कार्य करने के लिए किया जाता है।
- **संवैधानिक**-संवैधानिक किसी राज्य, संगठन आदि के संविधान से संबंधित या उससे सम्बन्धित।
- **सचिवालय**- सचिवालय सरकार के सचिवों, मंत्रियों तथा विभिन्न विभाग के प्रधान अधिकारियों आदि के कार्यालयों का समूह ।

7.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

- **प्रधान मंत्री कार्यालय के संगठन व कार्यों का विस्तार से वर्णन कीजिए।**

- **प्रधान मंत्री के कार्य व शक्तियों का विस्तार से वर्णन कीजिए।**
- **प्रधानमंत्री कार्यालय की बदलती भूमिका व प्रधानमंत्री कार्यालय का महत्व का वर्णन कीजिए।**

7.9. उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

(अ). प्रधानमंत्री

(आ).अटल बिहारी वाजपेयी

(इ).'कार्यविधि नियम, 1961'

(ई).एच.वी.आर. आयंगर को

(उ). प्रधानमंत्री कार्यालय को

(ऊ). संविधान के भाग 5 के विभिन्न अनुच्छेदों में

(ए). मोरारजी देसाई ने

7.10. सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

- तुलनात्मक राजनीति की रूपरेखा- ओम प्रकाश गाबा ,मयूर पेपर बैक्स , नोएडा ।
- तुलनात्मक शासन एवं राजनीति - डॉ . बीरकेश्वर प्रसाद सिंह ,ज्ञानदा प्रकाशन (पी .एण्ड डी .) 24 , दरियागंज , अंसारी रोड , दिल्ली ।
- तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ - सी.बी . गेना , विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि. अंसारी रोड , दिल्ली ।
- तुलनात्मक राजनीति - जे.सी . जौहरी , स्टर्लिंग पब्लिशर्ज प्रा.लि. , दिल्ली ।
- ब्रिटिश संविधान - महादेव प्रसाद शर्मा, किताब महल इलाहाबाद, दिल्ली ।

Subject : लोक प्रशासन	
Course Code : **BA204**	Author : **Dr. Deepak**
Lesson No. : **8**	Vetter : **Dr.Parveen Sharma**
सेविवर्ग प्रशासन का अर्थ, परिभाषा तथा नौकरशाही	

अध्याय की सरंचना

8.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

8.2 परिचय (Introduction)

8.3. अध्याय के मुख्य बिन्दु

8.3.1. पद वर्गीकरण का अर्थ एवं परिभाषा (Position Classification : Meaning and Definitions) :

8.3.2. पद वर्गीकरण के मूल आधार (The Factors Determining Position Classification)

8.3.3. भारत में पद वर्गीकरण व्यवस्था (Position Classification System in India)

8.4 पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

8.4.1. अखिल भारतीय सेवाएं (All India Services)

8.4.2. भर्ती का अर्थ (Meaning of Recruitment)

8.4.3. प्रशिक्षण : अर्थ (Training : Meaning)

8.4.4.पदोन्नति से अभिप्राय (Meaning of the Promotion)

8.4.5. पदोन्नति व्यवस्था का महत्व (Importance of a Promotion System)

8.5. स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

8.6. सारांश (Summary)

8.7 सूचक शब्द (Key Words)

8.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

8.9.उत्तर–स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

8.10.सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

8.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय में निम्न विषयों को अध्ययन करेंगे :

- सेविवर्ग प्र"ाासन के अर्थ, परिभाषा तथा अवधारणात्मक अध्ययन करना।
- सेविवर्ग प्र"ाासन के सिद्धान्तों का भारतीय प्र"ाासन में महत्व का अध्ययन करना।
- सेविवर्ग प्र"ाासन की वि"ोषताओं का अध्ययन करना।
- नौकर"ाही का अर्थ, परिभाषा तथा वि"ोषताओं को समझना।

8.2 परिचय (Introduction)

कार्मिक प्र"ाासन की मूलभूत समस्याओं में से एक समस्या इसके वर्गीकरण की है। लोक कर्मचारी अनेक प्रकार के कार्यों को सम्पन्न करते हैं। भिन्न–भिन्न कार्यों की प्रकृति तथा कर्मचारियों के उत्तरदायित्व एवं अधिकार (Authority) में अन्तर होता है। चपरासी, लिपिक, अधीक्षक, विभागाध्यक्ष, सचिव–ये सभी शासन सेवाओं के सदस्य होते हैं, किन्तु इनमें से प्रत्येक भिन्न–भिन्न प्रकार के कार्य सम्पन्न करता है। अतः कार्यों की विभिन्नता के कारण और भिन्न–भिन्न प्रकार अथवा पदक्रमों के कार्यों के लिए भिन्न–भिन्न किस्म की साज–सज्जा की आव"यकता होने के कारण सेवाओं का वर्गीकरण करना पड़ता है। चूंकि श्रम–विभाजन किसी भी सहकारी प्रयत्न (Co-operative Effort) का आधार होता है, यह वर्गीकरण किसी भी सहकारी कार्मिक व्यवस्था का आधार होता है।

8.3. अध्याय के मुख्य बिन्दु

8.3.1. पद वर्गीकरण का अर्थ एवं परिभाषा (Position Classification : Meaning and Definitions) :

किसी समान और अनिवार्य लक्षण के आधार पर व्यक्तियों अथवा वस्तुओं का समूहीकरण है। कार्मिक प्र"ाासन में वर्गीकरण का अर्थ कर्त्तव्यों और दायित्वों के आधार पर पदों का ऐसा समूहीकरण है, जिससे मोटे तौर पर कुछ वर्ग निर्मित हो जाएं। जिन पदों के कर्त्तव्य और दायित्व एक–से होते हैं, वे एक वर्ग में रख दिये जाते हैं। इस बात की चिन्ता नहीं की जाती है कि वे पद किस विभाग के अन्तर्गत आते हैं। इस प्रकार, लिपिक वर्ग में सभी

लिपिकों का समावे"ा होता है तथा प्र"ाासक वर्ग में सभीं प्र"ाासनिक अधिकारियों का, फिर चाहे वे किसी भी विभाग में सेवा क्यों न करते हों।

मार्सटीन मार्क्स के अनुसार, ''वर्गीकरण का अर्थ कर्त्तव्यों एवं अपेक्षित योग्यताओं की समानता के आधार पर पदों को समूहबद्ध करना है।''

डिमॉक तथा डिमॉक के अनुसार, ''वर्गीकरण का अर्थ है तुलनात्मक कठिनाइयों एवं उत्तरदायित्वों के अनुसार पदसोपान के रूप में पदों को छांटना और श्रेणीबद्ध करना।''

फिफनर के अनुसार, ''वर्गीकरण से हमारा तात्पर्य यह है कि समान कार्य तथा समान उत्तरदायित्व वाले पद एक ही श्रेणी में रखे जाते हैं चाहे वह किसी भी विभाग अथवा सेवा से सम्बन्धित हो।''

8.3.2. पद वर्गीकरण के मूल आधार (The Factors Determining Position Classification)

(१) किसी पद का विषय अथवा कार्यक्षेत्र – जैसे इंजीनियरिंग, स्वास्थ्य तथा चिकित्सा, राजस्व आदि।

(२) पर्यवेक्षण और अधीक्षक की मात्रा – जिन पदों का ऊपर से अत्यधिक पर्यवेक्षण किया जाता है, उन्हें निम्न स्तर के पद माना जाता है, जिन पर पर्यवेक्षण की मात्रा कम हो, वे पद उच्च श्रेणी के माने जायेंगे।

(३) अधीक्षण करने की शक्तियों की मात्रा – यदि पदधारी को अधिक अधीक्षणात्मक शक्तियां प्राप्त हैं तो इसका अर्थ है कि उसका पद ऊंचा है, और यदि उसे अधीक्षण की कम शक्तियां प्राप्त हैं, तो उसका पद नीचा है।

(४) कार्य की प्रकृति – किसी व्यक्ति को जितना सरल काम करना पड़ता है उसका पद उतना ही छोटा माना जायेगा और जिसे जितना कठिन काम करना पड़ता है, उसका पद उतना ही बड़ा माना जायेगा।

(५) पद के लिए वांछनीय योग्यताएं – जिस पद के लिए ऊंची योग्यता निर्धारित है, वह पद ऊंचा होगा और जिसके लिए साधारण या निम्न कोटि की योग्यताएं रखी गयी हों, वह पद नीचा होगा।

8.3.3. भारत में पद वर्गीकरण व्यवस्था (Position Classification System in India)

ईस्ट इण्डिया कम्पनी के समय भारत में लोक कर्मचारी दो वर्गों में विभाजित थे – कवेनेण्टेड (Convenanted) तथा अनकवेनेण्टेड (Un-Covenanted)। एचीसन आयोग (1887) की अनु"ांसाओं के अनुसार लोक सेवाओं की तीन वर्गों में विभाजित किया गया – इम्पीरियल (Imperial), प्रान्तीय (Provincial) और अधीनस्थ

(Subordinate)। परन्तु यह वर्गीकरण उपयुक्त नहीं था, क्योंकि तथाकथित प्रान्तीय सेवाओं से सम्बद्ध अनेक कर्मचारी ऐसे विभागों में काम कर रहे थे, जिन पर केन्द्र का नियन्त्रण था। इस्लिंग्टन आयोग (1912–15) ने इस त्रिवर्गीय वर्गीकरण के स्थान पर सेवाओं को दो वर्गों में विभाजित करने का सुझाव रखा, क्रम"ाः उच्चतर सेवा और निम्नतर सेवा। सन् 1926 में 'इम्पीरियल' शब्द के स्थान पर 'भारतीय' शब्द अपनाया गया।

1930 के प"चात् भारत सरकार की सेवाओं का वर्गीकरण अखिल भारतीय तथा केन्द्रीय इन दो वर्गों में किया गया। अखिल भारतीय सेवा में दो सेवाएं प्रमुख थीं – इण्डियन सिविल सर्विस तथा इण्डियन फॉरेन सर्विस तथा केन्द्रीय सेवाओं को प्रथम श्रेणी, द्वितीय श्रेणी, अधीन सेवाओं और निम्न सेवाओं में बांटा गया। तत्कालीन प्रान्तों में भी वर्गीकरण का वही आधार रखा गया था, जो केन्द्रीय सेवाओं में अपनाया गया था।

भारत में सेवाओं का वर्गीकरण उन नियमों के अन्तर्गत किया जाता है, जो मूलतः 1930 में बनाये गये थे तथा जिनका सं"ाोधन समय–समय पर किया जाता रहा है। इन नियमों को लोक सेवा वर्गीकरण, नियन्त्रण तथा अपील नियमों के नामों से पुकारा जाता है।

8.4 पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

8.4.1. अखिल भारतीय सेवाएं (All India Services)

स्वयं संविधान के अन्तर्गत अखिल भारतीय सेवाओं का प्रावधान किया गया है। उसमें वि"ोषतः भारतीय प्र"ाासनिक सेवा तथा भारतीय पुलिस सेवा का उल्लेख किया गया है और उन्हें जारी रखा गया है, तथा संसद को यह प्राधिकार है कि वह विधि द्वारा अन्य सेवाओं की स्थापना कर सके। अखिल भारतीय सेवाओं की स्थापना करने के लिए विधि पारित होने से पहले यह आव"यक है कि राज्य सभा अपने दो–तिहाई बहुमत से एक प्रस्ताव पारित करके यह घोषणा करे कि इस प्रकार की सेवा की स्थापना आव"यक है। इस विषय में राज्यों से भी पराम"ा किया जा सकता है। संविधान के प्रारम्भ के प"चात् निम्नलिखित अखिल भारतीय सेवाओं की स्थापना का विचार किया गया था, परन्तु केवल एक ही सेवा अर्थात् 'भारतीय वन सेवा' की स्थापना की गयी :

1. भारतीय इंजीनियरिंग सेवा, 2. भारतीय वन सेवा, तथा 3. भारतीय चिकित्सा व स्वास्थ्य सेवा। इसके अतिरिक्त, दो अन्य अखिल भारतीय सेवाएं – भारतीय शैक्षणिक सेवा तथा भारतीय कृषि सेवा – की स्थापना विचाराधीन है। सर्वोच्च न्यायालय ने केन्द्रीय सरकार को 'भारतीय न्यायिक सेवा' की स्थापना के लिए कार्यवाही करने का निर्दे"ा दिया है।

अखिल भारतीय सेवाओं की प्रमुख वि"ोषता यह है कि इनके सदस्यों की भर्ती, प्र"िाक्षण, वेतन तथा सेवा की शर्तों का निर्धारण तथा अनु"ाासनात्मक कार्यवाही के लिए केन्द्रीय सरकार उत्तरदायी है। पर ये सेवाएं अपने

कार्यकाल के अधिकां"ा समय में राज्य सरकार की सेवा में रहती हैं। वस्तुतः इनकी नियुक्ति विभिन्न राज्यों के काडरों (cadres) पर होती है। इन सेवाओं का भारत सरकार का निज का कोई काडर नहीं है। इन अधिकारियों की सेवाएं भारत सरकार राज्य सरकारों से उधार पर लेती है।

चतुर्थ वेतन आयोग की अनु"ांसा के बाद अखिल भारतीय सेवाओं की आठ वेतन श्रेणियां हैं :

(१) कनिष्ठ वेतनमान

(२) समय वेतनमान

(३) कनिष्ठ प्र"ाासनिक ग्रेड

(४) चयनित वेतनमान

(५) उच्चतम वेतनमान (संयुक्त सचिव)

(६) उच्चतम वेतनमान (अतिरिक्त सचिव) फिक्स्ड

(७) उच्चतम वेतनमान (सचिव) फिक्स्ड

(८) उच्चतम वेतनमान (मन्त्रिमण्डल सचिव) फिक्स्ड

(९) आरम्भ में सभी अधिकारी कनिष्ठ वेतनमान में ही नियुक्त किये जाते हैं। कालक्रम से उन्हें वरिष्ठ वेतनमान तथा उच्चतम वेतनमान दिया जाता है।

➢ **केन्द्रीय सेवाएं** (The Central Union Services)

केन्द्र सरकार की सिविल सेवाओं में केन्द्रीय सिविल सेवा के नाम से ज्ञात स्थापित सेवाएं तथा ऐसी स्थापित सेवाओं से बाहर सृजित सिविल पद शामिल हैं, जिनसे सामान्य केन्द्रीय सेवाएं बनती हैं। स्थापित केन्द्रीय सिविल सेवाएं और सिविल पदों, दोनों को ऊपर से नीचे क्रम में समूह 'क', समूह 'ख', समूह 'ग' तथा समूह 'घ' के रूप में वर्गीकृत किया गया है। केन्द्रीय सेवाओं के सदस्य भारत सरकार के विभिन्न विभागों में कार्यरत हैं।

- **केन्द्रीय सेवा समूह 'क'** –समूह 'क' केन्द्रीय सिविल सेवाओं की संख्या पिछले वर्षों में बढ़ती गई है। यह 1971 में 30, 1984 में 49 तथा आज 59 + 3 है।

केन्द्रीय सिविल सेवाओं को मोटे तौर पर 1. गैर तकनीकी सेवाओं, तथा 2. तकनीकी सेवाओं (जिसमें इंजीनियरों तथा वैज्ञानिक सेवाएं शामिल हैं) में वर्गीकृत किया गया है। गैर–तकनीकी सेवाओं का कार्य केन्द्र में गैर तकनीकी कार्यों का प्र"ाासन सम्भालना है – जैसे, लेखा परीक्षा, आयकर, डाक–तार तथा रेलवे। तकनीकी सेवाएं

केन्द्र सरकार के तकनीकी कार्यों के सम्बन्ध में समान कार्य करती है। समूह 'क' श्रेणी में वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों में अनुसन्धान के कार्यों में लगे अधिकारी भी शामिल हैं।

- **केन्द्रीय सेवा समूह 'ख'** –केन्द्रीय सिविल सेवाएं समूह 'ख' केन्द्रीय सिविल सेवाओं की मुख्य श्रेणियों में से 'कमाण्ड' ढांचे की द्वितीय स्तर की सेवाएं हैं। सामान्यतः सीधी भर्ती और पदोन्नति दोनों के द्वारा समूह 'ख' की सेवाओं में भर्ती की जाती है। लेकिन रेलवे में समूह 'ख' के संवर्गों के पद पूर्णतः पदोन्नति के माध्यम से भरे जाते हैं। जहां कहीं भी सीधी भर्ती का सहारा लिया जाता है, वहां भर्ती संघ लोक सेवा आयोग और कर्मचारी चयन आयोग के द्वारा की जाती है।

8.4.2. भर्ती का अर्थ (Meaning of Recruitment)

भर्ती का सीधा–सादा अर्थ है विभिन्न सरकारी नौकरियों के लिए उपयुक्त प्रकार के व्यक्तियों को खोजना। सामान्यतः 'भर्ती' शब्द का प्रयोग 'नियुक्ति' शब्द के समानार्थी रूप में ही प्रयुक्त किया जाता है। कुछ लोक भर्ती के लिए ली जाने वाली परीक्षाओं को भी भर्ती कहते हैं, कुछ f"k्षा या ट्रेनिंग में प्रवे"ा को भर्ती कहते हैं, लेकिन वास्तव में यह भर्ती के संकुचित अर्थ है। लोक प्र"ाासन के व्यापक अर्थों में भर्ती से हमारा तात्पर्य नियुक्ति, परीक्षण साक्षात्कार का सामूहिक नाम है।

प्रो. एल.डी. व्हाइट ने भर्ती की परिभाषा करते हुए लिखा है, ''प्रतियोगिता परीक्षाओं, रिक्त स्थानों एवं पदों के लिए व्यक्तियों को आकर्षित करना ही भर्ती है।''

डिमॉक के अनुसार, ''वि"िाष्ट कार्यों के लिए उचित व्यक्तियों को प्राप्त करना और कर्मचारियों के बड़े समूह के विज्ञापन निकालना या वि"ोष कार्य के लिए किसी उच्च दक्षता प्राप्त व्यक्ति की खोज ही भर्ती है।''

- **नकारात्मक और सकारात्मक भर्ती की विचारधारा (The Concept of Negative and Positive Recruitment)**

भर्ती के सम्बन्ध में लूट प्रणाली के दोषों को दूर करने के लिए लोक सेवा आयोगों का निर्माण किया गया। लोक सेवा आयोग बनाने का उद्दे"य नकारात्मक था। मूलतः इसका मुख्य कार्य शासकीय सेवाओं में से 'धूर्तों को बाहर रखने तक सीमित' (Keeping the rascals out) था। यह धारणा बलवती थी कि यदि एक बार लोक सेवाओं में नौकरी के लिए व्यक्ति आने लगेंगे तो ऐसा क्रम बना रहेगा, किन्तु यह केवल भ्रम मात्र था। इसके परिणामस्वरूप कई बार बहुत ही साधारण योग्यता (Mediocre) रखने वाले व्यक्ति उसमें प्रवे"ा पा गये। भर्ती के इस निषेधात्मक प्रयत्न का परिणाम यह हुआ कि लोक सेवाएं उदासीनता का आश्रय स्थल बन गयी। लोक सेवा आयोग बड़े समूह में से उच्च पदक्रम से प्रत्या"िायों को छांटने के लिए औसत के नियम (Law of Average) को लागू करने पर वि"वास

करते थे। जे. डोनाल्ड किंग्सले ने इस स्थिति के बारे में लिखा है, ''सम्भवतः धूर्तों को सेवा से बाहर रखा जाता है, किन्तु शायद इस प्रकार अनेक योग्य एवं बुद्धिमान व्यक्ति भी बाहर रह जाते हैं।'' अतः आव"यकता इस बात की है कि योग्य व्यक्तियों को लोक सेवाओं की ओर आकर्षित करने का प्रयत्न किया जाये।

➢ भर्ती की समस्याएं (Problems of Recruitment)

प्रो. विलोबी ने कर्मचारियों की भर्ती की समस्या में निम्नलिखित बातें बतायी हैं :

- भर्ती का अधिकार किसे प्राप्त होना चाहिए ?
- सरकारी कर्मचारियों की भर्ती कहां से की जाये – भीतर से भर्ती या बाहर से भर्ती।
- भिन्न–भिन्न पदों की पूर्ति के लिए क्या योग्यताएं हों ?
- उम्मीदवारों की योग्यता का निर्धारण किस प्रकार किया जाना चाहिए – परीक्षाओं से, व्यक्ति द्वारा, साक्षात्कार द्वारा।
- योग्यता का निर्धारण करने के लिए प्र"ाासकीय संगठन क्या हो ?

➢ भारत में भर्ती प्रणाली : संक्षिप्त विवेचन (Recruitment Process in India : Brief Analysis)

सन् 1979 से भारत में उच्चस्तरीय सिविल सेवा में भर्ती की नयी प्रणाली प्रारम्भ की गयी थी। इस प्रणाली के अन्तर्गत सिविल सेवा परीक्षा की दो अवस्थाएं थीं : (i) प्रारम्भिक सिविल सेवा परीक्षा, तथा (ii) सिविल सेवा प्रधान परीक्षा।

प्रारम्भिक सिविल सेवा परीक्षा में वस्तुपरक प्रकार के दो प्र"न होते थे। सामान्य अध्ययन का प्रथम प्र"न–पत्र – 150 अंक तथा ऐच्छिक विषयों में से चुना गया एक प्र"न–पत्र–300 अंक। इस प्रकार कुल मिलाकर 450 अंकों में से केवल वे ही उम्मीदवार जो प्रारम्भिक परीक्षा में अर्हता प्राप्त कर लेते थे, उक्त वर्ष की प्रधान परीक्षा में शामिल होने के पात्र होते थे।

संघ लोक सेवा आयोग ने सिविल सेवा प्रारम्भिक परीक्षा में बदलाव के बाद (वर्ष 2011 की परीक्षा से लागू) परिवर्तित पाठ्यक्रम जारी किया। प्रधान परीक्षा के लिए भी (वर्ष 2013 की परीक्षा से लागू) परिवर्तित पाठ्यक्रम लागू किया गया।

अब प्रारम्भिक परीक्षा में वस्तुपरक (बहुविकल्पीय प्र"न) प्रकार के दो प्र"न–पत्र होते हैं तथा खण्ड–II के उपखण्ड (क) में दिए गए विषयों में अधिकतम 400 अंक रखे गये हैं। यह परीक्षा केवल प्राक्चयन परीक्षण के रूप में है, प्रधान परीक्षा में प्रवे"ा हेतु अर्हता प्राप्त करने वाले उम्मीदवार द्वारा प्रारम्भिक परीक्षा में प्राप्त किए गए अंकों को

उनके अन्तिम योग्यता क्रम को निर्धारित करने के लिए नहीं गिना जाता है। प्रधान परीक्षा में प्रवे"ा दिए जाने वाले उम्मीदवारों की संख्या उक्त वर्ष में विभिन्न सेवाओं तथा पदों में भरी जाने वाली रिक्तियों की कुल संख्या का लगभग बारह से तेरह गुना होती है, केवल वे ही उम्मीदवार जो आयोग द्वारा किसी वर्ष की प्रारम्भिक परीक्षा में अर्हता प्राप्त कर लेते हैं उक्त वर्ष की प्रधान परीक्षा में प्रवे"ा के पात्र होते हैं ब"ार्ते कि वे अन्यथा प्रधान परीक्षा में प्रवे"ा हेतु पात्र हों।

- **भारत में भर्ती पद्धति : आलोचना (Criticism)**

भारत में विद्यमान भर्ती की अनेक आधारों पर आलोचना की जाती है जो इस प्रकार है :

- **कल्पना का अभाव** –हमारी भर्ती प्रणाली के दोषों पर प्रका"ा डालते हुए डॉ0 पॉल एच. एपिलबी ने कहा है कि ''भारत में भर्ती की पद्धति पर्याप्त मात्रा में कल्पनायुक्त (Imaginative) तथा व्यंजनापूर्ण (Suggestive) नहीं है।'' यहां तक कि विभिन्न रिक्त पदों के लिए जो विज्ञापन किये जाते हैं वे ऐसे लगते हैं मानो लोक सम्पर्क अधिकारियों के द्वारा नहीं, बल्कि वकीलों के द्वारा लिये गये हैं।

- **परीक्षा पद्धति में आधुनिकता का अभाव** –हमारी भर्ती प्रणाली में दूसरा गम्भीर दोष यह है कि हम अभी भी वही घिसी–पिटी पुरानी परीक्षा पद्धति को गले से लगाये हैं, जो सदियों पहले शुरू की गयी थी। हमारी परीक्षा पद्धति आधुनिकतम ऐसी प्रणाली अभ्यर्थियों को 'रटन्त विद्या' अपनाने को प्रोत्साहित करती है।

- **साक्षात्कार पद्धति दोषपूर्ण** –वर्तमान साक्षात्कार पद्धति दोषपूर्ण है। वह अत्यन्त वैयक्तिक (Subjective) होती है। एक ही प्रत्या"ाी को साक्षात्कार मण्डल के विभिन्न सदस्यों द्वारा दिये गये अंकों में बहुत अधिक अन्तर रहता है। ऐसी पद्धति वि"वसनीय नहीं मानी जा सकती। उसके द्वारा अभ्यर्थियों के व्यक्तित्व का उचित मूल्यांकन नहीं किया जा सकता।

- **मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का अभाव** –हमारी भर्ती की पद्धति में मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का अभाव है। ए.डी. गोरवाला ने इस सम्बन्ध में सुझाव दिया है कि मनोवैज्ञानिक परीक्षणों को धीरे–धीरे मौखिक परीक्षाओं का स्थान ले लेना चाहिए, क्योंकि उनके द्वारा ही प्रत्या"िायों की वैयक्तिक वि"िाष्टताओं का ठीक–ठीक पता लगाया जा सकता है।

- **राजनीतिक प्रभाव** –भारत में लोक कर्मचारियों की भर्ती राजनीतिक प्रभावों (Political Pressure) से मुक्त नहीं है। अभी भी अनेक राज्यों में कुछ महत्वपूर्ण पद लोक सेवा आयोगों के अधिकार–क्षेत्र के बाहर रखे जाते हैं। केवल इतना ही नहीं, अनेक बार ऐसा भी होता है कि राज्य सरकारें लोक सेवा आयोगों की अनु"ांसाओं

को अस्वीकृत करते हुए योग्यता के क्रम (Order of Merit) के आधार पर बनायी गयी सफल अभ्यर्थियों की सूची में हेर–फेर कर देती है।

- **पदोन्नति केवल एक ही विभाग में सम्भव** –हमारी भर्ती की व्यवस्था का एक अन्य बड़ा दोष यह है कि इसके अन्तर्गत कर्मचारियों की पदोन्नति एक ही विभाग में की जाती है। उदाहरणार्थ, रेल विभाग के कर्मचारियों को रेल विभाग में ही पदोन्नत किया जायेगा, f"ाक्षा विभाग के कर्मचारियों को f"ाक्षा विभाग में ही पदोन्नति दी जायेगी, आदि। इस व्यवस्था में अनेक योग्य कर्मचारी बिना पर्याप्त पदोन्नति के ही सेवा–निवृत हो जाते हैं।

➢ भर्ती की आदर्श प्रणाली (An Ideal Method of Recruitment)

डॉ0 एल.डी. व्हाइट का कहना है कि यदि लोक सेवा की शर्तें निजी रोजगार की अपेक्षा बहुत कम सन्तोषजनक होंगी तो लोक सेवाओं की ओर आकर्षित होने वाले उम्मीदवारों की कु"ालता एवं योग्यता का स्तर नीचा होगा। वस्तुतः सरकारी पदों पर की जाने वाली भर्ती की व्यवस्था में कुछ वांछित गुण होने चाहिए, जो निम्न प्रकार है :

- **निष्पक्षता** –भर्ती की प्रणाली में निष्पक्षता पहली आव"यकता है। नियुक्ति करने वाला अधिकारी बिल्कुल तटस्थ, वस्तुनिष्ठ व निष्पक्ष होना चाहिए।
- **ईमानदारी** –लोक प्र"ाासन में ईमानदारी की समस्या सबसे अधिक महत्वपूर्ण एवं मौलिक समस्या है। यदि भर्ती करने वाला किसी प्रलोभन में, लालच में या किसी लाभ की अपेक्षा से चयन करता है तो सबसे ज्यादा योग्य लोगों की भर्ती नहीं हो सकती।
- **गतिशीलता** –अधिकारियों की भर्ती के लिए जिस प्रणाली को अपनाया जाये वह स्थायी नहीं होनी चाहिए। स्थायित्व प्रगति का विरोधी है। समय के अनुसार लोक प्र"ाासन के उत्तरदायित्व में भारी परिवर्तन आ रहा है। आज के बदलते परिवे"ा में लोक प्र"ाासक का मुख्य काम समतावादी समाज की संरचना के लिए प्रयास करना है, प्र"ाासक को सामाजिक–आर्थिक न्याय की स्थापना के लिए प्रयत्न"ाील होना है। जब प्र"ाासन की भूमिका ही बदल गयी है तो भर्ती की प्रणाली में भी बदलाव अपेक्षित है।
- **नयी खोज से युक्त** –भर्ती की वही प्रणाली आद"र्ा हो सकती है, जो इस सन्दर्भ में नयी–नयी खोजों को भी अपनाये। साक्षात्कार की पद्धति अब पुरानी पड़ गयी है। नयी खोजों के अनुसार प्रत्या"ाी का मनोवैज्ञानिक परीक्षण होना चाहिए।

संयुक्त राज्य अमरीका, आदि विकसित देशों में उम्मीदवारों की योग्यता की जांच करते समय उनको एक ही स्थान पर कुछ समय के लिए रखा जाता है। निरीक्षक द्वारा उनकी प्रत्येक क्रिया एवं प्रतिक्रिया पर नजर रखी जाती है। इस प्रणाली में परीक्षक को अनेक अवसर तथा पर्याप्त समय प्राप्त होता है कि वह उम्मीदवार के विभिन्न आचरण–व्यवहार का गहन अध्ययन करके उसकी योग्यताओं के सम्बन्ध में वस्तुगत, यथार्थ एवं वैज्ञानिक राय कायम कर सके।

संक्षेप में, भर्ती की आदर्श प्रणाली का लक्ष्य तो स्पष्ट है कि ऐसे पदाधिकारियों की नियुक्ति विभिन्न पदों पर हो जो यथासम्भव सबसे अच्छे सिद्ध हों। जो लोक सेवा के लिए उपलब्ध हों, उनमें सबसे श्रेष्ठ लोगों का चयन हो तो भर्ती प्रणाली आदर्श मानी जायेगी। आदर्श भर्ती प्रणाली की एक उल्लेखनीय शर्त की तरफ ध्यान दिया जाना चाहिए – यह शर्त है कि सेवा का जो प्रतिफल एक कर्मचारी को मिलता है वह किसी भी अर्थ में निजी सेवा के कर्मचारी के प्रतिफल से कम नहीं होना चाहिए। यदि लोक सेवा में प्रतिफल कम हो तो योग्य प्रत्याशी लोक सेवा की ओर आकर्षित नहीं होंगे।

8.4.3. प्रशिक्षण : अर्थ (Training : Meaning)

प्रारम्भ में सरकारी कार्य अधिक विशेषीकृत और तकनीकी प्रकृति के नहीं थे, अतः सरकारी अधिकारियों के प्रशिक्षण की आवश्यकता अधिक महसूस नहीं की गयी। लेकिन आज की परिवर्तित परिस्थितियों में प्रशासन का संचालन करने वालों के समुचित प्रशिक्षण की आवश्यकता की उपेक्षा नहीं की जा सकती।

विलियम जी. टॉर्पी के अनुसार, ''प्रशिक्षण कर्मचारियों की कुशलता, आदतें ज्ञान तथा दृष्टिकोण विकसित करने की एक प्रक्रिया है जिससे कर्मचारियों की उनकी वर्तमान सरकारी स्थितियों में प्रभावशीलता बढ़ायी जा सके और साथ ही उन्हें भावी सरकारी स्थितियों के लिए तैयार किया जा सके।''

- **प्रशिक्षण के उद्देश्य (The Objects of Training)**

प्रशिक्षण का मूल उद्देश्य दक्षता (Efficiency) है, अर्थात् प्रशासन के हित में अधिकारी के कार्य को अधिक प्रभावपूर्ण बनाना (To increase the effectiveness of the work of the officials for the purpose of administration)। दक्षता के दो महत्वपूर्ण स्वरूप हैं – प्रथम, कार्य–विशेष विषयक दक्षता है, जो कर्मचारी वर्तमान कार्य में अथवा भावी उच्चतर कार्य में दिखा सकता है। दक्षता का दूसरा स्वरूप कर्ता के स्वभाव को ऊँचा करना है।

''प्रशिक्षण एक ऐसा माध्यम है जिससे व्यवहार में परिवर्तन लाया जा सकता है, हालांकि इससे व्यक्तित्व को नहीं बदला जा सकता .... प्रशिक्षण के बाद भी कर्मचारी का व्यक्तित्व वही रहता है मगर उसके व्यवहार में सकारात्मक बदलाव आ जाता है।''

प्रशिक्षण के द्वारा कर्ता में अपने कर्तव्य को समस्त संस्था के कल्याण का अंग समझने की क्षमता आती है। उससे उसका सम्पूर्ण स्वभाव उदात्त होता है और प्रस्तुत क्रिया–व्यापार के प्रति उसमें उत्साह का उदय होता है। जब उसमें यह भाव उदित होता है कि जो कुछ वह करता है, वह लोक कल्याण के लिए की जाने वाली बड़ी सेवा का अंग है, तो अपना कार्य उसको अधिक मूल्यवान और महत्वपूर्ण लगने लगता है। इसके बाद वह अधिकाधिक परिश्रम करने लगता है।

(१) कर्मचारियों में विश्वसनीय चातुर्य उत्पन्न करना,

(२) कर्मचारियों के दृष्टिकोण को व्यापक बनाना और उन्हें यह समझाना कि वे सेवक हैं, स्वामी नहीं।

(३) कर्मचारियों में सामुदायिक चेतना उत्पन्न करना और उन्हें यन्त्रीकरण से बचाना।

(४) लोक कर्मचारियों को इस योग्य बनाना कि वे बदलते हुए संसार में अपने काम को सुगमतापूर्वक निभा सकें।

(५) लोक कर्मचारियों में उच्चतर कर्तव्यों एवं दायित्वों के लिए क्षमता उत्पन्न करना।

➢ **प्रशिक्षण विधि (Training Methods)**

प्रशिक्षण किस प्रकार दिया जाये – यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है। टॉर्पी के मतानुसार प्रशिक्षण के उचित तरीके चुनने का मापदण्ड स्वस्थ शिक्षा सिद्धान्तों के आधार पर तय किया जाना चाहिए। लोक प्रशासन में प्रशिक्षण की क्रिया सम्पन्न करने के लिए जिन अनेक तरीकों का प्रयोग किया जाता है वे इस निर्णय के साथ–साथ परिवर्तित होते रहते हैं कि प्रशिक्षण व्यक्तिगत रूप में दिया जाना है अथवा सामूहिक रूप में। यदि कर्मचारी को व्यक्तिगत रूप में प्रशिक्षण प्राप्त करना हो तो उसके लिए विचार–विमर्श, कार्य परिवर्तन, औपचारिक पाठ्यक्रम, पत्राचार पाठ्यक्रम, सामुदायिक शिक्षा व्यवस्था, पर्यवेक्षणाधीन अध्ययन विषय, आदि तरीके अपनाये जाने चाहिए। यदि प्रशिक्षण समूह को प्रदान करना हो तो अन्य प्रकार के तरीके अपनाये जा सकते हैं, जैसे–सेमिनार, सम्मेलन, सामूहिक विचार–विमर्श, क्षेत्रीय दौरे, भाषण, निरीक्षणात्मक दौरे, आदि। प्रशिक्षण की प्रक्रिया में संचार साधनों का अधिकाधिक प्रयोग भी उपयोगी रहता है। इस दृष्टि से रेडियो, टेलीविजन, समाचार–पत्र, प्रेस, आदि का पर्याप्त उपयोग किया जा सकता है। किसी भी प्रशिक्षण कार्यक्रम की प्रभावशीलता इस बात पर निर्भर करती है कि उसमें किन तरीकों को अपनाया गया है।

लोक प्रशासकों के प्रशिक्षण हेतु निम्नलिखित प्रशिक्षण विधियों को अपनाया जा सकता है :

(१) सामूहिक प्रशिक्षण (Group Training)– प्र"ाक्षण की इस विधि में कुछ लोगों को एक साथ मिलाकर प्र"ाक्षण दिया जाता है। प्र"ाक्षण के इस रूप में औपचारिक पाठ्यक्रम, कक्षा के विचार–विम"र्, औपचारिक भाषण, सामयिक वार्ता, प्रद"र्न, प्रयोग"ााला कार्य, आदि की गणना की जा सकती है। समय–समय पर होने वाली स्टाफ की मीटिंग और कर्मचारियों की सभाएं भी इस प्रकार के प्र"ाक्षण में सम्मिलित हैं।

(२) कार्य पर निर्देश (On the Job Instruction)– कार्य पर व्यक्तिगत निर्दे"ा प्र"ाक्षण का एक प्रसिद्ध प्रकार है। इस विधि में एक नये कर्मचारी को पर्यवेक्षक द्वारा पूर्ण सहायता दी जाती है। जब समूह बड़ा होता है तब निर्दे"ान के लिए एक अलग व्यक्ति को नियुक्त कर दिया जाता है; किन्तु अधिकतर पर्यवेक्षक सुयोग्य व्यक्ति होता है और वह अपने अधीनस्थों को निर्दे"ा देता है।

(३) लिखित परिपत्र (Manuals and Bulletins)– संगठन के अधिकारियों को विभिन्न निर्दे"ा समय–समय पर लिखित रूप में प्रसारित किये जाते हैं। कभी–कभी कार्यालय–पुस्तिका भी वितरित या घुमायी जाती है। इन पुस्तिकाओं में नियमावली अथवा वि"ोष निर्दे"ा, आदि होते हैं।

(४) परिसम्वाद कक्षाएं –इसके अन्तर्गत प्र"ाक्षण एवं प्र"ाक्षणार्थी विभिन्न विषयों पर विचार–विम"र् तथा विचारों का आदान–प्रदान करते हैं।

(५) अधिसभा (Syndicate)– इसके अन्तर्गत सम्पूर्ण प्र"ाक्षाणार्थियों को कई छोटे–छोटे दलों में विभाजित कर दिया जाता है और प्रत्येक दल अथवा टुकड़ी का एक अध्यक्ष नियुक्त कर दिया जाता है। प्रत्येक दल को एक गम्भीर समस्या पर विचार–विम"र् करने और उसका हल तला"ा करने की जिम्मेदारी सौंप दी जाती है। प्रत्येक दल उस समस्या पर पूर्ण रूप से विचार–विम"र् करके उसके समाधान के बारे में अपना हल प्र"ाक्षणार्थियों के सामने रख देता है। उसके प"चात् सारे प्र"ाक्षणार्थी उस पर विचार–विम"र् करते हैं और इस तरह विचारों का आदान–प्रदान होता रहता है।

(६) भ्रमण द्वारा प्रशिक्षण –प्र"ाक्षणार्थियों को अनेक कार्य–स्थलों पर घटना स्थलों का भ्रमण कराके उसी स्थान पर गम्भीर समस्या के अध्ययन के लिए कहा जाता है।

(७) अनुभव द्वारा प्रशिक्षण –इसके अन्तर्गत कर्मचारियों को सीधे उनके कार्य पर भेज दिया जाता है और अनुदे"ा दे दिया जाता है कि वे अपने सहयोगी से पूछ–पूछ कर काम को सीख लें।

(८) **श्रव्य–दृश्य साधनों का उपयोग** –रेडियो, टेलीविजन, रिकार्ड एवं चलचित्रों, आदि के द्वारा कर्मचारियों में भावनात्मक उत्साह जाग्रत किया जाता है।

➢ **प्रशिक्षण के प्रकार (Kinds of Training)**

मोटे रूप से प्रशिक्षण के दो प्रकार है : (i) अनौपचारिक प्रशिक्षण, तथा (ii) औपचारिक प्रशिक्षण। औपचारिक प्रशिक्षण को निम्न चार भागों में विभाजित किया जा सकता है :

(१) प्रवेश–पूर्व से प्रशिक्षण (Pre-entry Training)

(२) अभिनवकरण प्रशिक्षण (Orientation Training)

(३) सेवाकालीन प्रशिक्षण (In Service Training)

(४) प्रवेश के उपरान्त प्रशिक्षण (Post-entry Training)

लोक प्रशासन में सरकारी अधिकारियों को दिये जाने वाले प्रशिक्षण को हम सुविधा की दृष्टि से निम्नलिखित पांच प्रकारों में बांट सकते हैं :

(१) औपचारिक तथा अनौपचारिक प्रशिक्षण,

(२) अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन प्रशिक्षण,

(३) प्रवेश–पूर्व, सेवाकालीन तथा प्रवेशोत्तर

(४) विभागीय तथा केन्द्रीय प्रशिक्षण,

(५) कौशल तथा आधारभूत प्रशिक्षण।

➢ **औपचारिक तथा अनौपचारिक प्रशिक्षण (The Formal and Informal Training)**

अनौपचारिक रूप से प्राप्त होने वाला प्रशिक्षण अनुभव पर ही आधारित होता है। इसमें व्यक्ति जब कार्य करता है तो वह क्रमशः अपने आप सीखता चलता है। प्रशिक्षण की यह प्रक्रिया परम्परागत है और आज भी इसका प्रयोग किया जाता है। व्यावहारिक कार्य और अनुभव से इस प्रकार शिक्षा प्राप्त करना बड़ा उपयोगी होता है। परन्तु टिंकर के अभिमत में सीखने का यह कठोर मार्ग है और पूर्णतया सफल होने के लिए यह आवश्यक है कि सीखने वाला सीखने पर तुला रहे। अनौपचारिक प्रशिक्षण का एक दूसरा रूप वैयक्तिक सम्पर्क के रूप में होता है। इसमें

नवनियुक्त अधिकारी को प्रोत्साहित किया जाता है कि वह अपने वरिष्ठ अधिकारियों से व्यक्तिगत सम्पर्क रखे, उनके निवास स्थान पर जाये, वास्तविक आचरण देखे और उससे कुछ अनुभव एवं प्रि"ाक्षण प्राप्त करें।

➢ **अल्पकालीन और दीर्घकालीन प्रशिक्षण (Short-term and Long-term Training)**

अल्पकालीन प्रि"ाक्षण में अल्पवधि में प्रि"ाक्षण देने का प्रयास किया जाता है। यदि समय, परिस्थिति और कार्यों की प्रकृति की यह मांग है कि थोड़ा समय देकर लोक सेवकों को नयी परिस्थितियों के अनुरूप बनाया जाय, तब ऐसी परिस्थिति में दिया गया प्रि"ाक्षण अल्पकालीन प्रि"ाक्षण होता है। इस प्रि"ाक्षण में केवल अनिवार्य विषयों की ही जानकारी दी जाती है। उदाहरण के लिए, युद्ध के समय नये सैनिकों को अल्पकालीन प्रि"ाक्षण के बाद मोर्चे पर भेज दिया जाता है। दीर्घकालीन प्रि"ाक्षण का उद्दे"य और स्वरूप इससे पहले प्रि"ाक्षण से सर्वथा भिन्न है। यह प्रि"ाक्षण इसलिए दिया जाता है जिससे हर विषय की जानकारी बढ़ जाये। शान्तिकाल में सैनिकों को दीर्घकालीन प्रि"ाक्षण दिया जाता है।

➢ **प्रवेश–पूर्व, सेवाकालीन तथा प्रवेशोत्तर प्रशिक्षण (Pre-entry, In Service and Post-entry Training)**

प्रवेश–पूर्व प्रशिक्षण –प्रवे"ा–पूर्व प्रि"ाक्षण का उद्दे"य शासकीय सेवा में प्रवे"ा हेतु किसी मेधावी प्रत्या"ाी को तैयार करना है। लोक सेवा में आने से पूर्व ही उसके सम्बन्ध में उम्मीदवार द्वारा वि"वविद्यालय, प्रि"ाक्षण संस्था, पुस्तकालय, आदि स्थानों पर जो ि"ाक्षण ग्रहण किया जाता है वह सब इस श्रेणी में आता है। आजकल वि"वविद्यालयों में पाठ्यक्रमों में तकनीकी एवं व्यावसायिक प्रि"ाक्षण को पर्याप्त महत्व प्रदान किया जाता है।

इस प्रकार प्रवे"ा–पूर्व प्रि"ाक्षण (Pre-entry Training) जैसा कि इसके नाम से विदित है, सेवा में आने से पूर्व ही प्रदान किया जाता है, और स्कूल, वि"वविद्यालय एवं ि"ाक्षण संस्थाएं इस प्रकार के प्रि"ाक्षण में महत्वपूर्ण योगदान करती है।

आई.टी.आई., इंजीनियरिंग कॉलेज तथा मेडिकल कॉलेज में इसी प्रकार का प्रि"ाक्षण दिया जाता है। पुलिस के सिपाही को नौकरी से पूर्व इसी प्रकार का प्रि"ाक्षण दिया जाता है। इस प्रकार की ट्रेनिंग के बाद व्यक्ति को नियमित सेवा में लिया जाता है।

सेवाकालीन प्रशिक्षण –सेवाकालीन प्रि"ाक्षण (In Service Training) ऐसे कर्मचारियों को दिया जाता है जो पहले से सेवा में लगे हुए हैं। इस प्रि"ाक्षण का उद्दे"य कर्मचारियों को इस योग्य बनाना है कि वे अपना कार्य अधिक कु"ालता के साथ सम्पन्न कर सकें। सेवाकालीन प्रि"ाक्षण दोनों ही रूपों में हो सकता है अर्थात् इसे सामूहिक रूप से किसी भी प्रकार दिया जा सकता है अथवा व्यक्तिगत रूप से एक पर्यवेक्षक आमने–सामने खड़ा होकर अपने अधीनस्थ को कार्य के सम्बन्ध में निर्दे"ा दे सकता है।

➢ विभागीय तथा केन्द्रीय प्रशिक्षण (The Departmental and Central Training)

जब स्वतः कार्यालय या विभाग में ही प्रि”ाक्षण का प्रबन्ध होता है, तब उसको विभागीय प्रि”ाक्षण कहते हैं। प्रत्येक विभाग अपनी वि”ोष आव”यकताओं के अनुसार प्रि”ाक्षण का आयोजन करता है। प्रि”ाक्षक प्रायः विभाग के अनुभवी अधिकारी होते हैं। परन्तु अधिक सामान्य तथा उच्च पदों के लिए प्रि”ाक्षण की केन्द्रीय योजना होती है। इसके लिए केन्द्रीय संस्थाएं हैं, जैसे – ब्रिटि”ा कोष का प्रि”ाक्षण तथा लालबहादुर राष्ट्रीय प्र”ाासन संस्थान, मसूरी।

➢ कौशल तथा आधारभूत प्रशिक्षण (Skill and Background Training)

कौ”ाल प्रि”ाक्षण का उद्दे”य कर्मचारियों में उस वि”ोष योग्यता को उत्पन्न करना है, अथवा ऐसा कानूनी या विधि सम्बन्धी ज्ञान देना है, जो वि”ोष विभागों में सहायक हो सकता है। उदाहरण के लिए, पुलिस अधिकारियों की प्रि”ाक्षण संस्था – अपराध सम्बन्धी खोज और निवारण की विधियों का प्रि”ाक्षण देती है। आय–कर अधिकारियों के प्रि”ाक्षण केन्द्र में कर लगाने तथा वसूल करने की विधियों का व्यावहारिक ज्ञान कराया जाता है। इसके विपरीत, आधारभूत प्रि”ाक्षण (Foundation Training) है, जिसमें ऐसे विषय सिखाये जाते हैं, जिनमें राजनीतिक, प्र”ाासनिक, आर्थिक तथा सामाजिक पृष्ठभूमि की जानकारी हो और ि”ाक्षणार्थी यह भी समझ सकें कि किन कार्यों के क्या–क्या फल हो सकते हैं। इसका उद्दे”य प्रि”ाक्षणार्थी में किसी कौ”ाल की सृष्टि नहीं है बल्कि उसके मन को विस्तृत किया जाता है, जिससे वह किसी भी विषय को सरलता से ग्रहण कर सेकं। भारतीय प्र”ाासनिक सेवा (I.A.S.) में प्रविष्ट व्यक्तियों को, जो प्रारम्भिक प्रि”ाक्षण दिया जाता है, वह आधारभूत प्रि”ाक्षण का एक उदाहरण है। इस प्रि”ाक्षण के विषयों में लोक प्र”ाासन, दे”ा की संवैधानिक व्यवस्था, कानून, आर्थिक समस्याएं तथा लोक सम्पर्क होते हैं।

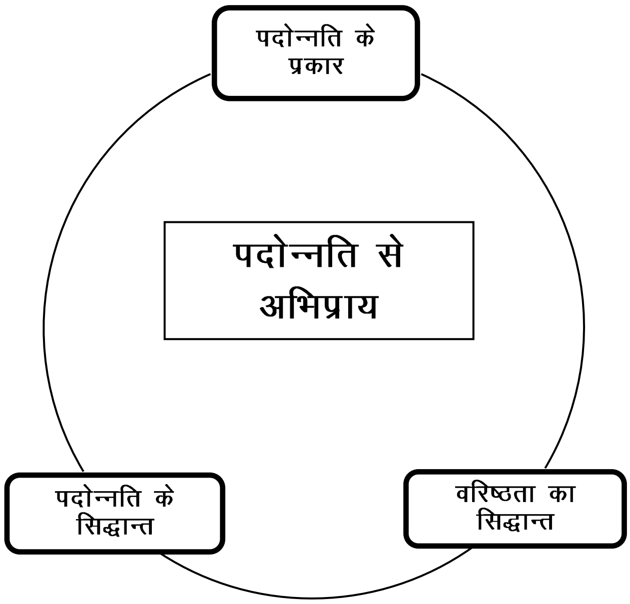

8.4.4.पदोन्नति से अभिप्राय (Meaning of the Promotion)

यह बात भलीभांति समझ लेनी चाहिए कि पदोन्नति से तात्पर्य कर्मचारी के वेतन की वार्षिक वृद्धि से नहीं है। प्रत्येक सरकारी नौकरी में नि"चत वेतन क्रम (Pay Scale) रहता है। उसमें कर्मचारी के वेतन में वार्षिक वृद्धि होती रहती है। इस वेतन वृद्धि को ही पद वृद्धि अथवा पदोन्नति नहीं माना जाता। पदोन्नति से आ"ाय है कर्मचारी की पद सम्बन्धी प्रस्थिति (Status) में वृद्धि करना तथा उसे अधिक बड़े एवं कठिनतर दायित्व सौंपना।

➢ **पदोन्नति के प्रकार (Kinds of Promotion)**

पदोन्नतियां दो प्रकार की हो सकती है :

- एक वर्ग से दूसरे वर्ग में पदोन्नति – उदाहरण के लिए, राजस्थान प्र"ाासनिक सेवा से भारतीय प्र"ाासनिक सेवा में पदोन्नति अथवा राजस्थान पुलिस सेवा से भारतीय पुलिस सेवा में पदोन्नति इस श्रेणी में आती है।
- किसी सेवा के कनिष्ठ वेतनमान से वरिष्ठ वेतनमान में पदोन्नति – उदाहरण के लिए, भारतीय प्र"ाासनिक सेवा अथवा भारतीय पुलिस सेवा के कनिष्ठ वेतनमान से वरिष्ठ वेतनमान में पदोन्नति अथवा भारतीय प्र"ाासनिक सेवा या भारतीय पुलिस सेवा के वरिष्ठ वेतनमान से सुपर टाइम स्केल (Super Time Scale) में पदोन्नतियां इसी श्रेणी में आती हैं।

➢ **पदोन्नति के सिद्धान्त (Principles of Promotion)**

पदोन्नति किस आधार पर हो, यह एक अत्यन्त गम्भीर समस्या है। कौन इसका पात्र समझा जाये और कौन नहीं समझा जाये ? साधारण तौर से पदोन्नति के दो सिद्धान्त प्रचलित हैं :

(१) वरिष्ठता का सिद्धान्त,

(२) योग्यता का सिद्धान्त

➢ **वरिष्ठता का सिद्धान्त** (Principle of Seniority)

इस सिद्धान्त के अनुसार पदोन्नति केवल वरिष्ठता के आधार पर होनी चाहिए। इस सिद्धान्त के अनुसार जिस कर्मचारी की सेवा (सर्विस) सबसे अधिक अवधि की है, उसे पदोन्नति मिलनी चाहिए। अर्थात् जो कर्मचारी सेवा में पहले प्रविष्ट हो उसकी पदोन्नति पहले और बाद में भर्ती होने वाले की पदोन्नति बाद में की जानी चाहिए। उदाहरण के लिए, यदि किसी विभाग में सेक"ान ऑफिसर का पद रिक्त होता है, तो वहां पर नियुक्ति केवल उसी

व्यक्ति की होनी चाहिए जो क्लर्कों में सबसे वरिष्ठ है अर्थात् जिसकी सेवा सबसे लम्बी हो। अधिकां"ा कर्मचारी पदोन्नति के आधार के रूप में वरिष्ठता के सिद्धान्त का ही समर्थन करते हैं।

8.4.5. पदोन्नति व्यवस्था का महत्व (Importance of a Promotion System)

पदोन्नति व्यवस्था के दो पक्ष हैं – एक, लोक सेवक की दृष्टि से दूसरा, कार्मिक प्र"ाासन की दृष्टि से। पदोन्नति के द्वारा लोक सेवक के कार्य एवं दायित्व बढ़ जाते हैं तथा दूसरी ओर कार्मिक प्र"ाासन को उपयुक्त स्थान के लिए उपयुक्त कार्यकर्ता प्राप्त हो जाता है। प्रो. विलोबी ने पदोन्नति को समस्त सेविवर्ग प्र"ाासन में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य माना है। सेविवर्ग व्यवस्था में पदोन्नति के महत्व तथा उपयोगिता की दृष्टि से मुख्यतः निम्नलिखित बातें उल्लेखनीय हैं।

- यह अच्छे कार्य का पुरस्कार है। इसकी आकांक्षा में लोक सेवक अपने कार्य समुचित रूप से सम्पन्न करते हैं तथा जिन्हें पदोन्नति प्राप्त हो जाती है वे अपने कठिन परिश्रम, ईमानदारी, सजगता, कार्यकु"ालता, आदि के प्रति सन्तोष का अनुभव करते हैं। प्रोक्टर के अनुसार, ''कर्मचारियों के लिए पदोन्नति पुरस्कार है ही किन्तु पदोन्नति का अवसर भी सम्भावित पुरस्कार है।
- पदोन्नति प्रत्येक कर्मचारी के लिए व्यापक प्रेरणा का स्त्रोत है। यह कर्मचारी के लिए ऐसा बाह्य आकर्षण है जो उसमें आन्तरिक भावनाएं प्रेरित करता है।
- इसमें प्र"ाासनिक कार्यकु"ालता बढ़ती है। कारण यह है कि पदोन्नति के कारण एक ओर तो कर्मचारियों को अपने कार्य के प्रति सन्तोष रहता है तथा दूसरी ओर उच्च पदों पर अनुभवी, क्षमतावान, कार्यकु"ाल वरिष्ठ एवं संगठन से पूर्णतः परिचित कर्मचारी नियुक्त हो पाते हैं।
- पदोन्नति व्यवस्था संगठन को अनेक रूपों में लाभान्वित करती है। इसके फलस्वरूप उपयुक्त कार्यकर्ता विभिन्न पदों पर नियुक्त हो जाते हैं, इसके कारण कर्मचारी अधिक समय तक अपने पद पर कार्य कर पाते हैं, इससे सरकारी कर्मचारी को प्र"िाक्षण तथा आत्म सुधार का कार्य प्रभावित होता है, इससे संगठन में वांछनीय अनु"ाासन रह पाता है, यह संगठन के लिए अपेक्षित सद्इच्छा एवं उत्साह को प्रभावित करता है तथा कुछ मिलाकर इसके कारण संगठन की कार्यकु"ालता प्रभावित होती है।

वरिष्ठता सिद्धान्त के पक्ष में तर्क

वरिष्ठता सिद्धान्त के पक्ष में निम्न कारण प्रस्तुत किये जाते हैं :

(१) **व्यक्ति–निरपेक्षता** –यह सिद्धान्त व्यक्ति–निरपेक्ष (objective) है। वरिष्ठता एक वास्तविकता होती है जिससे इन्कार नहीं किया जा सकता। मैयर्स के अनुसार, ''इस पद्धति में पदोन्नति के आन्तरिक झगड़े समाप्त हो जाते हैं और जिन व्यक्तियों के हाथ में पदोन्नति की शक्ति होती है, उन पर राजनीतिक या बाहरी दबाव नहीं पड़ता है।''

(२) **अनुभव के आधार पर** योग्यता – वरिष्ठ व्यक्ति अधिक अनुभवी होता है। अधिक अनुभव की पदोन्नति के लिए एक बड़ी योग्यता (qualification) है। हरमन फाइनर के अनुसार, ''यह सिद्धान्त स्वाभाविक है और व्यक्तियों के पारस्परिक अनाव"यक गतिरोध को समाप्त करता है। नवागन्तुक नौजवान को अनुभवी व्यक्तियों के ऊपर नहीं बैठाता।''

(३) **न्यायोचित एवं निष्पक्ष आधार** –इस सिद्धान्त के अनुसार क्रमिक रूप में प्रत्येक व्यक्ति को पदोन्नति का अवसर प्राप्त होता है। अतः यह पदोन्नति का एक उचित एवं न्यायपूर्ण आधार है।

(४) **राजनीतिक हस्तक्षेप से मुक्ति** –यदि वरिष्ठता को पदोन्नति मान लिया जाये, तो राजनीतिक हस्तक्षेप से मुक्ति मिल जाती है क्योंकि राजनीतिक नेता वरिष्ठता में असमर्थ रहते हैं।

(५) **कर्मचारियों का मनोबल ऊँचा** –इस सिद्धान्त के अनुसार चूंकि पदोन्नतियां एक न्यायोचित सिद्धान्त के आधार पर की जाती है अतः कर्मचारियों का मनोबल (Morale) ऊँचा होता है।

(६) **पदोन्नति की निश्चितता से सरकार सेवा जीवन वृत्ति के रूप में** –इस व्यवस्था के अन्तर्गत पदोन्नति सुनि"चत रहती है, इसलिए अत्यन्त योग्य व्यक्ति भी सरकारी सेवा की ओर आकर्षित होते हैं। इस प्रकार यह पद्धति सरकारी सेवा के एक स्थायी जीवन वृत्ति के रूप में अपनाये जाने में सहायक होती है।

(७) **स्वयंचालित** –यह पद्धति स्वयंचालित रहती है अर्थात् वरिष्ठता के आधार पर अपनी बारी आने पर कर्मचारियों को पदोन्नति अपने आप मिल जाती है। इसके लिए उन्हें कोई प्रयास नहीं करना पड़ता, न उन्हें किसी प्रकार की दौड़–धूप करनी पड़ती है और न किसी की मुट्ठी गरम करनी होती है।

(८) **पुराने कर्मचारियों की प्रतिष्ठा की रक्षा** –इस व्यवस्था में अधिक आयु वाले व्यक्ति उच्च पदों पर और कम आयु वाले इनके अधीन निम्न पदों पर काम करते हैं। पुराने कर्मचारियों का गौरव

और प्रतिष्ठा बनी रहती है और उन्हें कल के छोकरी के नीचे काम करने का अपमान नहीं सहना पड़ता है।

अमरीकी विद्वान मैयर्स ने इस पद्धति के लाभों की चर्चा करते हुए लिखा है कि ''इस पद्धति में पदोन्नति के लिए किये जाने वाले आन्तरिक झगड़े समाप्त हो जाते हैं। पदोन्नति करने वालों पर किसी प्रकार का राजनीतिक या अन्य बाहरी दबाव नहीं पड़ता है। कर्मचारियों में यह भावना पैदा हो जाती है कि पदोन्नतियां निष्पक्ष न्याय के अनुसार की जा रही है। इससे कर्मचारियों में सद्भावना बढ़ती है, उनका मनोबल ऊँचा होता है। इसके अतिरिक्त यह भी माना जाता है कि इस पद्धति में पदोन्नति अधिक निि"चत होने के कारण योग्य व्यक्ति ऐसी सेवाओं की ओर आकृष्ट होते हैं और यह पद्धति अनेक योग्य कर्मचारियों को अपनी सेवा में बनाये रखती है जो ऐसी व्यवस्था न होने पर नौकरी छोड़कर चले जाते हैं।''

➢ **वरिष्ठता सिद्धान्त के विपक्ष में तर्क –**

वरिष्ठता सिद्धान्त के विपक्ष में निम्न तर्क प्रस्तुत किये जाते हैं :

- वरिष्ठता की व्याख्या अयोग्य व्यक्तियों को उच्च पद प्रदान करने में सहायक होती है। इसके अनुसार पदोन्नति वरिष्ठ व्यक्ति की ही होनी चाहिए, क्योंकि योग्यता की एकमात्र कसौटी सेवाकाल का अधिक होना है। किन्तु यह आव"यक नहीं कि वरिष्ठ व्यक्ति योग्य हों। नौ–सेनापति फि"ार ने एक बार यह भविष्यवाणी की थी कि ''ब्रिटि"ा साम्राज्य नष्ट हो जायेगा, क्योंकि इसमें वरिष्ठता के सिद्धान्त का पालन किया जाता है।'' ऐसा कहने में उनका यह आ"ाय था कि वरिष्ठता के सिद्धान्त के अनुसार ऊँचे पदों पर पुराने, रूढ़िवादी, अप्रगति"ाील, दकियानूसी, प्रतिगामी विचारों वाले और समय के साथ न चलने वाले ऐसे व्यक्ति आरूढ़ हो जाते हैं, जो दे"ा को समय की आव"यकता के अनुसार उचित मार्गद"ान और नेतृत्व नहीं दे सकते हैं।

- यह सिद्धान्त संगठन के लिए बड़ा हानिकारक है, क्योंकि कर्मचारियों में अपनी योग्यता बढ़ाने के लिए स्पर्द्धा तथा प्रोत्साहन की भावना का लोप हो जाता है। जब वरिष्ठता को पदोन्नति का एकमात्र आधार माना जाता है तो कर्मचारियों में अपने को योग्य बनाने का कोई उत्साह नहीं रह जाता है। जब वरिष्ठता को पदोन्नति का एकमात्र आधार माना जाता है तो कर्मचारियों में अपने को योग्य बनाने का कोई उत्साह नहीं रह जाता है, भले ही वे कितने ही योग्य क्यों न हों, वरिष्ठ न होने पर उनकी पदोन्नति नहीं हो सकती है। अतः अपने को योग्य बनाना निरर्थक समझा जाता है।

- वरिष्ठता का सिद्धान्त होनहार तरुण कम्रचारियों के लिए अन्यायपूर्ण है, क्योंकि वे कितने ही योग्य क्यों न हों, उनकी पदोन्नति की सम्भावना बहुत कम होती है, किन्तु उनकी तुलना में उनमें अयोग्य, अतीव साधारण

योग्यता रखने वाले पुराने कर्मचारियों को वरिष्ठता के आधार पर पदोन्नति दे दी जाती है। इससे नवयुवकों में भीषण असन्तोष उत्पन्न होता है।

- यदि कोई व्यक्ति सौभाग्यव"ा अन्य व्यक्ति के मुकाबले संसार में पहले आ गया तो इसका अर्थ यह तो नहीं है कि वह अपने साथ योग्यता तथा बुद्धिमत्ता भी लाया है, केवल वरिष्ठता ही पदोन्नति का एक खतरनाक सिद्धान्त हैं।

एक आलोचक के इस प्र"न में बड़ा सत्य प्रतीत होता है कि बीस वर्ष का अनुभव क्या है ? यह वस्तुतः एक वर्ष का ''बीस बार दोहराया जाने वाला अनुभव मात्र है।''

➢ योग्यता का सिद्धान्त (Principle of Merit)

इसका अभिप्राय है पदोन्नति की आकांक्षा रखने वाले सभी उम्मीदवारों की योग्यता का मूल्यांकन करते हुए इसके आधार पर उनकी पदवृद्धि करना। इसका उद्‌दे"य कार्यकु"ाल और परिश्रमी व्यक्तियों को पदोन्नति से पुरस्कृत करना और इस प्रकार अन्य कर्मचारियों को कार्यकु"ालता के लिए प्रेरित और प्रोत्साहित करना। यह सिद्धान्त अपने आप में पूर्ण रूप से निर्दोष है, किन्तु इसमें सबसे बड़ी कठिनाई विभिन्न उम्मीदवारों की तुलनात्मक योग्यता का मूल्यांकन करने और इसका पता लगाने की है। योग्यता को आंकना कोई आसान काम नहीं है। योग्यता की जांच व्यक्ति निरपेक्ष (objective) साधनों द्वारा की जानी चाहिए।

➢ भारत में पदोन्नति प्रणाली (The System of Promotion in India)

पदोन्नति के लिए भारत में वरिष्ठता सिद्धान्त व योग्यता सिद्धान्त दोनों को काम में लिया जाता है और कहीं पर वरिष्ठता सिद्धान्त को प्राथमिकता दी जाती है और कहीं पर योग्यता सिद्धान्त को। साधारणतया वरिष्ठता को ही ध्यान में रखा जाता है। यदि वरिष्ठ कर्मचारी अयोग्य हो तब ही वरिष्ठता की अवहेलना की जाती है। उच्च पदों पर एक अनुपात में योग्यता के आधार पर भी भर्ती की जाती है, विभाग के कर्मचारियों के अतिरिक्त बाहर के लोगों को भी आवेदन का अवसर प्रदान किया जाता है।

भारत शासन के अन्तर्गत केन्द्रीय सेवा समूह 'क' के लगभग 55 प्रति"ात पद उन व्यक्तियों द्वारा भरे जाते हैं जिनकी इस श्रेणी में सीधी भर्ती की जाती है और शेष स्थान पदोन्नति द्वारा भरे जाते हैं। पदोन्नति द्वारा भरे जाने वाले पदों का ठीक–ठीक अनुपात सेवा के अनुसार भिन्न–भिन्न होता है। भारतीय विदे"ा सेवा में 90 प्रति"ात पद सीधी भर्ती से भरे जाते हैं जबकि केन्द्रीय सचिवालय के उच्चतम पदों के लिए यह अनुपात बहुत ही कम है जहां कि प्रथम श्रेणी के स्तर पर सीधी भर्ती होती ही नहीं। सारे पद पदोन्नति से भरे जाते हैं। समूह 'ख' (राजपत्रित) की सेवाओं एवं पदों में सीधी भर्ती अपेक्षाकृत कम ही होती है। इस श्रेणी के लगभग 65 प्रति"ात पदों की भर्ती समूह 'ग' के स्टाफ के लिए सुरक्षित रहती है। समूह 'घ' से बहुत कम कर्मचारियों की पदोन्नति समूह 'ग'

में होती है। रेलवे तथा डाक–तार विभाग में ऐसी कुछ व्यवस्था अव”य पायी जाती है कि समूह 'घ' के कर्मचारियों को भी समूह 'ग' में आने का अधिकार प्राप्त हो जाता है। डाक और तार विभाग में तो 40 प्रति”ात तक पद पदोन्नति से भरे जाते हैं। रेलवे में यह प्रति”ात केवल 10 प्रति”ात है।

8.5. स्वयं प्रगति जाँच (Check your Progress)

निचे कुछ प्र”न दिए गए है, आपने उनके उत्तर देने है :–

(i) भारत में पहली बार सेवाओं का वर्गीकरण कब किया गया ?

(ii) अखिल भारतीय सेवाओं को बढ़ाने का अधिकार किसके पास है ?

(iii) अखिल भारतीय सेवाओं के लिए परिक्षाएं कौन सा आयोग लेता है ?

(iv) वर्तमान में भारत में कितनी अखिल भारतीय सेवाएं हैं ?

(v) वर्तमान में भारत में पदोन्नति के कौन–कौन से सिद्धान्त है ?

(vi) किसकी सिफारिस पर राज्य लोक–सेवाओं को केन्द्र लोकसेवा में पदोन्नति की जाती है ?

8.6. सारांश (Summary)

इस अध्याय का अध्ययन करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे है कि भारतीय प्र”ाासन में लोक सेवाओं का वि”ोष महत्व है। भारतीय प्र”ाासन क्षेत्र में सभी विकासकारी कार्य लोक प्र”ाासकों द्वारा किये जाते हैं और नीति के निर्माण और क्रियान्वयन में लोक सेवकों की वि”ोष भागीदारी है क्योंकि मन्त्रीगण अपने कार्यों में निपुण नहीं होते। उनको नीति निर्माण में स्थाई कार्यपालिका की आव”यकता होती है। सेविवर्ग प्र”ाासन अपने कार्यों में अनुभव के द्वारा वि”ोषज्ञता प्राप्त करते हैं जिसकी सहायता से प्र”ाासनिक समस्याओं का निदान आसानी से कर सकते हैं इसलिए भारत में सभी विकासकारी कार्य लोक सेवकों के द्वारा ही किये जाते हैं।

इन प्र”ाासनिक कर्मचारियों के लिए भारत में भर्ती का आयोजन किया जाता है। भर्ती सकारात्मक और नकारात्मक होती है। सकारात्मक भर्ती में कर्मचारियों की Recruitement UPSC के द्वारा प्रतियोगिता परिक्षाओं के माध्यम से की जाती है और इन सेवाओं में अखिल भारतीय सेवाएं और केन्द्रिय सेवाओं को शामिल किया जाता है। इन सेवाओं के माध्यम से जिन कर्मचारियों की भर्ती की जाती है वो ही प्र”ाासनिक विकास में अहम योगदान निभाते हैं। अतः भारतीय प्र”ाासनिक विकास में अखिल भारतीय सेवाओं और केन्द्रिय सेवाओं का वि”ोष महत्व है।

कर्मचारियों को प्र”ाासन की नई नई तकनीकों की जानकारी देने के लिए प्र”िाक्षण के अति आव”यकता होती है। प्र”िाक्षण ही वह माध्यम है जिसके द्वारा प्र”ाासनिक कर्मचारियों को अपने कार्यों में निपुण किया जाता है ताकि वह

लोगों की समस्याओं का निदान सही तरीके से कर सके और दे"ा के विकास में अपनी भागीदारी का सुनि"चत कर सके। अतः प्र"ाक्षण का समय–समय पर होना आव"यक है।

पदोन्नति वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से कर्मचारियों को पदोन्नति दी जाती है ताकि वह अपने कार्यों से निरस न हो सके और प्र"ाासनिक विकास में योग्यता का पूर्ण इस्तेमाल कर सके। यदि प्र"ाासनिक कर्मचारियों को पदोन्नति द्वारा प्रोत्साहित न किया जाए तो कर्मचारी अपने कार्यों से निरस हो जाएंगे और विकास अवरूद्ध हो जाएगा इसलिए कर्मचारियों के लिए पदोन्नति आव"यक है।

8.7 सूचक शब्द (Key Words)

पद वर्गीकरण, लोक सेवाएं, भर्ती, प्रशिक्षण, पदोन्नति

- **पद वर्गीकरण**—पद वर्गीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा कर्मचारियों को

अलग–अलग पदो में वर्गीकृत किया जाता है।

- **लोक सेवाएं** –लोक सेवाओं से हमारा अभिप्राय उन सेवाओं के समूह से है जो प्रशासनिक कार्यों को करने के लिए या नागरिकों की समस्या का

निदान करने के लिए चुने जाते हैं।

- **भर्ती** –भर्ती से हमारा अभिप्राय उस प्रशासनिक प्रक्रिया से है जिसमें कर्मचारियों की Recruitment की जाती है जो प्रशासनिक कार्यों को क्रियान्वित करते हैं।
- **प्रशिक्षण** –प्रशिक्षण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा सरकारी कर्मचारियों को उनके कार्यों के बारे में सुझावित किया जाता है।
- **पदोन्नति** –पदोन्नति वह प्रशासनिक प्रक्रिया है जिसमें कर्मचारियों को निम्न पद से उच्च पद की जिम्मेवारी दी जाती है और साथ में उनका वेतन में भी बढोतरी होती है।

8.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self- Assessment Questions)

Q.1. सेविवर्ग प्र"ाासन का अर्थ, परिभाषा तथा उसकी वि"ोषता पर प्रका"ा डालिए।

Q.2. सेविवर्ग प्र"ाासन का हमारे दे"ा में क्या महत्व है ?

Q.3. नौकर"ााही का अर्थ और उसकी वि"ोषताओं को समझाइए।

Q.4. नौकर”ाही के कितने भाग हैं ?

8.9.उत्तर–स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

(i) 1430 में (ii) अनुच्छेद 312 के तहत राज्य सभा को

(iii) संघ लोक–सेवा आयोग (iv) 3 (IAS, IPS, IFS)

(v) 1. वरिष्ठता का सिद्धान्त 2. योग्यता का सिद्धान्ता

(vi) संघ लोक–सेवा आयोग की सिफारिस पर

8.10. सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

(१) Public Administration, Mcgraw Hill : Laxmi Kant. M

(२) New Horizons of Public Administration; Mohit Bhattacharya; Jawahar Publisher & Distribution.

(३) Indian Administration; S.R. Maheshwari, Orient Black Swan.

(४) Public Administration Theory and Practice; Hoshiar Singh and Pardeep Sachdeva; Pearson.

(५) प्रशासनिक चिंतक; प्रसाद एण्ड प्रसाद सत्यनारायण; जवाहर पब्लिकेशन एण्ड डिस्ट्रीब्यूशन।

Subject : लोक प्रशासन	
Course Code : **BA204**	Author : **Dr. Deepak**
Lesson No. : **9**	Vetter : **Dr.Parveen sharma**
संघ लोक सेवा आयोग	

अध्याय की सरंचना

9.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

9.2. परिचय (Introduction)

9.3. अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

9.3.1. लोक सेवा आयोग के कार्य (Functions of the U.P.S.C.)

9.3.1.1. संगठन एवं कार्यप्रणाली (Organisation and Working)

9.3.1.2. सचिवालय (Secretariat)

9.3.1.3. अधिकार क्षेत्र (Jurisdiction)

9.4 पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

9.4.1. जिला प्रशासन (District Administration)

9.4.1.1 जिला प्रशासन के लक्षण या विशेषताएँ (Characteristics of District Administration)

9.4.1.2. जिला प्रशासन की भूमिका (Role of District Administration)

9.4.2. जिला कलक्टर (District Collector)

9.5. स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

9.6. सारांश (Summary)

9.7. सूचक शब्द (Key Words)

9.8. स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions) :

9.9. उत्तर–स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

9.10.सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

9.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय में हम निम्न विषयों का अध्ययन करें :–

- संघीय–लोक–सेवा आयोग के गठन का अध्ययन।
- संघीय लोक–सेवा आयोग की कार्य–प्रणाली का अध्ययन।
- जिला–प्र”ाासन के कार्यों का संक्षिप्त वर्णन।
- जिलाधी”ा के कार्यों का अध्ययन।
- जिला प्र”ाासन के संगठन का अध्ययन।

9.2. परिचय (Introduction)

भारत में उच्च लोक सेवाओं में भर्ती तथा अन्य कार्मिक प्र”ाासन कार्यों की निष्पादित हेतु लोक सेवा आयोग की स्थापना 'ली आयोग' की अनु”ांसा पर 1 अक्टूबर, 1926 को की गई। इससे पूर्व मैकाले रिपोर्ट की अनु”ांसा पर लोक सेवकों की योग्यता आधारित भर्ती का कार्य लन्दन स्थित लोक सेवा आयोग (1854–55) करता था। प्रारम्भ में आयोग में एक अध्यक्ष तथा चार सदस्य होते थे। स्वतन्त्रता से पूर्व इसे 'संघीय लोक सेवा आयोग' (F.P.S.C.) कहा जाता था तथा 26 जनवरी, 1950 से इसे 'संघ लोक सेवा आयोग' (U.P.S.C.) कहते हैं। आयोग का कार्यालय नई दिल्ली में शाहजहाँ रोड़ पर स्थित है।

भारत का संघ लोक सेवा आयोग तथा राज्यों के लोक सेवा आयोग संवैधानिक स्तर प्राप्त संस्थाएँ हैं। संविधान के अनुच्छेद–315 के अनुसार – ''संघ के लिए एक लोक आयोग होगा तथा प्रत्येक राज्य के लिए एक लोक सेवा आयोग का गठन किया जायेगा। दो या अधिक राज्य एक संयुक्त राज्य लोक सेवा आयोग का गठन कर सकते हैं।' इसके लिए संसद से प्रार्थना की जानी अपेक्षित है। इसी तरह किसी राज्य का राज्यपाल संघ के लोक सेवा आयोग से राज्य की आव”यकताओं की पूर्ति के लिए कार्य करने की प्रार्थना करे तो राष्ट्रपति के अनुमोदन पर संघ लोक सेवा आयोग राज्यों के लिए भी कार्य कर सकता है।

9.3. अध्याय के मुख्य बिन्दु (Presentation of Contents) :–

9.3.1. लोक सेवा आयोग के कार्य (Functions of the U.P.S.C.)

संविधान के अनुच्छेद – 320 के अनुसार संघ तथा राज्य के लोक सेवा आयोगों का यह कर्त्तव्य होगा कि वे सरकारी सेवाओं में नियुक्तियों के लिए परीक्षाओं का संचालन करें तथा सरकार को निम्नलिखित मामलों पर पराम"ाि प्रदान करें :–

1. लोक पदों के लिए भर्ती की रीतियों से सम्बद्ध सभी विषयों पर;
2. अभ्यर्थियों की नियुक्ति, पदोन्नति, स्थानान्तरण और उनकी उपयुक्तता के बारे में अनुसरण किए जाने वाले सिद्धान्तों पर;
3. भारत सरकार या राज्य सरकार की सेवा करने वाले व्यक्तियों पर प्रभाव डालने वाले समस्त अनु"ाासनिक विषयों पर;
4. ऐसे किसी व्यक्ति द्वारा किये गये खर्चे के किसी दावे पर जो उसके कर्त्तव्यपालन में किए गए कार्यों के सम्बन्ध में उसके विरुद्ध चलाई गयी किसी कानूनी कार्यवाही में उसे अपनी प्रतिरक्षा में खर्च करना पड़ा है; तथा
5. सरकार की हैसियत से सेवा करते समय किसी व्यक्ति को हुई क्षति के बारे में मुआवजे की रा"िा के किसी दावे पर।

इस प्रकार लोक सेवा आयोग मुख्यतः लोक सेवकों की भर्ती करने, नियुक्ति की अनु"ांसा करने, स्थानान्तरण, अनु"ाासनात्मक कार्यवाही, पदोन्नति, स्थायीकरण, तदर्थ नियुक्ति, सेवा नियमों तथा क्षतिपूर्ति के प्रकरणों में सरकार को पराम"ाि देने हेतु कर्त्तव्यबद्ध है किन्तु राष्ट्रपति और राज्यपाल विनियमों द्वारा ऐसे विषयों का उल्लेख कर सकते हैं जिनमें साधारणतया या किन्हीं वि"ोष परिस्थितियों में लोक सेवा आयोग से पराम"ाि किया जाना आव"यक न होगा। संविधान का अनुच्छेद 321 संसद को यह शक्ति देता है कि वह स्थानीय सत्ता या निगमित निकाय के लिए कृत्य करने हेतु आयोग से कह सकती है।

लोक सेवा आयोग से सम्बन्धित संवैधानिक प्रावधान

अनुच्छेद–315	–	संघ एवं राज्यों के लिए लोक सेवा आयोग का प्रावधान
अनुच्छेद–316	–	सदस्यों की नियुक्ति तथा पदावधि
अनुच्छेद–317	–	आयोग के सदस्यों को हटाना तथा निलम्बन करना
अनुच्छेद–318	–	आयोग के सदस्यों तथा कार्मिकों की सेवा"ार्तों के विनियमन हेतु शक्ति

अनुच्छेद–319	–	आयोग के सदस्यों द्वारा ऐसे सदस्य न रहने पर अन्यत्र पदधारण करने के सम्बन्ध में प्रेतिषेध
अनुच्छेद–320	–	लोक सेवा आयोग के कार्य
अनुच्छेद–321	–	लोक सेवा आयोग के कार्यों में विस्तार करने की शक्ति
अनुच्छेद–322	–	लोक सेवा आयोग के व्यय
अनुच्छेद–323	–	लोक सेवा आयोग के प्रतिवेदन

9.3.1.1. संगठन एवं कार्यप्रणाली (Organisation and Working)

संघ लोक सेवा आयोग का संगठन, कार्मिक तथा कार्यप्रणाली इस प्रकार है –

सदस्य –संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष तथा सदस्यों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। स्वतन्त्रता के समय एक अध्यक्ष तथा चार सदस्य आयोग में सम्मिलित थे। सदस्यों की संख्या शीघ्र ही 6 कर दी गई थी। सन् 1975 में आयोग में 1 अध्यक्ष तथा 7 सदस्य पद स्वीकृत थे। इसके प"चात् सन् 1980 में सदस्यों की संख्या 8 की गई तथा वर्ष 1985–86 से एक अध्यक्ष तथा 10 सदस्यों के पद स्वीकृत हैं। संविधान में सदस्यों की संख्या को नि"चत नहीं किया गया है। आयोग के कार्यभार के अनुसार सदस्यों की संख्या राष्ट्रपति द्वारा निर्धारित होती है।

संवैधानिक बाध्यता के कारण अध्यक्ष तथा सदस्यों का चयन करते समय यह ध्यान रखा जाता है कि लगभग आधे सदस्य ऐसे हों जिन्होंने आयोग में अपनी नियुक्ति के समय तक केन्द्र या राज्य सरकार के अधीन कम से कम 10 वर्ष का प्र"ाासनिक अनुभव प्राप्त कर लिया हो। इस सम्बन्ध में डॉ0 अम्बेडकर ने संविधान निर्माण के समय कहा था – ''लोक सेवाओं में उम्मीदवारों की उपयुक्तता की जाँच के सम्बन्ध में उस व्यक्ति से अधिक श्रेष्ठ अन्य कोई नहीं हो सकता जो स्वयं लोक सेवाओं से सम्बद्ध रहा हो।'' आयोग के नए अध्यक्ष को निवर्तमान अध्यक्ष शपथ दिलवाता है तथा अध्यक्ष आने वाले सदस्यों को शपथ ग्रहण कराते हैं।

9.3.1.2. सचिवालय

आयोग के गुरुत्तर दायित्वों की पूर्ति हेतु वर्तमान में 2000 से अधिक राजपत्रित अधिकारी तथा अराजपत्रित कर्मचारी कार्यरत हैं। संविधान के अनुच्छेद 318 में आयोग के कर्मचारीवृंद की संख्या तथा उसकी सेवा शर्तों के सम्बद्ध में विनिमय बनाने की शक्ति संविधान द्वारा राष्ट्रपति को दी गई है। आयोग में सभी श्रेणियों में तीन प्रकार के कार्मिक कार्यरत हैं :–

1. केन्द्रीय सचिवालय संवर्ग के अधिकारी–कर्मचारी
2. संघ लोक सेवा आयोग संवर्ग के अधिकारी–कर्मचारी
3. अन्य सहभागी मंत्रालयों के कार्मिक (राजभाषा विभाग)

9.3.1.3. अधिकार क्षेत्र

संघ लोक सेवा आयोग को उच्च लोक सेवाओं की भर्ती, पदोन्नति, सेवा–”ार्तों तथा अनु”ाासनात्मक कार्यवाही से सम्बन्धित कार्य दिए गए हैं। आयोग को अपने कार्य निष्पादित करने हेतु निम्नलिखित स्रोतों से कर्त्तव्य प्राप्त होते हैं –

1. संविधान में वर्णित प्रावधानों से;
2. संसद द्वारा निर्मित अधिनियमों से;
3. कार्यपालिका द्वारा निर्मित नियमों, विनियमों तथा कार्यकारी आदे”ाों से; और
4. परम्परा के माध्यम से।

9.4 पाठ का आगे का भाग (Further Main Body of the Text)

9.4.1. जिला प्रशासन (District Administration)

भारतीय प्र”ाासनिक व्यवस्था में जिला प्राचीनकाल से ही एक महत्त्वपूर्ण इकाई रहा है। जनसाधारण तथा राज्य सरकार के मध्य एक व्यावहारिक कड़ी के रूप में कार्यरत जिला प्र”ाासन स्थानीय नागरिकों की आ”ााओं और आकांक्षाओं का केन्द्रबिन्दु होने के साथ–साथ संघीय एवं राज्य सरकार की नीतियों तथा कार्यक्रमों के क्रियान्वयन का व्यावहारिक अभिकरण भी है। वैदिक काल में भी 100 गाँवों के ऊपर एक प्र”ाासनिक इकाई होती थी जो आज के जिलों के समकक्ष थी। यह '”ातग्रामी' नामक अधिकारी के नियंत्रण में थी। गुप्तकाल में प्रांतों को 'प्रदे”ा' में तथा प्रदे”ा को 'विषय' में विभक्त किया गया था। गुप्तकालीन **'विषय'** ही जिला समान इकाई थी। विषय का प्र”ाासनिक अधिकारी 'विषयपति' कहलाता था। सल्तनतकाल में ग्रामों का समूह 'परगना' कहलाने लगा। फौजदार के अधीन ये परगने मुख्यतः राजस्व की नियंत्रक इकाई थे। मुगलकाल में प्र”ाासन का स्वरूप सुविचारित तथा व्यवस्थित होने लगा। उस समय प्रांतों को सूबों में तथा सूबों को **'सरकार'** (जिला) में विभक्त किया गया था। इसके प”चात् सरकार को परगना या महल में बाँटा गया था। सूबे का नियंत्रक सूबेदार तथा सरकार अर्थात् जिले का मुख्य प्र”ाासनिक अधिकारी 'फौजदार' कहलाता था। 'परगना' की स्थिति आज की तहसील (तालुक) के समकक्ष थी जो 'ि”ाकदार' नामक अधिकारी के नियंत्रण में होता था। इस प्रकार जिला सदैव से ही एक महत्त्वपूर्ण प्र”ाासनिक इकाई रहा है। भारत के कुछ प्रदे”ाों में जिले को जनपद भी कहा जाता है जो मौर्यकाल में भी 'जनपद' ही कहलाता था।

भारतीय प्र"ाासन की रीढ़ के रूप में स्थापित जिला ब्रिटि"ा शासन के दौरान **'District'** के रूप में पहचाना जाने लगा। मूलतः लैटिन शब्द **Districtus का आशय**– 'न्यायिक प्र"ाासन के उद्दे"य से बनाए गए क्षेत्र से है।' शब्दको"ाीय दृष्टि से जिले (Districtus) से तात्पर्य **'किसी उद्देश्य विशेष के लिए किए गए प्रादेशिक विभाजन से है।'** ब्रिटि"ाकाल में डिस्ट्रिकट शब्द का प्रथम प्रयोग ईस्ट इण्डिया कम्पनी द्वारा सन् 1776 में कलकत्ता जिले के दीवान के सन्दर्भ में किया गया था। इसके प"चात् राजस्व एकत्र करने तथा शांति–व्यवस्था बनाए रखने में जिला एक महत्त्वपूर्ण इकाई बनता चला गया। **भारत के संविधान** में 'जिला' शब्द **अनुच्छेद–233** में जिला न्यायाधी"ाों की नियुक्ति के क्रम में प्रयुक्त हुआ है तथा **अनुच्छेद–243** में पंचायती राज में जिला परिषद् हेतु प्रयुक्त हुआ है। इसके अतिरिक्त छठी अनुसूची में कुछ राज्यों में **स्वशासी जिलों** के लिए प्रावधान है।

जिला प्रशासन का अर्थ (Meaning of District Administration)

जिला प्र"ाासन का समग्र लोक प्र"ाासन का एक व्यावहारिक प्र"ाासनिक स्तर है। प्र"ाासन से तात्पर्य जन कार्यों के प्रबन्धन से है। इस प्रकार जिला प्र"ाासन का तात्पर्य – निर्धारित भौगोलिक क्षेत्र (जिला) में लोक कार्यों के प्रबन्धन से है।' इन कार्यों में राजस्व एकत्रण, कानून क्रियान्वयन, लोक स्वास्थय, ि"ाक्षा एवं संचार, उपभोक्ता सेवाएँ तथा अन्य आव"यक कल्याणकारी प्र"ाासनिक गतिविधियाँ सम्मिलित हैं।

9.4.1.1 जिला प्रशासन के लक्षण या विशेषताएँ (Characteristics of District Administration)

भारत में जिला प्र"ाासन की मुख्य वि"ाषताएँ इस प्रकार है :–

1. जिला प्र"ाासन, राज्य प्र"ाासन तथा गाँव–ढाणियों के मध्य एक महत्त्वपूर्ण कड़ी है।
2. जिला प्र"ाासन के अधीन तहसीलें, उपखण्ड, विकास खण्ड तथा अन्य प्र"ाासनिक संरचनाएँ कार्यरत होती है।
3. सामान्यतः जिला प्र"ाासन के अधीन 1000–1400 गाँव तथा लगभग 10–20 लाख जनसंख्या होती है जो प्रत्येक राज्य तथा जिले में भिन्न–भिन्न हो सकती है।
4. जिला प्र"ाासन का प्र"ाासनिक प्रमुख 'जिला कलक्टर' कहलाता है जो जिला स्तर पर सभी विभागों का मुख्य नियंत्रक एवं समन्वयक होता है।
5. जिला मुख्यालय पर अधिकां"ा सरकारी विभागों के कार्यालय स्थापित होते हैं। इनमें पुलिस, स्वास्थय, कृषि, सिंचाई, उद्योग, परिवहन, ि"ाक्षा, आबकारी, प"ाुपालन, समाज कल्याण, नागरिक रसद आपूर्ति, ऊर्जा तथा संचार प्रमुख है।

6. पंचायती राज प्रणाली में जिला परिषद् का गठन जिला प्र"ाासन के विकासात्मक कार्यों में सहयोग देने हेतू किया जाता है।
7. भारत में सामान्यतः एक जिला संसदीय निर्वाचन क्षेत्र भी होता है (हालांकि ऐसा सभी स्थानों पर लागू नहीं होता) अतः इससे एक राजनीतिक पहचान भी बनती है।
8. प्रत्येक जिले की अपनी वि"िाष्ट सामाजिक–सांस्कृतिक पहचान होती है जो इसके प्र"ाासन तंत्र को भी प्रभावित करती है।

एक अप्रैल, 1999 से मध्य प्रदे"ा में दिग्विजय सिंह द्वारा जिला सरकार प्रणाली की शुरूआत की गई है। इस नए प्रयोग के अन्तर्गत 'जिला आयोजना समिति (DPC)' को अधिक स"ाक्त बनाते हुए प्रत्येक जिले का प्रभारी मंत्री इसका अध्यक्ष बनाया गया है तथा जिला कलक्टर इस समिति के सचिव हैं। जिला सरकार को राज्य सरकार ने 31 विभाग पूर्णतया हस्तान्तरित करते हुए उनके बजट एवं संचालन का दायित्व जिला सरकार को दिया है। प्र"ाासनिक विकेन्द्रीकरण तथा जवाबदेयता के मूल सिद्वांत पर टिका यह प्रयोग न्यूनाधिक मात्रा में सफल बताया जा रहा है।

भारत के संविधान के **अनुच्छेद–244(2), 275(1)** तथा छठी अनुसूची में अनुसूचित क्षेत्रों तथा **स्वशासी राज्यों एवं स्वशासी जिलों** का प्रावधान है। लद्दाख स्वायत्त परिषद्, दार्जिलिंग स्वायत्त परिषद् तथा पूर्ववर्ती झारखण्ड परिषद् स्वायत्त क्षेत्र है। छठी अनुसूची के अन्तर्गत असम, मेघालय, त्रिपुरा तथा मिजोरम में गठित स्व"ाासी जिलों को अनेक वि"िाष्ट प्र"ाासनिक, विधायी तथा न्यायिक शक्तियाँ प्रदान की जाती है।

9.4.1.2.जिला प्रशासन की भूमिका (Role of District Administration)

सामान्यतः जिला प्र"ाासन की उन सभी कार्यो को करने में अहम भूमिका है जो राज्य सरकार के मूल दायित्व हैं तथापि संक्षेप में जिला प्र"ाासन की भूमिका निम्न है :–

1. कानून एवं व्यवस्था बनाए रखना।
2. भू–राजस्व एवं अन्य करों को एकत्र करना।
3. राज्य सरकार की नीतियों एवं कार्यक्रमों को लागू करना।
4. विकास एवं कल्याणकारी गतिविधियों को संचालित करना।
5. "िाक्षा, ऊर्जा, स्वास्थय, परिवहन, नागरिक रसद, उद्योग, सिंचाई तथा प"ाुपालन इत्यादि मूलभूत उपभोक्ता सेवाएँ उपलब्ध करवाना।
6. विभिन्न प्रकार के लाइसेंस तथा पंजीकरण प्रदान करना।

7. संसदीय, विधानसभायी तथा स्थानीय निकायों के चुनाव करवाना।
8. प्र”ाासनिक, अर्द्ध प्र”ाासनिक तथा निजी संगठनों पर नियंत्रण एवं पर्यवेक्षण रखना।
9. विभिन्न प्रकार के मुकदमों की सुनवाई करना।
10. विभिन्न प्रकार की सामाजिक, शैक्षिक तथा सांस्कृतिक गतिविधियाँ आयोजित करना।
11. जिले के समग्र विकास हेतु योजना निर्माण करना।
12. जनचेतना बढ़ाने तथा सामुदायिक सहभागिता सुनि”िचत करने के प्रयास करना।
13. पिछड़े वर्गों, असहायों तथा अन्य जरूरतमन्द लोगों के कल्याण के प्रयास करना।
14. प्राकृतिक तथा अन्य आपदाओं के समय राहत कार्य संचालित करना।
15. कार्मिक प्र”ाासन के कार्य, यथा– भर्ती, प्र”िाक्षण, पदोन्नति तथा नियंत्रण इत्यादि के कार्य एवं पुरस्कार प्रोत्साहन देना।

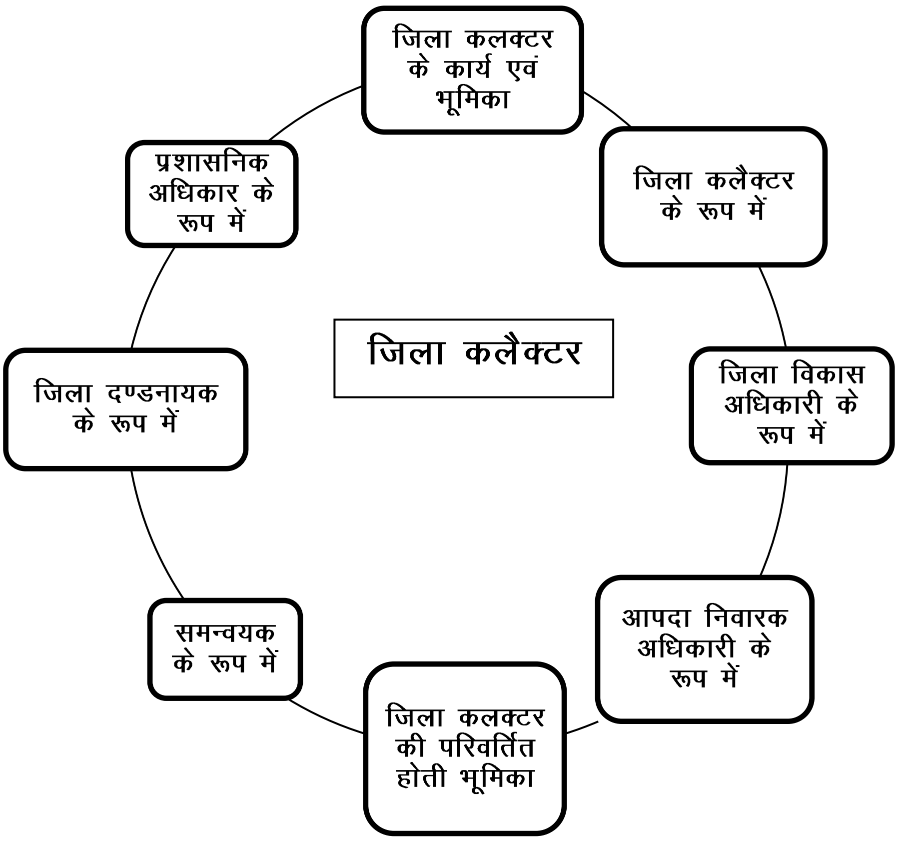

9.4.2. जिला कलैक्टर (District Collector)

भारतीय नौकर"ाही व्यवस्था में जिला कलक्टर अर्थात् 'डिस्ट्रिकट कलक्टर' का पद अत्यन्त महत्त्वपूर्ण तथा गौरव"ाली परम्पराओं से युक्त है। **प्रो. एस. आर. माहेश्वरी** का मत है कि जिला कलक्टर का पद मुगलकालीन **करौड़ी फौजदार** का सं"ोधित रूप है। ब्रिटि"ा शासन के दौरान कलक्टर का पद राजस्व एकत्रण (**Collection**) के लिए सृजित किया गया था जिसे कालान्तर में शांति एवं न्याय व्यवस्था से सम्बन्धित कार्य भी सौंप दिए गए लेकिन वर्तमान में जिला कलक्टर के कार्य मूलतः विकास प्र"ासन से जुड़ चुके है। सर्वप्रथम वारेन हेस्टिंग्स द्वारा सन् 1772 में बंगाल में कलक्टर का पद सृजित किया गया जिसे सन् 1773 में समाप्त कर दिया गया लेकिन सन् 1781 में पुनः यह पद सृजित हुआ तथा सन् 1786 से जिले को राजस्व एकत्रण की महत्त्वपूर्ण इकाई स्वीकार करते हुए कलक्टर पद को अनेक अधिकारों से युक्त किया गया। **राल्फ शैल्डन** को ब्रिटि"ा शासन का प्रथम जिला कलक्टर माना जाता है। सन् 1787 में कलक्टर को राजस्व एकत्रण के साथ–साथ आपराधिक प्रवृत्तियों पर नियंत्रण हेतु दण्डनायक की शक्तियाँ भी प्रदान कर दी गई। सन् 1793 में लार्ड कार्नवालिस ने कलक्टर की राजस्व तथा न्यायिक शक्तियाँ पृथक् करते हुए इस पद की स्थिति को किंचित् निम्न बनाया किन्तु सन् 1812 में होल मैकेंजी ने पुनः कलक्टर को असीम शक्तियाँ प्रदान कर दीं। कलक्टर का पद सदैव से ही उच्च प्र"ासनिक सेवा के अधिकारियों से भरा जाता रहा है। ब्रिटि"ाकाल में भी ब्रिटि"ा लोक सेवाओं तत्प"चात् इण्डियन सिविल सर्विस (ICS) के अधिकारी इस पद पर आसीन होते रहे। भारतीय राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में गठित अनेक आयोगों तथा कमेटियों ने कलक्टर के पद को सुदृढ़ बनाए रखने की सिफारि"ें की थी।

(i) **जिला कलक्टर के कार्य एवं भूमिका (Functions and role of District Collector)**

जिला प्र"ासन के समस्त प्र"ासनिक कार्य जिला कलक्टर के पर्यवेक्षण तथा नियंत्रण में सम्पन्न होते हैं। इस प्रकार जिला कलक्टर के कार्य जिला प्र"ासन के दायित्वों एवं गतिविधियों के अनुरूप बहुत व्यापक और वि"ाद् हैं। सारां"ातः जिला कलक्टर वह सभी कार्य निष्पादित करता या करवाता है जो जिला प्र"ासन से अपेक्षित हैं। जिला कलक्टर के कार्यों तथा भूमिका को निम्नांकित बिन्दुओं के माध्यम से रेखांकित किया जा सकता है –

(ii) **प्रशासनिक अधिकार के रूप में (As an Administrator)**

जिला स्तर पर सर्वोच्च प्र"ासनिक अधिकारी होने के नाते जिला कलक्टर सभी विभागों को नियंत्रण तथा पर्यवेक्षण प्रदान करता है। जिला स्तर पर लोक प्र"ासन के सामान्य क्षेत्र के कार्य 'पोस्डकॉर्ब' मान्यता के अनुसार जिला कलक्टर ही निष्पादित करता है, जैसे –

1. जिला स्तर का नियोजन (Planning)
2. सेवाओं को संगठित करना (Organising)

3. कार्मिकों की व्यवस्था करना (Staffing)

4. सभी विभागों को निर्दे”ित करना (Directing)

5. विभिन्न इकाइयों के मध्य समन्वय स्थापित करना (Co-Ordinating)

(iii) **जिला कलैक्टर के रूप में (As a Collector)**

अंग्रेजी के शब्द कलक्ट (एकत्र करना) से कलक्टर पदनाम बना है जो ब्रिटि”ाकाल में भू एवं कृषि राजस्व एकत्र करता था और न्यूनाधिक मात्रा में आज भी जिला कलक्टर का मुख्य कार्य राजस्व एकत्र करना बना हुआ है। कलक्टर के रूप में वह जिला स्तर पर राजस्व प्र”ाासन का मुखिया होता है जो निम्नांकित कार्य करता है।

1. राजस्व की दरों का निर्धारण करना;

2. राजस्व पूरी मात्रा में तथा निर्धारित समय में एकत्र करवाना;

3. कृषि आयकर, सिंचाई शुल्क, नहरी शुल्क, आयकर, बिक्री कर तथा अन्य आव”यक करों को उगाहने में प्र”ाासनिक निर्दे”ा प्रदान करना;

4. अदालती फीस, जैसे – रेवेन्यू स्टाम्प, विभिन्न प्रकार के सौदों, डीड की बिक्री तथा अन्तरण इत्यादि पर नियंत्रण;

5. शराब, पेट्रोल, औषधि तथा अन्य मादक पदार्थों पर आबकारी शुल्क पर नियंत्रण करना;

(iv) **जिला दण्डनायक के रूप में (As a District Magistrate)**

जिला दण्डनायक (Magistrate) के रूप में जिला कलक्टर को अनेक शक्तियाँ प्रदान की गई हैं। यद्यपि जिला दण्डनायक के रूप में प्रदत्त ये शक्तियाँ अब ब्रिटि”ा शासन की भांति वि”ाष्टाधिकार युक्त नहीं हैं क्योंकि हमारा संविधान स्वतन्त्र न्यायपालिका का समर्थक है अतः न्यायिक कार्यवाहियाँ जिला न्यायिक अधिकारी ही सम्पन्न करते हैं तथापि जिला कलक्टर अब भी पुलिस, जेल तथा न्यायिक क्षेत्र के कतिपय कार्य निष्पादित करवाता है। वह नागरिक सुरक्षा का नियंत्रक भी होता है। दण्डनायक के रूप में जिला कलक्टर के निम्नलिखित दायित्व हैं –

1. जिले में शांति, सुरक्षा, एकता, सद्भाव तथा व्यवस्था बनाए रखना;

2. पुलिस अधीक्षक के माध्यम से जिला पुलिस तंत्र पर नियंत्रण रखना;

3. साम्प्रदायिक दंगों, राजनीतिक आंदोलनों, उग्र प्रद”ानों, आतंककारी गतिविधियों तथा जातीय संघर्षों इत्यादि पर नियंत्रण रखना;

4. पुलिस थानों, रोजनामचों तथा डायरियों का निरीक्षण करना;

5. जिला पुलिस से वार्षिक रिपोर्ट प्राप्त करना तथा गृह विभाग को अग्रेषित करना;

(v) **जिला विकास अधिकारी के रूप में (As a Development Officer)**

स्वतन्त्रता के प"चात् जिला कलक्टर का पद कलक्टर तथा मजिस्ट्रेट के परम्परागत दायरे से बाहर आकर मुख्यतः विकास अधिकारी के रूप में व्यापकता प्राप्त कर रहा है। दिनांक 2 अक्टूबर, 1952 से शुरू हुआ राष्ट्रीय सामुदायिक विकास कार्यक्रम और कालान्तर में निर्मित अनेक कल्याणकारी एवं विकासपरक कार्यक्रमों, जैसे – 20 सूत्री कार्यक्रम, साक्षरता कार्यक्रम, परिवार कल्याण कार्यक्रम, स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना, अन्त्योदय अन्न योजना, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी योजना, प्रधानमन्त्री रोजगार योजना तथा राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मि"ान इत्यादि ने जिला कलक्टर के पद को व्यस्ततम तथा विकासोन्मुख बना दिया है। जिला विकास अधिकारी के रूप में जिला कलक्टर सामान्यतया निम्नलिखित कृत्य निष्पादित करता है –

1. जिला आयोजना समिति के माध्यम से जिले की विकास योजनाएँ बनवाना;
2. जिले में चल रही समस्त विकास परियोजनाओं तथा कार्यक्रमों पर निगरानी रखना तथा उनकी रिपोर्ट संभागीय आयुक्त एवं राज्य सरकार को प्रस्तुत करना;
3. एकीकृत ग्रामीण विकास से सम्बन्धित तथा अन्य विकास एवं कल्याणकारी योजनाओं का संचालन करवाना;
4. जिला औद्योगिक केन्द्र, जिला बैकिंग समन्वय समिति तथा नगरीय प्रबोधन समिति इत्यादि के माध्यम से विकास कार्यों को सुनि"चत करना;
5. विभिन्न विकासपरक तथा रोजगारोन्मुख कार्यक्रमों में ऋण इत्यादि का वितरण करवाना;

(vi) **समन्वयक के रूप में (As a Co-Ordinator)**

प्र"ाासनिक विभागों तथा उनकी शाखाओं में प्रसार और वि"ाष्टीकरण में वृद्धि के कारण समन्वय की स्थापना एक दुष्कर कार्य होता जा रहा है। वि"ोषज्ञ अधिकारियों से युक्त सरकारी विभागों में आपसी सामंजस्य तथा सहयोग पैदा करने के लिए जिला कलक्टर ही सर्वथा उपयुक्त अधिकारी है। वर्तमान समाज रक्षा, कल्याण तथा विकास की गतिविधियाँ बहुआयामी हैं अतः एकाधिक विभागों का सहयोग प्राप्त करके ही कार्यक्रमों को पूर्ण सफल बनाया जा सकता है।

(vii) **आपदा निवारक अधिकारी के रूप में (As a Disaster Mitigator)**

सामान्य परिस्थितियों के अतिरिक्त अन्य प्राकृतिक एवं मानवजनित आपदाओं या संकटों के समय भी जिला कलक्टर की भूमिका महत्वपूर्ण बनी रहती है। बाढ़, भूकम्प, सूखा, अकाल, तूफान, ओलावृष्टि, महामारी, युद्ध,

आतंककारी गतिविधियों, आन्तरिक विद्रोह, आंदोलनों, हिंसक वारदातों तथा साम्प्रदायिक दंगों की स्थिति में जनसाधारण की आ"ााओं का केन्द्र बिन्दु जिला प्र"ाासन वि"ोषतः जिला कलक्टर बन जाता है।

(viii) **जिला कलक्टर की परिवर्तित होती भूमिका (Changing Role of District Collector)**

'इस्पाती ढाँचा' तथा 'स्वर्गजन्मा सेवा' जैसी उपमाओं से युक्त भारतीय सिविल सेवा जो कि स्वतन्त्रता के प"चात् भारतीय प्र"ाासनिक सेवा कहलायी का तिलिस्म प्रमुखतः जिला कलक्टर तथा जिला मजिस्ट्रेट के पद के रूप में भारतीयों के मनोमस्तिष्क पर बरसों तक छाया रहा। विगत दो द"ाकों से जिला कलक्टर के पद, शक्तियों, भूमिका तथा सामाजिक छवि में व्यापक परिवर्तन आए हैं। यह परिवर्तन नितान्त स्वाभाविक हैं तथा सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, प्र"ाासनिक एवं भौगोलिक स्वरूपों में आ रहे भारी बदलावों से संगत भी है।

9.5. स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress):

निचे कुछ प्र"न दिए गए हैं, उनका उत्तर दीजिए :—

(i) संघ लोक सेवा आयोग का गठन किस अनुच्छेद में किया गया है ?

(ii) अखिल भारतीय सेवाओं के लिए परीक्षाएं कौन करवाता है ?

(iii) संघ लोक सेवा आयोग अपनी रिपोर्ट किसको प्रस्तुत करता है ?

(iv) भारत में जिलाधी"ा के पद का सर्जन कब किया गया ?

(v) जिले का प्र"ाासनिक अधिकारी कौन होता है ?

(vi) राज्य सेवाओं की परिक्षाएं कौन करवाता है ?

(vii) ग्राम—पंचायतों का गठन किस संविधान सं"ाोधन के तहत किया गया ?

9.6. सारांश (Summary)

इस अध्याय को पढ़ने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि केन्द्रिय स्तर पर सभी लोक सेवाओं की भर्ती केन्द्रिय लोक सेवा के द्वारा परीक्षा के माध्यम से की जाती है। केन्द्र में सचिवालय स्तर की सभी सेवाओं के लिए अभ्यार्थियों का चयन, प्र"िक्षण, पदोन्नति तथा अनु"ाासनात्मक कार्यवाही केन्द्रीय लोक सेवा आयोग की सिफारि"ा पर ही कि जाती है। भारत में आजादी के बाद 1950 से ही लोक सेवा आयोग ने अपना कार्य पुरे उत्तरदायित्व के साथ किया है और केन्द्र सरकार को समय—समय पर लोक सेवाओं से सम्बन्धित सलाह भी दी है। दे"ा के प्र"ाासनिक तथा सामाजिक विकास में लोक सेवकों की अहम भूमिका होती है क्योंकि ये स्थाई प्रकृति की

सेवा में रहते हैं और जिनको सभी प्रकार का अनुभव होता है जो दे"ा की नीतियों के निर्माण में मन्त्रियों को सलाह देते हैं। इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि लोक सेवा आयोग के द्वारा की गई लोक–सेवकों की चयन प्रक्रिया पर ही उचित कार्यों के लिए उचित सिविल लोक आ सकते हैं। अतः लोक सेवा आयोग की पे"ा के विकास में अहम् भूमिका है।

लोक प्र"ाासन का उत्तर दायित्व जिलाधी"ा पर ही होता है और जिले की कानूनी व्यवस्था को बनाए रखने में, शांति व्यवस्था में तथा जिले के विकास में जिलाधी"ा का अहम् योगदान है। जिलाधी"ा पर जिले का इतना ज्यादा उत्तरदायित्व है कि उसे जिलो रूपी जहाज का कप्तान कहें तो कोई गलत नहीं होगा क्योंकि जिलाधी"ा जिले में आपदा के समय आपदा प्रबन्धक, विकासकारी योजनाओं के लिए निति निर्माता, कानूनी व्यवस्था के लिए पुलिस अधीक्षक तथा व्यवस्था के लिए न्यायधी"ा के रूप में कार्य करता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि जिलाधी"ा जिले में चोतरफा विकास के लिए उत्तरदायी है।

9.7. सूचक शब्द (Key Words)

लोक सेवा आयोग –केन्द्रिय स्तर पर सिविल सेवकों की भर्ती के लिए कार्य करने वाली संस्था को लोक–सेवा आयोग कहा जाता है।

पदच्यूति –किसी सिविल सेवक को गैर संवैधानिक या गैर–कानून कार्यों के करने पर पद से विमुक्त करने का पदच्युती कहा जाता है।

सचिवालय –सिविल सेवकों के कार्यालय को सचिवालय कहा जाता है।

असंवैधानिक कार्य –जो कार्य संविधान के अनुरूप ने हो उन्हें असंविधानिक कार्य कहा जाता है।

9.8. स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

Q.1. संघीय लोक सेवा आयोग के कार्यों का विवरण दीजिए ?

Q.2. लोक–सेवा आयोग के गठन का संक्षिप्त विवरण दीजिए ?

Q.3. जिलाधी"ा की जिले के विकास में क्या भूमिका है ?

Q.4. जिलाधी"ा के कार्यों का वर्णन कीजिए ?

Q.5. जिला प्र"ाासन की भूमिका का वर्णन कीजिए ?

9.9. उत्तर–स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

(i) अनुच्छेद 315 में (ii) संघ लोक सेवा आयोग

(iii) राष्ट्रपति को (iv) 1772 में

(v) जिलाध्उाी"ा (vi) राज्य लोक सेवा आयोग

(vii) 73वें संविधान सं"ाोधन के तहत

9.10. सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

1. Public Administration, Mcgraw Hill : Laxmi Kant. M
2. New Horizons of Public Administration; Mohit Bhattacharya; Jawahar Publisher & Distribution.
3. Indian Administration; S.R. Maheshwari, Orient Black Swan.
4. Public Administration Theory and Practice; Hoshiar Singh and Pardeep Sachdeva; Pearson.
5. प्र"ाासनिक चिंतक; प्रसाद एण्ड प्रसाद सत्यनारायण; जवाहर पब्लिके"ान एण्ड डिस्ट्रीब्यू"ान।

Subject : Indian Administrative System	
Course Code : PUBA 301	Author : **Dr. Parveen sharma**
Lesson No. : 10	Vetter :
District Administration: District Collector **जिला प्रशासन: जिला कलेक्टर**	

अध्याय की सरंचना

10.1.अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

10.2.परिचय (Introduction)

10.3.अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

10.3.1.जिला प्रशासनिक संरचना (District Administrative Structure)

10.3.2.जिला प्रशासन की विशेषताएं (Characteristics of the district administrative)

10.3.3.जिला प्रशासन के कार्य (Functions of the District Administration)

10.3.4.जिला प्रशासन में सुधार की आवश्यकता (Need for reform in district administration)

10.3.5.जिला प्रशाशन का महत्त्व (Importance of District Administration)

10.4. पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

10.4.1. जिला कलेक्टर (District Collector)

10.4.2.जिला कलेक्टर के कार्य (Duties of District Collector)

10.4.3.कलेक्टर और पंचायती राज संस्थाएँ (Collector and Panchayati Raj Institutions)

10.4.4.कलेक्टर एवं प्रशासनिक सहायता(Collector and Administrative Assistance)

10.4.5.जिला कलेक्टर के कार्य -निष्पादन में बाधाएं (Obstacles in the performance of the District Collector)

10.5.स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

10.6.सारांश (Summary)

10.7.सूचक शब्द (Key Words)

10.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

10.9.उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

10.10. सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

10.1.अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

- **इस अध्याय के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी-**
- **जिला प्रशासन के विभिन्न अंगों को जान सकेंगे।**
- **जिला प्रशासन में जिला कलेक्टर की भूमिका की जाँच कर सकेंगे।**
- **कलेक्टर के परम्परागत और विकासात्मक कार्यों का वर्णन कर सकेंगे।**

- **जिला प्रशासन में कलेक्टर को शक्तियों को जान सकेंगे।**

10.2.परिचय (Introduction)

भारत में, जिला मूलभूत प्रशासनिक इकाई है। जिला प्रशासनिक पदानुक्रम में एक प्रशासनिक इकाई है जिसमें गाँव, शहर और कस्बे सहित कई प्रादेशिक क्षेत्र शामिल हैं। जिला राज्य की प्रमुख प्रशासनिक इकाई है। यह एक प्रशासनिक इकाई है जो सरकार के अधिकांश विभागों को संभालती है।जिला स्तर राज्य प्रशासन का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्तर है। भारतीय प्रशासनिक व्यवस्था में जिला प्राचीन काल से ही एक महत्त्वपूर्ण इकाई रहा है। यह इकाई जनसाधारण तथा राज्य सरकार के मध्य एक व्यावहारिक कड़ी के रूप में कार्यरत है। जिला प्रशासन स्थानीय नागरिकों की आशाओं और आकांक्षाओं का केंद्रबिंदु होने के साथ-साथ संघीय एवं राज्य सरकार की नीतियों तथा कार्यक्रमों के क्रियान्वयन का व्यावहारिक अभिकरण भी है। जिला प्रशासन का प्रमुख अधिकारी जिलाधीश होता है।

10.3.अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

10.3.1.जिला प्रशासनिक संरचना (District Administrative Structure)

जिला प्रशासन आम तौर पर एक पदानुक्रमित तरीके से संरचित होता है, जिसमें जिला कलेक्टर/मजिस्ट्रेट शीर्ष पर होता है। एक विशिष्ट जिला प्रशासनिक संरचना के प्रमुख तत्व निम्नलिखित हैं:-

- **जिला कलेक्टर/मजिस्ट्रेट:** यह जिले का सर्वोच्च पदस्थ अधिकारी होता है, जो जिले के समग्र प्रशासन के लिए जिम्मेदार होता है। वे जिले के भीतर शासन के सभी पहलुओं की देखरेख करते हैं। जिला प्रशासन का मुखिया, जिसे अक्सर जिला कलेक्टर या जिला मजिस्ट्रेट कहा जाता है, जिला प्रशासन प्रणाली का एक अभिन्न अंग है। वे स्थानीय निकायों और सरकार के उच्च स्तरों के बीच प्राथमिक कड़ी के रूप में कार्य करते हैं, यह सुनिश्चित करते हुए कि स्थानीय स्तर पर नीतियों और योजनाओं को प्रभावी ढंग से लागू

किया जाए।उनकी प्रमुख जिम्मेदारियों में निम्नलिखित शामिल हैं:-जिले में कानून और व्यवस्था सुनिश्चित करना,जिले के भीतर नीतियों और कार्यक्रमों के क्रियान्वयन का पर्यवेक्षण करना,आपातकालीन या आपदा की स्थिति में प्राथमिक संपर्क बिंदु के रूप में कार्य करना,जनता की शिकायतों का निवारण करना तथा शीघ्र समाधान सुनिश्चित करना,जिले के राजस्व संग्रह और वित्तीय मामलों की देखरेख करना,जिला प्रशासन के प्रमुख की भूमिका एक देश से दूसरे देश में और विभिन्न प्रशासनिक व्यवस्थाओं में काफी भिन्न होती है। हालाँकि, उनका प्राथमिक उद्देश्य एक ही रहता है - जिला स्तर पर सुचारू शासन सुनिश्चित करना।

- **अतिरिक्त जिला मजिस्ट्रेट:** अतिरिक्त जिला मजिस्ट्रेट जिला कलेक्टर को उनके प्रशासनिक कर्तव्यों में सहायता करते हैं।
- **उप-विभागीय अधिकारी:** किसी जिले के उप-विभागों का नेतृत्व उप-विभागीय अधिकारी करते हैं जो अपने-अपने क्षेत्रों में प्रशासन का प्रबंधन करते हैं।
- **तहसीलदार :** तहसीलदार छोटे प्रभागों के प्रभारी होते हैं जिन्हें तहसील या तालुका के रूप में जाना जाता है। उनके कर्तव्यों में भूमि अभिलेखों को बनाए रखना और राजस्व संग्रह करना शामिल है।
- **पटवारी/ग्राम अधिकारी:** गांव स्तर पर प्रशासन का काम पटवारी या ग्राम अधिकारी संभालते हैं। वे गांव के रिकॉर्ड रखते हैं और ग्रामीणों के लिए संपर्क का प्राथमिक बिंदु होते हैं।

District Administration State Government

↓

District

↓

Collector or Deputy Commissioner
(IAS Officer)

↓

Administration (Revenue)	Law and order	Public Works	Education	Health	Justice
↓	↓	↓	↓	↓	↓
Tehsildar	Superintendent of Police	Executuve Engineer	Distirct Education Ofiicer (DEO)	Chief Medical Officer	District Judges
↓	↓			↓	↓
Naib Tehsildar	Inspector			District Civil Surgeon	Additonal Judges
→ Kanungo (Village) → Patwari or Lekhpal					↓ Munsif

10.3.2.जिला प्रशासन की विशेषताएं (Characteristics of the district administrative)

जिला प्रशासन की कई विशिष्ट विशेषताएं हैं:

- **पदानुक्रमिक संरचना : जिला प्रशासन एक सख्त पदानुक्रमिक संरचना का पालन करता है, जिससे सुचारू कामकाज और जिम्मेदारियों का स्पष्ट चित्रण सुनिश्चित होता है।**

- **कार्यों की विस्तृत श्रृंखला : यह कानून और व्यवस्था बनाए रखने से लेकर विकासात्मक कार्यक्रमों के कार्यान्वयन तक के कार्यों की विस्तृत श्रृंखला का निष्पादन करता है।**
- **मध्यस्थ की भूमिका : यह स्थानीय निकायों और उच्च सरकारी स्तरों के बीच मध्यस्थ के रूप में कार्य करता है।**
- **लचीला दृष्टिकोण : कठोर संरचना के बावजूद, प्रशासन जिले की विशिष्ट आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए लचीला दृष्टिकोण अपनाता है।**
- **जवाबदेही : जिला प्रशासन उच्च अधिकारियों और जनता दोनों के प्रति जवाबदेह है, तथा अपने कामकाज में पारदर्शिता और ईमानदारी सुनिश्चित करता है।**

10.3.3.जिला प्रशासन के कार्य (Functions of the District Administration)

जिला प्रशासन जिले के सुचारू संचालन को सुनिश्चित करने के लिए कई प्रकार के कार्य करता है। इनमें शामिल हैं:-

- **कानून और व्यवस्था बनाए रखना:**कार्यों का एक समूह शांति और सार्वजनिक सुरक्षा से संबंधित है। पुलिस अधीक्षक, जो जिले के पुलिस बल का नेतृत्व करते हैं, और जिला मजिस्ट्रेट कानून और व्यवस्था बनाए रखने के लिए संयुक्त रूप से जिम्मेदार हैं।
- **आपदा प्रबंधन:** बाढ़, भूकंप, आकस्मिक आग, अकाल और अन्य प्राकृतिक आपदाओं जैसी स्थितियों में, पूरा जिला प्रशासन खतरे से निपटने के लिए तैयार रहता है, और डीसी विभिन्न विभागों की गतिविधियों के समन्वय और लोगों की पीड़ा को दूर करने के लिए उचित कदम उठाने की जिम्मेदारी लेता है।

सार्वजनिक स्वास्थ्य और स्वच्छता का रखरखाव व शैक्षिक सेवाएं प्रदान करना:इनमें शिक्षा, सार्वजनिक स्वास्थ्य, सामाजिक कल्याण और वंचित समुदायों और समूहों का कल्याण शामिल है। इनमें से प्रत्येक कर्तव्य जिले में एक अलग विभाग द्वारा संभाला जाता है, जिसका नेतृत्व एक विशेषज्ञ अधिकारी करता है।

- **करों और राजस्व का संग्रह**-कार्यों का दूसरा समूह राजस्व प्रशासन से संबंधित है। जबकि भूमि प्रशासन, जिसमें भूमि अभिलेखों का प्रबंधन शामिल है, इस श्रेणी का सबसे महत्वपूर्ण घटक है, इसमें भूमि राजस्व का आकलन और संग्रह, साथ ही अन्य सार्वजनिक बकाया राशि का संग्रह भी शामिल है जो भूमि राजस्व के बकाया के रूप में एकत्र किए जाते हैं।
- **चुनाव:** इसका तात्पर्य संसद, राज्य विधानमंडल और स्थानीय सरकारों के चुनाव कराने से है। चुनाव आयुक्त यह सुनिश्चित करने के लिए जिम्मेदार होता है कि मतदाता पंजीकरण से लेकर चुनाव परिणामों की घोषणा तक चुनाव प्रक्रिया का सही तरीके से पालन किया जाए।
- **विकासात्मक कार्यक्रमों का कार्यान्वयन:**जिला कलेक्टर आम तौर पर शहरी स्थानीय प्राधिकरणों के उचित संचालन की निगरानी और सुनिश्चित करने के लिए प्रभारी होता है। जिला कलेक्टर शहरी लोगों के लिए विभिन्न विकास और गरीबी उन्मूलन नीतियों के क्रियान्वयन की देखरेख करता है।
- बाज़ारों और व्यापार का विनियमन,प्राकृतिक संसाधनों और सार्वजनिक उपयोगिताओं का प्रबंधन आदि।

इस प्रकार जिला प्रशासन का अर्थ औपचारिक रूप से जिले के रूप में मान्यता प्राप्त क्षेत्र के भीतर सरकारी जिम्मेदारियों के प्रबंधन से है।

10.3.4.जिला प्रशासन में सुधार की आवश्यकता (Need for reform in district administration)

जिला प्रशासन में सुधार की आवश्यकता वर्तमान प्रणाली में विभिन्न चुनौतियों और कमियों से उत्पन्न होती है। जिला कलेक्टर की भूमिका में स्पष्टता और परिभाषित जिम्मेदारियों का अभाव है, जिससे उनके कर्तव्यों का

प्रसार होता है। पंचायती राज संस्थाओं (पीआरआई) और शहरी स्थानीय निकायों (यूएलबी) की सरकार के तीसरे स्तर के रूप में स्थापना के साथ, कुशल कामकाज सुनिश्चित करने के लिए कलेक्टर की भूमिका को फिर से परिभाषित करना आवश्यक हो जाता है। निम्नलिखित मुद्दों को संबोधित करने के लिए सुधारों की आवश्यकता है:

- संघ-राज्य और स्थानीय संबंध: जिला कलेक्टर, एक संघ/केंद्रीय अधिकारी होने के नाते, केंद्र और राज्य दोनों की कल्याणकारी और विकास गतिविधियों को लागू करने में निष्पक्ष रूप से काम करने की उम्मीद करता है। हालांकि, योजनाओं की निगरानी और प्रभावी ढंग से कार्यान्वयन के लिए केंद्र और राज्यों के बीच बेहतर समन्वय की आवश्यकता है।
- विकास प्रबंधन की अनिवार्यताएँ: संसाधनों के इष्टतम उपयोग और विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए विकास प्रशासन से विकास प्रबंधन में बदलाव बहुत ज़रूरी है। इसके लिए प्रशासकों को प्रबंधन कौशल विकसित करने और कार्यक्रमों और नीतियों को लागू करने में अधिक कुशल बनने के लिए प्रशिक्षित करने की आवश्यकता है।
- कानून और व्यवस्था प्रशासन: कानून और व्यवस्था बनाए रखना सरकार का एक महत्वपूर्ण कार्य है। हालाँकि, विकास प्रशासन की खोज में, कानून और व्यवस्था पर ध्यान अक्सर उपेक्षित हो जाता है। विकास और कानून और व्यवस्था के बीच एक संतुलित दृष्टिकोण सुनिश्चित करने के लिए बुनियादी ढाँचे के निर्माण, खुफिया जानकारी और शिकायतों को दूर करने पर पर्याप्त ध्यान दिया जाना चाहिए।
- जिला प्रशासन और लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण: 1992 के 73वें और 74वें संशोधन अधिनियमों ने पीआरआई और नगर पालिकाओं के माध्यम से लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की शुरुआत की। हालाँकि, नौकरशाही प्रतिरोध, निहित स्वार्थ, अभिजात्य व्यवहार और इस प्रणाली में जिला कलेक्टर की भूमिका ने चिंताएँ पैदा की हैं।

पीआरआई को शक्तियों का प्रभावी हस्तांतरण और ग्रामीण आबादी और कलेक्टर के बीच अविश्वास को दूर करना महत्वपूर्ण पहलू हैं जिन पर विचार किया जाना चाहिए।

संघ-राज्य संबंधों, विकास प्रबंधन, कानून और व्यवस्था प्रशासन तथा लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण से जुड़ी चुनौतियों से पार पाने के लिए जिला प्रशासन में सुधार आवश्यक है। जिला कलेक्टर की भूमिका को फिर से परिभाषित करना, समन्वय को बढ़ावा देना, पीआरआई को सशक्त बनाना तथा स्थानीय शासन में कलेक्टर की भागीदारी के बारे में चिंताओं का समाधान करना जिला स्तर पर प्रभावी प्रशासन तथा कार्यक्रमों के कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण कदम हैं।

10.3.5.जिला प्रशाशन का महत्त्व (Importance of District Administration)

हमारे देश में शासन को सुचारु रूप से चलाने के लिए प्रशासनिक दृष्टि से राज्य को संभागों में, संभाग को जिलों में, जिले को खण्डों एवं तहसीलों में तथा तहसील को पटवार वृत्त (ग्राम पंचायत स्तर) में बाँटकर शासन की प्रत्येक इकाई के स्तर पर प्रशासनिक व्यवस्था स्थापित की गई है। जिला एक महत्त्वपूर्ण इकाई है। जिले का चहुँमुखी विकास 'जिला प्रशासन की कार्य कुशलता पर निर्भर करता है।

- **शान्ति एवं कानून व्यवस्था बनाए रखना:-** जिले में शान्ति एवं कानून व्यवस्था बनाए रखने की सम्पूर्ण जिम्मेदारी जिला कलक्टर अर्थात् जिला मजिस्ट्रेट की होती है। इस कार्य हेतु जिला मजिस्ट्रेट के सहयोग के लिए पुलिस प्रशासन होता है। जिले में पुलिस विभाग पुलिस अधीक्षक (एस.पी.) के नियंत्रण, निर्देशन व पर्यवेक्षण में कार्य करता है।
- **जिले के 'भू-अभिलेख अद्यतन रखना तथा किसानों से भू-राजस्व प्राप्त करना-:-**'जिला प्रशासन अपने अधीनस्थ तहसीलों में विभिन्न प्रकार की भूमियों का अभिलेख रखे व इसे अद्यतन (Update) भी बनाए रखता है। गाँव का पटवारी गाँव की समस्त भूमि का निर्धारित प्रकारों में वर्गीकरण करता है, इसके साथ वह

खेतों का नाप रखता है, खेतों के नक्शे बनाता है. भूमि के मालिक का नाम व उसकी भूमि का पूर्ण विवरण रखता है। फसल तैयार होने पर पटवारी उसका विवरण तैयार करता है जिसे गिरदावरी करना कहते हैं। इसके साथ ही पटवारी किसानों से भूमि कर वसूल करता है, जिसे 'भू-राजस्व' या 'लगान' कहते हैं।

- **रसद एवं अन्य सामग्री उपलब्ध करवाना:**- जिले में रह रहे सभी व्यक्तियों को आवश्यक वस्तुएँ जैसे- खाद्यान्न, चीनी, मिट्टी का तेल, डीजल, पेट्रोल, घरेलू गैस सिलेन्डर आदि को पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध कराने की व्यवस्था जिला रसद अधिकारी करता है। बाढ़, अकाल तथा अन्य प्राकृतिक आपदाओं से प्रभावित लोगों को आवश्यक खाद्यान्न सामग्री उपलब्ध करवाने में भी जिला प्रशासन की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है
- **चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाएँ उपलब्ध करवाना:**- जिले में चिकित्सा सुविधाएँ एवं दवाइयाँ, टीकाकरण, परिवार कल्याण, महिला एवं शिशु स्वास्थ्य सेवाएँ, नशा मुक्ति आदि कार्यकर्मों को संचालित करने हेतु एक 'मुख्य चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अधिकारी' होता है। उसके सहयोग हेतु ब्लॉक चिकित्सा अधिकारी, चिकित्सा अधिकारी (डॉक्टर), नर्स, प्रसाविका (दाई) आदि होते हैं।
- **कृषि-विकास एवं सिंचाई की सुविधाएँ उपलब्ध करवाना:**- यह कार्य जिले के सिंचाई एवं कृषि विभाग करते हैं, जो किसानों को सिंचाई की सुविधा और उन्नत खाद-बीज उपलब्ध करवाते हैं। कृषि कार्य हेतु विद्युत आपूर्ति के लिए भी ये विभाग मदद करते हैं।
- **जिला योजनाओं का निर्माण व क्रियान्विति**- केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा देश में विभिन्न प्रकार की योजनाएँ चलाई जा रही हैं, जैसे कि गरीबी उन्मूलन, साक्षरता, अनुसूचित जाति एवं जनजाति विकास, सिंचाई योजनाएँ आदि। इन योजनाओं का निर्माण एवं क्रियान्विति जिले के विभिन्न विभागों द्वारा की जाती है, जिन पर जिला प्रशासन का नियंत्रण एवं निर्देशन होता है।
- **वनों का विकास एवं पर्यावरण सुधार**- जिले में वनों के संरक्षण एवं विकास हेतु 'जिला वन अधिकारी' होता है, जो वनों के विकास के कार्य एवं देखभाल करता है।

- **संवैधानिक संस्थाओं के चुनाव करवाना:**-जिले में लोकसभा, विधानसभा, पंचायतराज व्यवस्था और शहरी स्थानीय निकायों के चुनाव समय-समय पर होते रहते हैं। इन चुनावों को कराने का दायित्व जिला प्रशासन का है। जिला कलक्टर जिला निर्वाचन अधिकारी के रूप में जिले के अधिकारी व कर्मचारियों के सहयोग से इन चुनावों को सम्पन्न करवाता है।
- **जनता एवं सरकार के बीच की कड़ी :-** जिले में प्राकृतिक आपदा एवं अन्य समस्याओं के निवारण के लिये जिला प्रशासन राज्य सरकार को सूचित करता है तथा आवश्यक व्यवस्था करता है। दूसरी ओर वह सरकार की विभिन्न योजनाओं और नीतियों की जानकारी जनता को देता है, ताकि जनता उनका लाभ उठा सके।
- **पंचायतराज व्यवस्था को सुचारू रूप से संचालन में सहायता** :-जिला प्रशासन जिला परिषद् को पंचायतीराज व्यवस्था सुचारू रूप से संचालन में सहयोग प्रदान करता है।
- **जन समस्याओं व शिकायतों का निवारण;-** आम जनता की कठिनाईयों एवं शिकायतों का निवारण समिति के माध्यम से अपनी सार्वजनिक एवं व्यक्तिगत समस्याओं का निराकरण करवा सकती है।
- **जिला स्तरीय शैक्षिक प्रशासन** के लिए जिले में स्थित विद्यालयों में शैक्षिक कार्यों को सुचारू एवं सुव्यस्थित रूप से संचालित करवाना, निःशुल्क एवं अनिवार्य बाल शिक्षा अधिनियम की पालना करवाना, निजी विद्यालयों को मान्यता देना, जिला स्तर पर विद्यालयी खेलकूद प्रतियोगिताओं व अन्य कार्यक्रमों का आयोजन करवाना आदि में भी जिला प्रशासन की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है

10.4. पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

10.4.1. जिला कलेक्टर (District Collector)

जिलाधिकारी या ज़िला दंडाधिकारी भारतीय प्रशासनिक सेवा (IAS) का एक प्रमुख प्रशासनिक पद है। जिसे अंग्रेजी में "डिस्ट्रिक्ट कलेक्टर" और इसे अंग्रेजी में या फिर सिर्फ "कलेक्टर" या "डेप्युटी कमिश्नर" के नाम से भी

जाना जाता है भारत के प्रत्येक जिले का एक अपना उपायुक्त होता है। कलेक्टर के पद का सृजन 200 वर्षों से अधिक समय पहले किया गया था। अंग्रेज शासन के दौरान सन 1772 में गव्हर्नर जनरल लोर्ड वॉरेन हेस्टिंग द्वारा बुनियादी रूप से नागरिक प्रशासन और 'भू राजस्व की वसूली' के लिए 'जिलाधिकारी' का पद गठित किया गया था। यही अब राज्य के लोक-प्रशासन के सर्वाधिक महत्वपूर्ण पदों में है। 'जिलाधीश' और 'कलेक्टर' जिले में राज्य सरकार का सर्वोच्च अधिकार संपन्न प्रतिनिधि या प्रथम लोक-सेवक होता है। इसकी नियुक्ति राज्य सरकार द्वारा भारतीय प्रशासनिक सेवा (IAS) अधिकारियों में से की जाती है । भारतीय प्रशासनिक सेवा के सदस्यों को या तो सीधे संघ लोक सेवा आयोग (यूपीएससी) द्वारा भर्ती किया जाता है, या राज्य सिविल सेवा (प्रांतीय सिविल सेवा) (एससीएस) से पदोन्नत किया जाता है। सीधे भर्ती किए गए भारतीय प्रशासनिक सेवा (आईएएस) अधिकारियों को पांच से छह साल की सेवा के बाद जिलाधिकारी (कलेक्टर) के रूप में नियुक्त किया जाता है।

जिलाधिकारी भारत में किसी जिले के प्रशासन के लिए जिम्मेदार पद है। हालाँकि पद का नामकरण अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग हो सकता है, लेकिन इसे आमतौर पर दक्षिण भारतीय राज्यों में जिला कलेक्टर (Collector), उत्तर भारतीय राज्यों में जिला मजिस्ट्रेट (District Magistrate) और पंजाब, हरियाणा और जम्मू और कश्मीर जैसे राज्यों में उपायुक्त (Deputy Commissioner) के रूप में जाना जाता है। स्वतंत्रता के बाद, अलग-अलग नाम जारी रहे। हालाँकि, शब्दावली में अंतर के बावजूद, इन अधिकारियों की भूमिका और जिम्मेदारियाँ काफी हद तक समान हैं।

जिला कलेक्टर (Collector)मुख्य जिला विकास अधिकारी के रूप में सारे प्रमुख सरकारी विभागों- पंचायत एवं ग्रामीण विकास, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य, आयुर्वेद, अल्पसंख्यक कल्याण, कृषि, भू-संरक्षण, शिक्षा, महिला अधिकारता, ऊर्जा, उद्योग, श्रम कल्याण, खनन, खेलकूद, पशुपालन, सहकारिता, परिवहन एवं यातायात, समाज कल्याण, सिंचाई, सार्वजनिक निर्माण विभाग, स्थानीय प्रशासन आदि के सारे कार्यक्रमों और नीतियों का प्रभावी

क्रियान्वयन करवाने के लिए अपने जिले के लिए अकेले उत्तरदायी होता है।वह जिला मजिस्ट्रेट के रूप में पुलिस अधीक्षक के साथ प्रमुखतः जिले की संपूर्ण कानून-व्यवस्था का प्रभारी होता है और सभी तरह के चुनावों का मुख्य प्रबंधक भी। साथ ही वह जनगणना-आयोजक, प्राकृतिक-आपदा प्रबंधक, भू-राजस्व-वसूलीकर्ता, भूअभिलेख-संधारक, नागरिक खाद्य व रसद आपूर्ति-व्यस्थापक, ई-गतिविधि नियंत्रक, जनसमस्या-निवारण भी करता है।

जिला प्रशासन का नेतृत्व जिलाधिकारी करता है। वह एक साथ जिले के उपायुक्त (DC), जिला मजिस्ट्रेट (DM) और कलेक्टर होते हैं। जिलाधिकारी की मुख्य जिम्मेदारियाँ राजस्व प्रशासन, आपदा राहत, चुनाव, कानून और व्यवस्था बनाए रखना और सरकार द्वारा सौंपे गए अन्य मामले हैं। एक प्रशासक के रूप में, जिला कलेक्टर जिले में सभी विकास गतिविधियों के समन्वय के लिए जिम्मेदार है। जिलाधिकारी जिला मजिस्ट्रेट (DM) के रूप में कार्य करता है और जिले में कानून और व्यवस्था बनाए रखने के लिए जिम्मेदार है। वह एक साथ उपायुक्त, जिला मजिस्ट्रेट और कलेक्टर हैं जिला मजिस्ट्रेट के रूप में, वह कानून और व्यवस्था के लिए जिम्मेदार है और पुलिस और अभियोजन एजेंसी का प्रमुख है। कलेक्टर के रूप में, वह राजस्व प्रशासन का मुख्य अधिकारी होता है और भू-राजस्व के संग्रह के लिए जिम्मेदार होता है, और जिले में सर्वोच्च राजस्व न्यायिक प्राधिकारी भी होता है। उपायुक्त (डेप्युटी कमिश्नर) के रूप में, वह जिले का कार्यकारी प्रमुख होता है और उसके पास विकास, पंचायत, स्थानीय निकाय, नागरिक प्रशासन आदि से संबंधित विविध जिम्मेदारियां होती हैं।

10.4.2.जिला कलेक्टर के कार्य (Duties of District Collector)

कलेक्टर का कार्यालय एक महत्वपूर्ण संस्था है, जो ब्रिटिश शासकों से भारतीय प्रशासन प्रणाली को मिली। वह परम्परागत राजस्व संबंधी कार्य और विकास संबंधी कार्य भी करता है। पूरे देश में कलेक्टर की शक्तियाँ और कार्य वैसे ही रहे जैसे पहले थे। यद्यपि व्यापक रूप में कुछ भिन्नताएँ हैं, फिर भी मोटे तौर पर कलेक्टर निम्नलिखित कार्य करता रहा है।

- कलेक्टर ने राजस्व अधिकारी के रूप में कार्य आरंभ किया, और वह अब भी प्रधान राजस्व अधिकारी तथा जिले के राजस्व प्रशासन का प्रमुख है। स्वतंत्रता के बाद यद्यपि विकास प्रशासन पर अधिक बल दिए जाने के कारण राजस्व प्रशासन का महत्व गौण हो गया है, फिर भी राजस्व संबंधी कार्य अभी भी जिला कलेक्टर के पास हैं। राजस्व संग्रह करने के अलावा, कलेक्टर भूमि सुधारों और राजस्व प्रशासन (सरकारी भूमि की अभिरक्षा सहित) से संबंधित सभी मामलों का प्रहस्तन करता है। राजस्व प्रशासन के कार्यों में कई अधिकारी जैसे अपर कलेक्टर ,संयुक्त कलेक्टर उसकी सहायता करते हैं। वह राज्य उत्पाद शुल्क अधिनियम के अधीन जिले का प्रभारी अधिकारी है।
- जिला कलेक्टर, जिला आपदा प्रबंधन समिति का अध्यक्ष है जो आपदाओं के प्रभाव को दूर करने तथा प्रभावित क्षेत्रों में पीड़ित लोगों को तात्कालिक तथा दीर्घावधिक सहायता प्रदान करने के लिए अग्रिम योजना बनाने के लिए उत्तरदायी है। वह जिले में राहत कार्य का प्रमुख अधिकारी होता है। बाढ़ जैसी आपात स्थिति में कलेक्टर बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आपात स्थिति के के अतिरिक्त अधिकतर कलेक्टर के आकलन के आधार पर सरकार राहत की राशि और वितरण के तरीकों पर निर्णय लेती है।
- जिला कलेक्टर, जिला मजिस्ट्रेट के रूप में भी कार्य करता है, और वह जिले में कानून और व्यवस्था बनाए रखने के लिए उत्तरदायी होता है। कार्यकारी से न्यायपालिका अलग होने के बाद कलेक्टर दंड प्रक्रिया संहिता (Criminal Procedure Code) की निवारक अनुभाग से संबंधित है। वह विशेष अपराध-रोधी सुरक्षा अधिनियमों या राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम के अधीन अभिरक्षा में रखने का वारंट जारी करने वाला प्राधिकारी है। उसके कार्य में, जिले में पुलिस प्रशासन का प्रमुख पुलिस अधीक्षक उसकी सहायता करता है। पुलिस अधीक्षक सभी महत्वपूर्ण मामलों में, कलेक्टर से आदेश लेता है। बिहार पुलिस अधिनियम, 2007 के अधीन कलेक्टर जिला जिम्मेदारी प्राधिकरण का अध्यक्ष है, जो विभागीय और कनिष्ठ पुलिस कर्मियों के विरुद्ध कदाचार की शिकायतों की जांच से संबंधित मुद्दों का अनुवीक्षण करता है।

- जिला कलेक्टर, जिला प्रशासन के प्रमुख है। जिला मजिस्ट्रेट के रूप में, वह कानून और व्यवस्था बनाए रखने के लिए उत्तरदायी है। मुख्य राजस्व अधिकारी के रूप में, वह भूमि सुधारों तथा राजस्व प्रशासन (सरकारी भूमि की अभिरक्षा सहित) से संबंधित सभी मामलों का प्रहस्तन करता है। वह कई अन्य विभागों जैसे ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज, सामाजिक कल्याण, आदि से भी संबद्ध है। कई राज्यों में, पंचायती राज निकायों से उसके बहुत महत्वपूर्ण संबंध हैं। जिला प्रशासन के प्रमुख के रूप में, वह विभिन्न विभागों जैसे राजस्व, पुलिस और अन्य विभागों के बीच समन्वयकारी भूमिका निभाता है। यदि स्थानीय निकाय सार्वजनिक शान्ति का खतरा बनते हैं तो उसे उनके प्रस्तावों को निलम्बित करने की शक्ति प्राप्त है। वह जिले के कई आधिकारिक तथा गैर- आधिकारिक निकायों का अध्यक्ष होता है। जिला कलेक्टर, जिला राष्ट्रीय सूचना केन्द्र पर अधीक्षण का कार्य करता है। वह उन्हें कितना समय देता है, यह उसकी अपनी व्यक्तिगत रुचि पर निर्भर करता है।
- उसे जिला स्तर पर सरकार के प्रतिनिधि के रूप में देखा जाता है। वह स्वतंत्रता दिवस और गणतंत्र दिवस पर राष्ट्रीय झंडा फहराता है। उसे कई नयाचार (प्रोटोकॉल) के कार्य भी करने होते हैं, जैसे जिले में मंत्रियों और अति-विशिष्ट व्यक्तियों के दौरों के समय उनसे मुलाकात करना। बाढ़ जैसी आपात स्थिति में, वह बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। वह प्रभावित व्यक्तियों को सहायता देने के लिए जिला प्रशासन की किसी भी शाखा को किसी भी विशिष्ट कार्य करने के लिए आदेश दे सकता है। जनगणना कार्य और संसद से ग्राम पंचायत तक विभिन्न लोकतंत्रीय निकायों का निर्वाचन कराना उसका एक और महत्वपूर्ण कार्य है। कलेक्टर उन कुछ जिलों में, जहाँ अनुसूचित जनजाति के लोग रहते हैं, राज्यपाल के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करता है। ऐसे कई अन्य कार्य हैं, जिनसे कलेक्टर पूर्णतः संबद्ध होता है जैसे सामाजिक सुरक्षा, पेंशन, लाइसेंस प्रदान करना, आदि। अनिवार्य वस्तुओं की कमी और बढ़ते हुए मूल्य के कारण सार्वजनिक वितरण प्रणाली जिला प्रशासन का महत्वपूर्ण भाग बन गई है। वह प्रत्यक्ष रूप से, सभी अनिवार्य वस्तुओं के वितरण और सामग्री के

नियंत्रण के लिए उत्तरदायी होता है। अधिकांश राज्यों में, कलेक्टर के अधिकार क्षेत्र में जिला स्तर पर खाद्य और नागरिक आपूर्ति विभाग के कार्यकरण में वह प्रत्यक्ष भूमिका निभाता है। वितरण प्रणाली के प्रमुख के रूप में, उससे यह आशा की जाती है कि वह दुर्लभ सामग्री का समय पर और समान रूप से वितरण सुनिश्चित करे। जिला कलेक्टर सार्वजनिक वितरण प्रणाली के कार्यान्वयन की निगरानी करता है और उसे अनिवार्य वस्तु अधिनियम के उपबंधों तथा संबद्ध नियमों और आदेशों को लागू करने की शक्तियां प्राप्त है। कलेक्टर कृषि, पशुपालन, पशु चिकित्सा, हथकरघा, सिंचाई और उद्योग विभागों की बहुत-सी समितियों की बैठकों की अध्यक्षता करता है। कलेक्टर के लिए ये समितियों उत्कृष्ट मंच सिद्ध होती हैं, क्योंकि इन समितियों की बैठकों के माध्यम से उसे नीति कार्यान्वयन के तरीकों, और स्थानीय लोगों की समस्याओं को समझने का अवसर मिलता है।

10.4.3.कलेक्टर और पंचायती राज संस्थाएँ (Collector and Panchayati Raj Institutions)

स्वतंत्रता के पश्चात्, कलेक्टर जिले में विकास कार्यक्रमों के कार्यान्वयन के लिए उत्तरदायी बन गया है। सामान्यतः प्रशासक के रूप में, उससे यह अपेक्षा की जाती है कि वह विभिन्न जिले में कार्यान्वित किए जा रहे सभी विकास कार्यक्रमों का समन्वय करे। पंचायती राज संस्थाओं के मामले में, कलेक्टर की भूमिका विकास प्रशासन में अधिक प्रत्यक्ष है। वह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इन संस्थाओं से जुड़ा रहता है। पंचायती राज संस्थाओं से इस प्रकार की सम्बद्धता प्रायः सभी राज्यों में दिखाई देती है। भारत में पंचायती राज की स्थापना से जिला प्रशासन के ढाँचे में कई परिवर्तन हुए हैं। यह विशेष रूप से जिला कलेक्टर की भूमिका और कार्यों के मामले में हुआ है। वास्तविक व्यवहार में, भिन्न-भिन्न राज्यों में कलेक्टर और पंचायती राज संस्थाओं के बीच अलग-अलग किस्म के संबंध स्थापित हुए हैं।

कलेक्टर और पंचायती राज संस्थाओं के बीच संबंध का अध्ययन विभिन्न विषयों के अंतर्गत किया जा सकता है, जैसे कि स्टाफ पर नियंत्रण, प्रस्ताव निलंबित करने की शक्ति, अधिकारियों को हटाने की शक्ति और पंचायती राज संस्थाओं को निलम्बित और भंग करने की शक्ति। इन क्षेत्रों में, भिन्न-भिन्न राज्यों में कलेक्टर की भूमिका अलग- अलग है। कलेक्टर को गोपनीय रिपोर्ट लिखने और विभिन्न दंड देने की शक्ति भी प्राप्त है। सभी राज्यों में ये शक्तियाँ एक समान नहीं हैं। इसी प्रकार, कलेक्टर पंचायतों के प्रस्तावों को निलम्बित कर सकता है। इस प्रकार की सम्बद्धता, कलेक्टर को जनता के प्रतिनिधियों से निकटतम संबंध बनाने में सहायक होती है। इससे उसे जिला स्तर पर विकास प्रशासन की गति को समझने का अवसर मिलता है।

73वें संविधान संशोधन के पश्चात् पंचायती राज संस्थाओं से जिला कलेक्टर का संबंध बहुत बदल गया है। 1993 में विभिन्न राज्यों द्वारा संविधान संशोधन और पंचायती राज कानूनों के बनाए जाने से विकास कार्य के संबंध में जिला कलेक्टर का कार्यभार कम हआ है। इस अधिनियम ने राज्य सरकारों को पंचायती राज सस्थाओं और कलेक्टर के संबंधों के मानदंड निर्धारित करने की गुंजाइश दी है। इस संदर्भ में, कुछ राज्यों ने मुख्य कार्यकारी अधिकारी के पद का सृजन किया है और कुछ राज्यों ने जिला विकास अधिकारी अथवा उप-जिला आयुक्त का पद सृजित किया है।73वें संविधान संशोधन के बाद भी पंचायती राज संस्थाओं के संबंध में जिला कलेक्टर की स्थिति के बारे में कोई एक समान पैटर्न नहीं है।

10.4.4. कलेक्टर एवं प्रशासनिक सहायता(Collector and Administrative Assistance)

विभिन्न स्तरों के कई अधिकारियों द्वारा कलेक्टर की सहायता की जाती है। आम तौर पर संयुक्त या अपर कलेक्टर रैंक के दो या तीन अधिकारी होते हैं। ये अधिकारी राजस्व, कानून और व्यवस्था, तथा विकास संबंधी कार्य देखते हैं। कलेक्टरेट में कई उप कलेक्टर उपसमाहर्ता द्वारा कलेक्टर की सहायता की जाती है। ये अधिकारी विभिन्न कार्यों जैसे राजस्व, कानून, राहत, स्थापना और अन्य कार्य देखते हैं। तकनीकी अधिकारी, जैसे जिला

कृषि अधिकारी, जिला शिक्षा अधिकारी, जिला सहकारिता अधिकारी आदि कलेक्टर के सीधे पर्यवेक्षण में कार्य करते हैं, परन्तु कुछ राज्यों में वे जिला परिषद् के साथ काम करते हैं। जिले को उप-मंडल में विभाजित किया गया है। प्रत्येक उप-मंडल का प्रमुख उप-मंडल अधिकारी होता है। कुछ राज्यों में, उन्हें राजस्व मंडल अधिकारी कहा जाता है। संयुक्त कलेक्टरों और उप-मंडल अधिकारियों को कलेक्टर मार्गदर्शन एवं नेतृत्व प्रदान करता है। ताल्लुक और खंड स्तर पर, तहसीलदार और खंड विकास अधिकारी क्रमशः राजस्व और विकास कार्यों को देखते हैं। उनका लोगों से नियमित रूप से संपर्क बना रहता है, और वास्तव में सभी सरकारी कार्यक्रमों के निष्पादनकर्ता वे ही हैं। विषय से संबंधित मामलों के कई विशेषज्ञ खंड स्तर पर कार्य करते हैं। वे विशिष्ट कार्यक्रमों को शुरू करते हैं, तथा उनका कार्यान्वयन करते हैं। कलेक्टर दौरों, निरीक्षणों और समीक्षा बैठकों के माध्यम से क्षेत्र के अधिकारियों पर नियंत्रण रखता है। इन तकनीकों से, वह कार्यक्रम के कार्यान्वयन की निगरानी करता है, और क्षेत्र के अधिकारियों का मार्गदर्शन करता है। उसके निरीक्षणों और समीक्षाओं से न केवल कलेक्टर को प्रत्यक्ष जानकारी मिलती है, बल्कि क्षेत्र अधिकारियों को अपनी शंकाओं के समाधान का अवसर भी मिलता है और कलेक्टर से नीतियों और प्राथमिकताओं की जानकारी भी मिलती है। उसके दौरों के समय, लोग पेयजल, सिंचाई के लिए पानी, खराब सड़कों, खराब आवास स्थिति, अनिवार्य वस्तुओं की कमी, भ्रष्टाचार तथा अधिकारियों की असंवेदनशीलता आदि के बारे में शिकायतें करते हैं। इन निरीक्षणों और दौरों के आधार पर कलेक्टर उन समस्याओं का आकलन कर सकता है. जिनसे जिला प्रभावित हो रहा है और वह उन्हें दूर करने की पहल कर सकता है। इससे कलेक्टर को प्रशासनिक प्रणाली से व्यक्तित्वगत संपर्क स्थापित करने के अतिरिक्त स्थानीय समस्याओं की स्पष्ट जानकारी भी मिलती है। कलेक्टर का महत्वपूर्ण कार्य, जिले में विभिन्न विभागों के बीच समन्वय स्थापित करना है। वह विकास के लिए उत्प्रेरक के रूप में कार्य करता है। कुछ राज्यों में जिला-स्तर के सभी अधिकारियों को कलेक्टर के नियंत्रणाधीन रखा गया है, परन्तु कुछ राज्यों में उन्हें कलेक्टर के नियंत्रण से

बाहर रखा गया है। जिला में उच्चतम अधिकारी के रूप में, सरकार उससे इन अधिकारियों को अपेक्षित मार्गदर्शन तथा दिशा-निर्देश देने की आशा रखती है।

10.4.5.जिला कलेक्टर के कार्य -निष्पादन में बाधाएं (Obstacles in the performance of the District Collector)

जिला प्रशासन में कलेक्टर एक महत्वपूर्ण अधिकारी बन गया है। नियामक और विकास कार्यों, दोनों में उसकी बहुत महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अपने कार्य-निष्पादन में उसे कई ऐसी समस्याओं और दबावों का सामना करना पड़ता है जो उसके काम में बाधा पैदा करते हैं।

- **बार-बार स्थानांतरण**- कलेक्टरों के कार्यों के उचित निष्पादन में बार-बार होने वाले स्थानांतरण बाधक रहे हैं। उन्हें जिले की समस्याओं से परिचित होने से पहले ही स्थानांतरित कर दिया गया इस प्रकार के बार-बार स्थानांतरण से कलेक्टरों पर प्रतिकूल प्रभाव तो होता ही है, इसके अलावा इससे जिला विकास प्रशासन भी प्रतिकूल रूप से प्रभावित होगा।
- **राजनीतिक हस्तक्षेप और दबाव**- राजनीतिक हस्तक्षेप और दबाव भी कलेक्टर के कार्य में बाधा उत्पन्न करते हैं। जिला प्रशासन पर इस प्रकार के दबाव आम तौर पर सरकार द्वारा अपने समर्थकों की सहायता से होते हैं। ऐसे मामलों में, उन्हें कठिन परिस्थिति का सामना करना पड़ता है। यदि वे अनुरोध को स्वीकार कर लेते हैं तो उन पर पक्षपात का आरोप लगाया जाता है. और यदि वे दबाव का प्रतिरोध करते हैं तो उन पर जनता के प्रतिनिधियों के अनुरोध के प्रति असंवेदनशील का आरोप लगाया जाता है। बहुधा दबावों के प्रतिरोध को राजनीतिक रंग दिया जाता इसका प्रतिकूल प्रभाव कार्य-निष्पादन पर भी पड़ता है।
- **बढ़ता हुआ कार्यभार**-, कलेक्टर के कार्य में बहुधा जिले में मंत्रियों जैसे महत्वपूर्ण व्यक्तियों के दौरों से भी बाधा पड़ती है। नयाचार (प्रोटोकॉल) की यह अपेक्षा है कि कलेक्टर स्वयं अगवानी करे और दौरे पर आए अति-महत्वपूर्ण व्यक्ति से चर्चा के लिए उपलब्ध रहे। इस प्रकार नयाचार ड्यूटी एक और क्षेत्र है, जो कुछ हद तक

कलेक्टर के कार्य को प्रभावित करता है। बहुधा यह शिकायत की जाती है कि कलेक्टर के पास बहुत अधिक कार्य है।

- **संकट की स्थितियाँ**- संकट की स्थिति से निपटना कलेक्टर का एक और महत्वपूर्ण तथा आवश्यक कार्य है। संकट की स्थिति में साम्प्रदायिक दंगे, बाढ़, डकैती, आतंकवाद, दुर्घटनाएँ और क्षेत्रीय दंगे शामिल हैं। इस प्रकार की संकट की स्थितियाँ अचानक उत्पन्न होती हैं और कलेक्टर का तत्काल हस्तक्षेप अपेक्षित होता है। इससे उसके सामान्य कार्यों पर भी प्रभाव पड़ता है, और तत्काल आपात विकास कार्यों की उपेक्षा है जिसका तत्काल ही प्रभाव पड़ता है।
- **व्यक्तिगत उन्मुखीकरण**- कलेक्टर जो विकास में परिवर्तन के लिए प्रतिबद्ध है, अपने क्षेत्र और कार्य की प्राथमिकता स्वयं ही चुन लेता है; और उसी पर अधिक ध्यान देता है। कुछ अधिकारी कमजोर वर्गों के कल्याण पर अधिक ध्यान देते हैं; कुछ स्वास्थ्य संबंधी कार्यों पर, और अन्य स्वास्थ्य संबंधी गतिविधियों पर ध्यान देते हैं। कुछ कलेक्टर विशेष कार्यक्रमों और अपनी इच्छा के अनुरूप गतिविधियों पर अधिक ध्यान केन्द्रित करते हैं। इस प्रकार, कई शेष कार्यों को कम महत्व दिया जाता है। इससे साधारणतः उनकी भूमिका और कार्य-निष्पादन भी सीमित हो जाता है।
- **पुलिस के साथ तनावपूर्ण संबंध**- जिले में कानून और व्यवस्था की स्थिति बनाए रखना कलेक्टर की जिम्मेदारी है।परन्तु पुलिस अधीक्षक जो पुलिस बल का प्रमुख है, जिले में कलेक्टर के समग्र पर्यवेक्षण के अधीन इस कार्य को करता है। बहुधा लोग, पुलिस के पक्षपातपूर्ण व्यवहार और उनकी असफलताओं की शिकायत लेकर कलेक्टर के पास आते हैं। कार्यकारी से न्यायिक कार्य अलग होने के फलस्वरूप, कलेक्टर की सम्बद्धता अप्रत्यक्ष और न्यूनतम है। पुलिस के साथ कलेक्टर के संबंध सदैव ही बहुत ही नाजुक और संवेदनशील रहे हैं। पुलिस ने कानून और व्यवस्था बनाए रखने में कलेक्टर के नियंत्रण पर अप्रसन्नता दिखाई है। इससे साधारणतः उनकी भूमिका और कार्य-निष्पादन भी सीमित हो जाता है।

10.5. स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

(अ).नागरिक प्रशासन और 'भू राजस्व की वसूली' के लिए गठित 'जिलाधिकारी' का पद का

गठन कब और किसके द्वारा किया गया था?

(आ). 73वां संविधान संशोधन किस विषय से संबंधित है।

(इ).जिला प्रशासन का मुखिया किसे कहा जाता है ?

(ई). 73वां और 74वां संशोधन कब किया गया?

(उ). कई जिलों को मिलाकर बनाए मंडल (Division) का मुखिया कौन होता है ?

10.6.सारांश (Summary)

जिला प्रशासन किसी जिले के समुचित कामकाज और विकास के लिए जिम्मेदार प्रमुख तंत्र है। यह लोक प्रशासन और शासन का एक महत्वपूर्ण पहलू है , जो स्थानीय सरकार और राज्य के बीच एक संयोजक सेतु के रूप में काम करता है। जिला प्रशासन राज्य और केंद्र सरकारों द्वारा तैयार की गई नीतियों और योजनाओं को जमीनी स्तर पर लागू करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

देश के दैनिक प्रशासन का केन्द्र जिला कलक्टर होता है, जिसे कुछ राज्यों में जिला मजिस्ट्रेट अथवा उपायुक्त भी कहा जाता है। यही अधिकारी जिले के प्रशासनिक संगठन का मुखिया होता है। भारत देश विभिन्न आकार के जिलों में बंटा हुआ है, और इनमें से प्रत्येक का मुखिया एक जिला कलक्टर होता है। कुछ राज्यों में कई जिलों को मिलाकर मंडल (Division) बनाए गए हैं, जिनका मुखिया मंडल आयुक्त (Divisional Commissioner) होता है। राज्य के प्रशासनिक तंत्र का मुखिया मुख्य सचिव (Chief Secretary) होता है। उसके अतिरिक्त राज्य के मुख्यालय में अनेक सचिव होते हैं जो विशिष्ट कार्यों के लिए विभिन्न विभागों के मुखिया होते हैं, और ये मुख्य

सचिव की निगरानी तथा समन्वय के अधीन काम करते हैं। राज्य सरकार के स्तर पर प्राकृतिक आपदाओं की जिम्मेदारी आम तौर पर राजस्व विभाग अथवा राहत विभाग की होती है। इस विभाग का मुख्य अधिकारी राज्य राहत आयुक्त होता है जो आमतौर पर सचिव स्तर का एक वरिष्ठ अधिकारी होता है। राज्य मुख्यालयों में महत्वपूर्ण रणनीतिक फैसले तो मुख्यमंत्री के नेतृत्व में राज्य का मंत्रिमंडल करता है, जबकि नीतिगत मामलों तथा वित्तीय अधिकारों का पालन जैसे ऐसे तमाम दैनिक निर्णय संबंधित विभाग का सचिव करता है जिनकी जिम्मेदारी मंडल आयुक्तों अथवा कलक्टरों को नहीं सौंपी गई होती है। जिला स्तर पर आपदा न्यूनीकरण के लिए राहत प्रदान करने अथवा आकस्मिकता योजनाओं को लागू करने के वास्तविक दैनिक कार्यों की जिम्मेदारी जिला कलक्टर की होती है। जिला कलक्टर को ही जिला स्तर के सभी विभागों के कर्मचारियों पर निगरानी तथा समन्वय के अधिकार प्राप्त होते हैं। आपदा न्यूनीकरण अथवा राहत के लिए वास्तविक कार्रवाइयों के दौरान कलक्टर के अधिकार काफी बढ़ा दिए जाते हैं। इसके लिए आमतौर पर संबंधित विषय में मौजूद निर्देश अथवा आदेश से काम चल जाता है, अन्यथा जरूरत पड़ने पर विशेष सरकारी आदेश भी जारी कर दिए जाते हैं। कभी-कभी संबंधित राज्य की प्रशासनिक संस्कृति कलक्टर को यह छूट दे देती है कि वह आपात स्थितियों में उच्च अधिकारों का प्रयोग करें। हालांकि यह छूट अनौपचारिक होती है और बाद में इन निर्णयों की पुष्टि सक्षम अधिकारी करता है।

10.7. सूचक शब्द (Key Words)

- **अपीलीय क्षेत्राधिकार :** निचले न्यायालयों के निर्णय के विरुद्ध अपीलों पर सुनवाई करने और निर्णय करने का प्राधिकार।
- **उत्प्रेरक :**वह व्यक्ति जो प्रणाली में आवश्यक परिवर्तन तेज करने के लिए उत्तरदायी होता है। :

- **उपनाम :** किसी व्यक्ति या वस्तु के गुणों को व्यक्त करने वाला या कुछ आदर्शों को अभिव्यक्त करने वाला विवरणात्मक शब्द या वाक्यांश। इसका प्रयोग बहुधा किसी व्यक्ति या वस्तु के नाम के स्थान पर नामित किया जाता है।
- **नयाचार :** नयाचार(Protocol)-अन्तरराष्ट्रीय राजनीति में, राज्य तथा राजनय के कार्यकलापों से सम्बन्धित शिष्टाचार को नयाचार कहते हैं। उन अन्तरराष्ट्रीय समझौतों को भी प्रोटोकॉल कहते हैं जो किसी संधि में कुछ परिवर्तम या परिवर्धन करता है।
- **आयुक्त:**एक आयुक्त सिद्धांत रूप में, एक आयोग का सदस्य या एक व्यक्ति है जिसे एक कमीशन दिया गया है ।

10.8-.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

- जिला प्रशासन से आप क्या समझते हो इसके कार्यों का वर्णन कीजिए।
- कलेक्टर के कार्यों का वर्णन कीजिए।
- जिला प्रशासन कलेक्टर की भूमिका वर्णन कीजिए।
- जिला कलेक्टर के कार्य निष्पादन में आने वाली बाधाओं का वर्णन करें।

10.9.उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

(अ). सन 1772 में गव्हर्नर जनरल लोर्ड वॉरेन हेस्टिंग द्वारा

(आ).पंचायती राज से

(इ).जिला कलेक्टर या जिला मजिस्ट्रेट

(ई). 1992

(उ). मंडल आयुक्त (Divisional Commissioner) होता है।

10.10. सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

- तुलनात्मक राजनीति की रूपरेखा- ओम प्रकाश गाबा ,मयूर पेपर बैक्स , नोएडा ।
- तुलनात्मक शासन एवं राजनीति - डॉ . बीरकेश्वर प्रसाद सिंह ,ज्ञानदा प्रकाशन (पी .एण्ड डी .) 24 , दरियागंज , अंसारी रोड , दिल्ली ।
- तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ - सी.बी . गेना , विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि. अंसारी रोड , दिल्ली ।
- तुलनात्मक राजनीति - जे.सी . जौहरी , स्टर्लिंग पब्लिशर्ज प्रा.लि. , दिल्ली ।
- ब्रिटिश संविधान - महादेव प्रसाद शर्मा, किताब महल इलाहाबाद, दिल्ली ।

NOTES

NOTES

NOTES